Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ललिता-सहस्रनाम

(सौभाग्योदय-टीका)

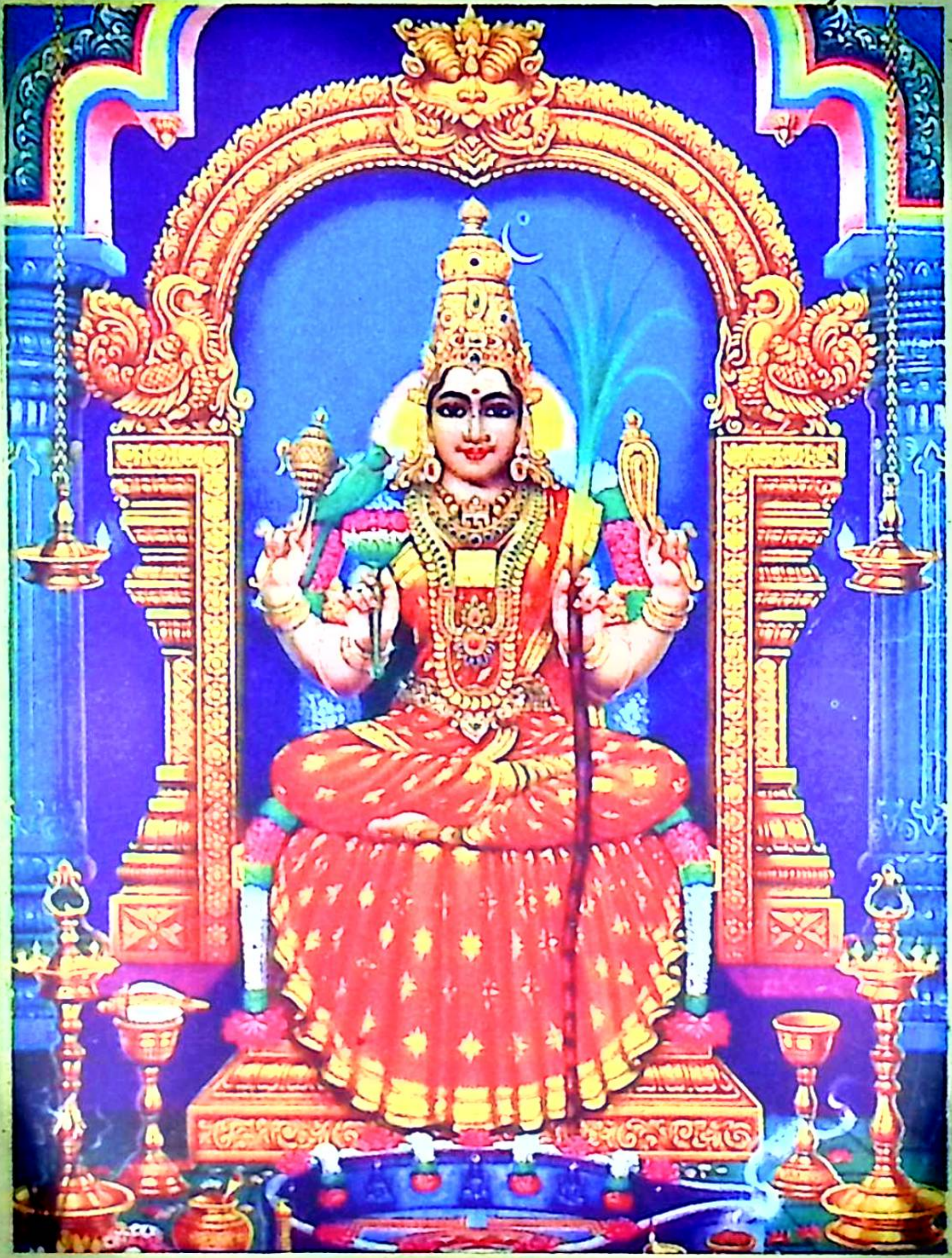

पं० हरिहर शास्त्री चतुर्वेदी

श्री विद्या भवन
कुआ गली, मथुरा.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

कैलाशवासी आचार्य श्री १०८ बदरीदत्त जी महाराज

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ललिता-सहस्रनाम

(सौभाग्योदय-टीका)

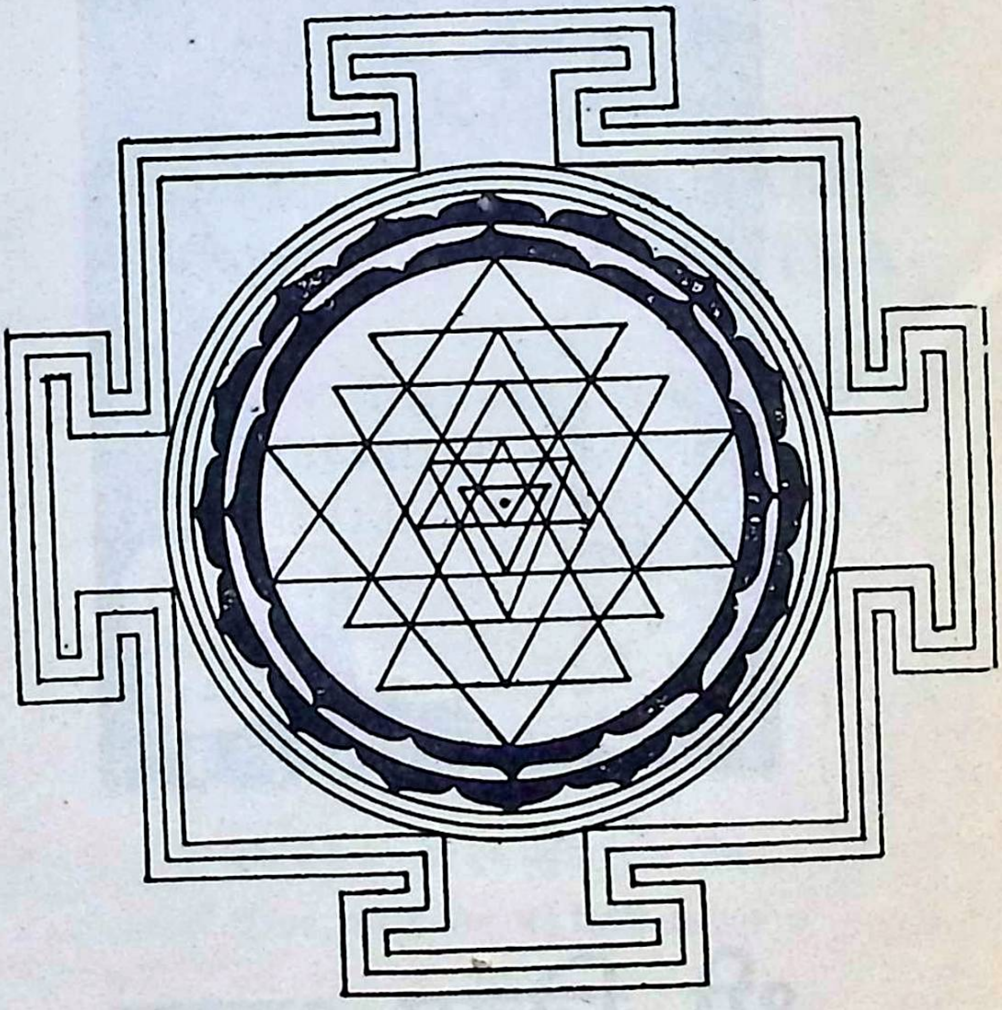

पं० हरिहर शास्त्री चतुर्वेदी

श्री विद्या भवन
कुआ गली, मथुरा.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सम्पादक
पं० हरिहर शास्त्री चतुर्वेदी

श्री विद्या भवन
कुआँ गली
मथुरा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

आशीर्वचन-अभिषेक

दक्षिणाम्नायश्रीशारदाशृंगेरीपीठाधीश्वरजगद्गुरुशंकराचार्य
श्री श्री भारतीतीर्थ महास्वामीजी महाराज

भूमिका :

पद्मश्री डॉ० विद्यानिवास मिश्र

पूर्व प्रधानसंपादक : नवभारत टाइम्स
पूर्व कुलपति : संपूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी
एवं काशी विद्यापीठ, वाराणसी

LALITA SAHASRANAMA SAUBHAGYODAYA TIKA

BY

HARIHAR SHASTRI CHATURVEDI
SHRIVIDYA BHAVANA
KUA GALI, MATHURA. (U.P.)

प्रकाशन सहायक

श्री राम सरन जिन्दल

ग्रीन वैली फाइनेंस एंड लीजिंग कं० (लि०)
ए-32, कनाट प्लेस, नई दिल्ली-110001

एवं

दुर्गा आफसेट प्रिन्टर्स
466 बी, अग्रवाल गली,
महावीर ब्लाक, भोला नाथ नगर,
शाहदरा, दिल्ली-110032
फोन : 2211415, 2425738

प्रथम संस्करण जुलाई 1995

मूल्य : दो सौ पचास रुपये

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

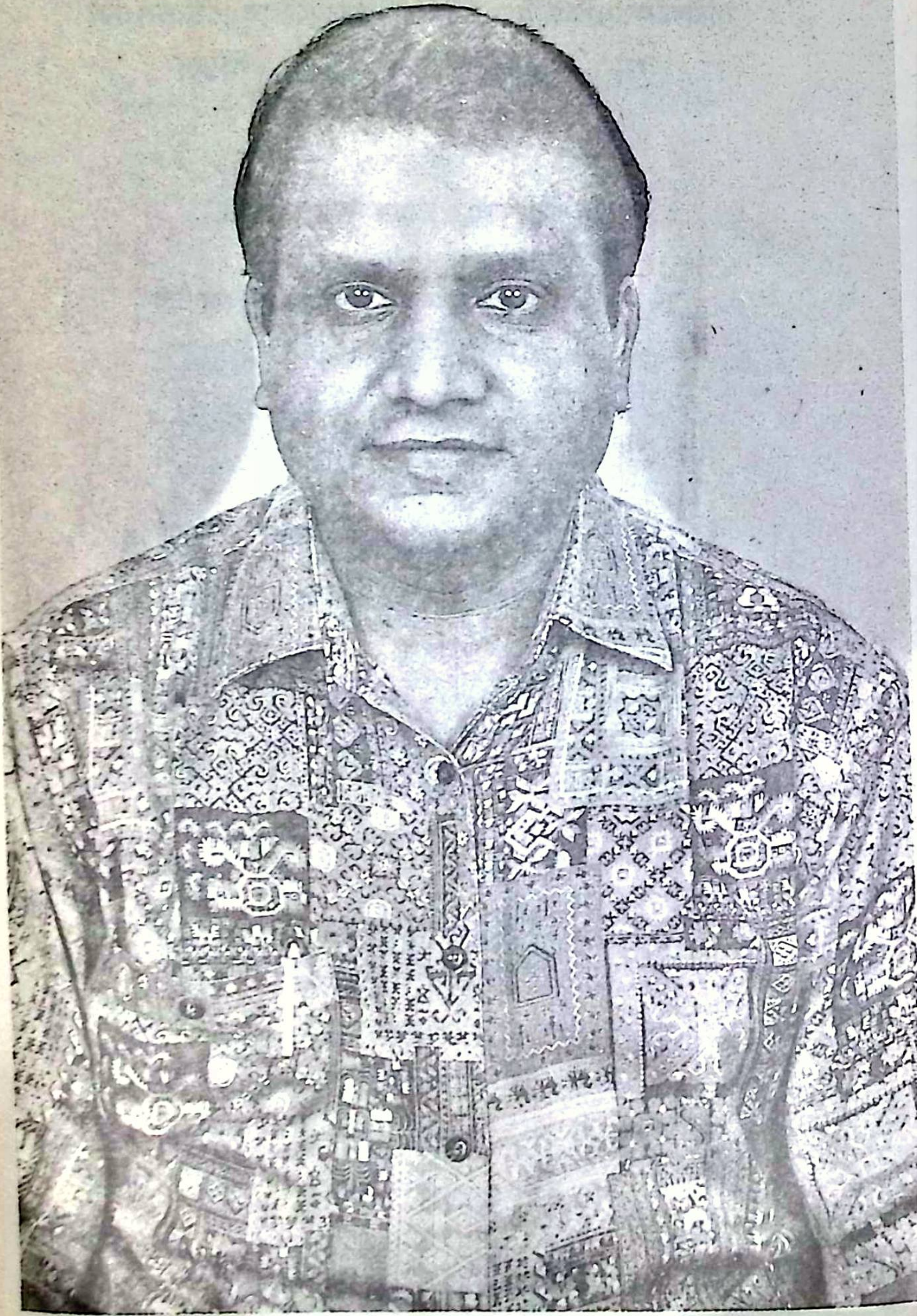

प्रकाशन सहायक

श्री राम सरन जिन्दल

ग्रीन वैली फाइनेंस एंड लीजिंग कं० (लि०)

ए-32, कनाट प्लेस, नई दिल्ली-110001

फोन : 3314480, 3524480

CC0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

श्री श्री जगद्गुरू शङ्कराचार्य महासंस्थानम्

दक्षिणाम्नाय श्री शारदापीठम्, शृङ्गेरी

PRIVATE SECRETARY

To His Holiness Sri Jagadguru
Shankaracharya Dakshinamnaya
SRI SHARADA PEETHAM
SRINGERI-577139 (Karnataka)

Phone : 62234
Ref No. :
Camp : नई दिल्ली
Date : 1-8-1994

पं. हरिहर चतुर्वेदी,

श्री विद्या भवन,

कुआ गली

मथुरा (उत्तर प्रदेश)

प्रिय महोदय,

दक्षिणाम्नाय शृंगेरी शारदा पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य श्री श्रीभारतीतीर्थ महास्वामी जी ने आपके द्वारा संपादित ललितासहस्रनामावलि टीका के कतिपय अंशों को देखा है। वे आपके इस प्रयास पर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हैं और इस कार्य के लिए आपको अपना आशीर्वाद प्रदान करते हैं। महाराज श्री यह आशा करते हैं कि हिन्दी अर्थ के साथ यह 'सहस्रनामावलि' अधिक से अधिक लोगों में भक्ति-भावना जागृत करेगी।

इस पत्र के साथ माँ शारदाम्बा का कुंकुम प्रसाद और अक्षत भिजवाया जा रहा है ।

महाराज जी की आज्ञा से -

श्रीपादराव

(श्रीपादराव)

सचिव

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

-भूमिका-

श्रीविद्या की उपासना से संबंधित शास्त्रों में श्रीललितासहस्रनाम का विशेष महत्त्व है। इस ग्रन्थ पर वैसे तो कई टीका हैं, पर आगमशास्त्र के मूर्धन्य-मनीषी भास्करराय की टीका "सौभाग्य-भास्कर" सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। प्रस्तुत कृति उसी के आधार पर लिखी गयी है। वैसे तो सौभाग्य-भास्कर टीका के हिन्दी और अंग्रेजी अनुवाद पहले भी छप चुके हैं पर प्रस्तुत कृति इस अर्थ में विशिष्ट है कि इसकी भाषा प्रवाहपूर्ण है और सुलझी हुई है। इसके साथ ही यह अत्यंत प्रौढ है। इसका कारण संभवतः यह है कि आदरणीय श्री हरिहर चतुर्वेदी श्रीविद्या के अनन्य उपासक हैं और उन्होंने बड़े योग्य और सिद्ध पुरुष (श्री बदरीदत्त जी महाराज) से दीक्षा ली हुई है, इसलिये उन्होंने ललितासहस्रनाम के भाव को अत्यंत सहज भाव से ग्रहण किया है।

श्रीविद्या की उपासना के सूत्र श्रुतियों में भी मिलते हैं। यह उपासना निगम और आगम-सम्मत उपासना है। इस उपासना का पुररुज्जीवन श्रीमदादिशंकराचार्य ने किया और दो महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे- प्रपंचसार और सौंदर्यलहरी। इन दोनों ग्रन्थों में उन्होंने श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी के स्वरूप का और स्वरूप को ग्रहण करने की विधि का जो निरूपण किया, वही इस उपासना के नये क्रम की पीठिका बना। यों तो परशुराम कल्पसूत्र में उपासना का संक्षिप्त क्रम विद्यमान था, परंतु श्रीमद् आदि शंकराचार्य के द्वारा शंकर-मठों में इस उपासना का प्रसार हुआ, उसी के परिणामस्वरूप 'श्रीविद्यारण्य' ने 'श्री विद्यार्णव' नामक महान् ग्रन्थ लिखा। श्री भास्कर राय इस उपासना की और अधिक गहराई में गये।

वैसे तो श्रीललिता सहस्रनाम श्रीविद्या की उपासना का लगभग प्रारंभिक सोपान है पर इन सहस्रनामों में ललिता महात्रिपुरसुंदरी के पौराणिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक, अर्चनात्मक-. सभी पक्ष समाहित हो गये हैं। ब्रह्मांडपुराण के अंतर्गत ललितोपाख्यान आया है और वहां भंडासुरवध को महात्रिपुरसुंदरी के नव आविर्भाव का एक प्रयोजन बताया गया है। शिव के कोप से काम का शरीर भस्म हो गया, उसी भस्म का रूपांतर है- भंडासुर। भंडासुर एक प्रकार से महाशिव का दंभ है और वह दंभ इसीलिये इतना उग्र और विशाल है कि समस्त देवताओं को उन्मथित कर देता है। इस दंभ को ही निरस्त करने के लिये देवताओं की प्रार्थना से आदिशक्ति का एक ऐसा रूप आता है, जो अपने को कामेश्वरी और कामेश्वर रूप में अभिव्यक्त करता है और शिवशक्ति के सामंजस्य से ही सभी पाखंडों, सभी दंभों का विनाश होता है।

वस्तुतः अपने विराट सामंजस्य-पूर्ण 'स्व' की उपासना ही ललिता महात्रिपुर-सुंदरी की उपासना है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

ललितासहस्रनाम का पाठ करने से उनके विराट और व्यापक रूप का एक सुंदर चित्र सामने आ जाता है, इसलिये इस नामावली का निरंतर अभ्यास करने से उपासक के मन में धीरे-धीरे सहज रूप में एक सात्विक भाव का उदय होता है और जो कुछ सुंदर है, जो कुछ सहज है, जो कुछ सर्वप्रीतिकर है, उस सबमें जगदंबा की झलक दिखाई देने लगती है। अर्थवाद के रूप में सिद्धियों की बात भी 'ललितासहस्रनाम' की पीठिका में कही गयी है पर असली सिद्धि है- चित्तवृत्ति का इन नामों में रमना, ऐसा रमना कि इन नामों की आवृत्ति मन में अपने आप होने लगे और उससे आत्मिक सुख ने। आज के युग में आत्मिक सुख अत्यंत विरल है।

'श्रीविद्या' की उपासना का क्रम अत्यंत सहज है और अत्यंत कठिन भी है। यदि विश्वसृष्टि को अपने भीतर अच्छी तरह संक्रांत देखना है, तो संपूर्ण उपासना-विधि का अभ्यास करना चाहिये। 'ललितासहस्रनाम' का पारायण ऐसे अभ्यास के लिये भूमि तैयार करता है। नाम और अर्थ का सामंजस्य करते हुए जब पाठ किया जाता है तो उसका अपने आप विशेष फल होता है और वह शीघ्र मिलता है और इस दृष्टि से साधकों के लिये प्रस्तुत पुस्तक उपयोगी और महत्त्वपूर्ण है।

श्री चतुर्वेदी जी ने श्रीविद्या की उपासना पर विस्तृत प्रकाश डालते हुए एक पुस्तक अलग से लिखी है- 'श्रीविद्या कल्पलता'। वह पुस्तक जब प्रकाशित होगी, तो इनके वैदुष्य का विशेष परिचय मिलेगा। इस ग्रन्थ से उनके सहज संस्कारी उपासक रूप का परिचय मिलता है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि उपासकों के लिये और श्रीविद्या के रहस्य के जिज्ञासुओं के लिये उनका ग्रन्थ अत्यंत प्रेरक होगा।

पद्मश्री डॉ० विद्यानिवासमिश्र
पूर्व प्रधान संपादक : नवभारत टाइम्स
पूर्व कुलपति : संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय
एवं काशी विद्यापीठ, वाराणसी

१३ जुलाई, १९९५
२०७/७, परमार्थ मंदिर, कृष्णानगर
सफदरजंग एन्क्लेव
नयी दिल्ली.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

सदाशिवादिमारभ्य भैरवाचार्यमध्यमाम्।
Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
अस्मदाचार्य-पर्यन्तं वन्दे गुरुपरम्पराम्।।

श्रीमाथुराणां गुरुतां दधाच्छ्रीदामोदरोऽभूद्-गुणराशिधाम।
विकासयन् यो बुध-कैरवाणि स्वशीलचन्द्रेण भुवि व्यतिष्ठत्।।

अरिमथनौ बाहू इव तस्य तनूजावुभावास्ताम्।
बदरीदत्तः प्रथमःपूर्णानन्दोऽपरः श्रीमान्

स जयति विशालधिषणो
माथुर कुलकमल वासराधीशः।
गुणिगण चकोर चन्द्रो
बदरीदत्तो गुरुः श्रीमान्।।

प्राक्कथन

"ललिता सहस्रनाम" भगवती राजराजेश्वरी की वाङ्मयी-प्रतिमा है। जो यन्त्रराज है, जो श्रीविद्या है, जो राजराजेश्वरी ललिता है, वही ललिता-सहस्रनाम है। नाम और नामी भिन्न नहीं हैं, इसलिये "ललिता सहस्रनाम" जगदंबा का साक्षात् वाग्विग्रह है, और इस वाग्विग्रह का आश्रय ग्रहण करना, इस की छाया प्राप्त करना परम सौभाग्य की बात है। "सहस्र" शब्द मात्र एक हजार की संख्या का वाचक नहीं है, सहस्र शब्द यहां संपूर्ण तथा अनंत का वाचक है और अनेक प्रकार से संधिविच्छेद करके, लोम-विलोम करके, पदान्वय करके इस स्तोत्र के नामों का कितना विस्तार किया जा सकता है? जैसे भगवती विश्वविग्रहा हैं, ठीक उसी प्रकार ललिता सहस्रनाम सृष्टि की संपूर्ण व्याख्या है- वाक्, प्रकाश, तैजस, उपासना-तत्व, रस-तत्व, कुंडलिनी-तत्व, मन्त्र-तत्व, यन्त्रराज, आत्मविद्या, व्यष्टि और समष्टि, पंच-महाभूत, प्रकृति, शक्तिसिद्धान्त, सौन्दर्यशास्त्र- ऐसा कौन सा विषय है, जो बीज रूप से ललिता सहस्रनाम में न हो? यह साधारण स्तोत्र-मात्र नहीं है।

जब ललिता-सहस्रनाम का प्रसंग उपस्थित हुआ, उस समय कोटि-कोटि ब्रह्माणी, कोटि-कोटि लक्ष्मी-नारायण तथा कोटि-कोटि गौरी-शंकर उपस्थित थे। मन्त्रिणी, दण्डिनी आदि असंख्य शक्तियां उपस्थित थीं। दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा मानवौघ आदि सभी आये हुए थे। सभी पर भगवती की कृपादृष्टि पड़ी। भगवती ने वशिनी आदि वाग्देवियों को भी देखा और उन वाग्देवियों के मन में प्रेरणा का संचार हुआ। मन और बुद्धि चकरा गये कि

नाम के महत्व से हमारे धर्मशास्त्र भरे पड़े हैं। तुलसीदास जी ने "राम ते बड़ो राम कर नामा" "भायँ कुभायँ अलख आलस हूं, नाम जपत मंगल दिसि दस हूं।" तथा "कहीं कहां लगि नाम बड़ाई, राम न सकहिं नाम गुन गाई" कहा, तो संत पलटू ने कहा "दीपक बारा नाम का महल भया उजियारा, महल भया उजियार नाम का [illegible]।"

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

इस "सम्पूर्ण'' को शब्द के द्वारा कैसे व्यक्त किया जा सकता है? क्या ऐसे शब्द हैं, जो "सम्पूर्ण'' को व्यक्त कर सकें? प्रश्न एक है तथा उत्तर दो हैं- पहला उत्तर है "नहीं'' तथा दूसरा उत्तर है "हां''। 'अस्ति-नास्ति के बीच बिंदु वह।' अस्ति में तो अस्ति है ही, नास्ति में भी अस्ति है। जिसे देखा और सुना है, वह भी अस्ति है तथा जिसे देखा-सुना नहीं है, वह भी अस्ति है। भगवती की कृपा दृष्टि वशिनी वाग्देवताओं के अन्तर में स्फुरित हो रही है, वह कृपा-दृष्टि ही ललिता सहस्रनाम रूपी वाग्विग्रह की रचना-शक्ति है। बिना उस शक्ति के सहस्रनाम की क्या कहें, एक नाम भी मुख से नहीं निकल सकता।

"शिव:शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्त: प्रभावितुं
न चेदेवं देवो न खलु कुशल: स्पंदितुमपि।।''-सौंदर्य लहरी

इसलिये ललिता ललिता-सहस्रनाम जहां भगवती का निज रूप है, वहां सहस्रनाम की रचनाशक्ति भी भगवती की करुणा शक्ति है।

अब वशिनी वाग्देवियों के मन में प्रश्न आया कि भगवती को सबसे पहले किस नाम से संबोधन करें? ऐसा कौन सा संबोधन है, जो भगवती को सबसे अधिक प्रिय है?

बहुत सोचा, बहुत चिंतन किया और अंत में वाग्देवियां इस निष्कर्ष पर पहुंचीं कि माँ के मन में एक ही तो लालसा है कि उसका बालक उसे "मैया'' कर कर के टेर लगावे। बालक की टेर से माँ का मनोरंजन होता है। माँ यशोदा अभिलाषा करती है-"कब मेरौ लाल घुटुरुवन रेंगै, कब जननी कहि मोहि ररै।'' ऐसा कौन सा दिन होगा जब मेरा लाला घुटनों चलेगा और मुझसे मैया कहकर रार करेगा? और जब एक दिन नंदनंदन ने तोतली वाणी से "मैया'' कहा, तो यशोदा अपने आंगन में आयी हुई गोपियों से आल्हादित होकर कह रही है-

"कहन लागे मोहन मैया-मैया''

'मेरी सखी हो, अब मेरा लाल मुझसे 'मैया-मैया' कहने लगा है।' यह मैया शब्द माँ को कितना प्रिय है? यह प्यारा शब्द सुनते-सुनते माँ कभी अघाती नहीं है। लोकगीत इस बात की गवाही देते हैं कि यह "मैया'' संबोधन सुनकर जगदंबा का "दूध जोर करि आयौ'' अर्थात् उसकी छातियों में वात्सल्य उमंगने लगा। यह वात्सल्य ही तो है जो छातियों में अमृत बन जाता है। इसलिये वशिनी वाग्देवियों ने ललिता सहस्रनाम में भगवती को सबसे पहले "माँ'' कह कर पुकारा।

"माँ वर्गा घन छावां बूटा सानूं नजर न आये
जिस तों लेके छां उधारी रब ने सुरग बनाये।''
"बाकी दुनियां दे सब बूटे जड़ सुक्यां मुरझावन
ऐपर फुल्लां दे मुरझायाँ ए बूटा सुक जाए।।''

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

माँ ऐसी कल्पलता है, ऐसा कल्पवृक्ष है कि उस जैसा वृक्ष विश्व में अन्यत्र नहीं है क्योंकि विधाता ने जो स्वर्ग इत्यादि रचे हैं, उनको रचने के लिये सुख की पूंजी आवश्यक थी। इतना सुख कहां था संसार में? विधाता ने माँ रूपी कल्पवृक्ष की छाया उधार ली और उस छाया से स्वर्ग की रचना की। संसार के सभी वृक्ष जड़ सूखने पर मुरझा जाते हैं, पर माँ रूपी कल्पवृक्ष अद्‌भुत है, क्योंकि यह अपने पुत्र रूप फूल को मुरझाया देखकर सूख जाता है। एक फिल्मी गीत ने बहुत अच्छा कहा है-"ओ माँ, तेरी सूरत से अलग भगवान की सूरत क्या होगी?'' माँ की जो कल्पलता है, वह सब जगदंबा की करुणा की किरण मात्र है। ऐसी करुणामयी भगवती राजराजेश्वरी हैं। इसलिये ललिता-सहस्रनाम में सबसे पहले "माँ'' संबोधन किया गया।

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

महाभारत में भीष्म कहते हैं कि- माता मनुष्यों के शरीर रूपी अग्नि को प्रकट करने वाली अरणी है। संसार के समस्त आर्त प्राणियों को सुख और सान्त्वना प्रदान करने वाली माता ही है। जब तक माता जीवित रहती है, मनुष्य अपने को सनाथ समझता है और उसके न रहने पर वह अनाथ हो जाता है। माता के रहते मनुष्य को कभी चिन्ता नहीं होती है, बुढ़ापा उसे अपनी ओर नहीं खींचता है। जो अपनी माँ को पुकारता हुआ घर जाता है, वह निर्धन होने पर भी मानों माता अन्नपूर्णा के पास चला जाता है। पुत्र और पौत्रों से संपन्न होने पर भी जो अपनी माता के आश्रय में रहता है, वह सौ वर्ष की अवस्था के बाद भी उसके पास दो वर्ष के बच्चे के समान आचरण करता है। पुत्र असमर्थ हो या समर्थ, दुर्बल हो या हृष्टपुष्ट, माता उसका पालन करती ही है। माता के समान दूसरी कोई छाया नहीं है। माता के तुल्य दूसरा सहारा नहीं है, माता के सदृश कोई रक्षक नहीं है, माँ के समान कोई दूसरी प्रिय वस्तु नहीं है। माँ गोद में ले लेती है तो पूर्ण तृप्ति और पूर्ण अभय का अनुभव होता है। सम्राटों के सिंहासन भी माँ की गोद से नीचे हैं।

जहाँ माँ की महिमा ऐसी है तब भगवती तो पराम्बा हैं, वे श्री माता हैं। श्री के संबंध में शास्त्रों के वचन हैं-

"सर्वैश्वर्य गुणोपेता श्रीर्ज्ञेय: विश्व रूपिणी।''

श्रितास्यन्य: सर्वै श्रयसि रमणं संश्रित गिर:।
श्रणोपि प्रेयांसं श्रित जन वच: श्रावयसि च।
श्रणास्ये तद्दोषांजननि निखिलान् सर्व ज़गती।
गुणै: श्रीणासि त्वं तदिह भवती श्रीरिति विदु:।

माता देहारणि: पुंसां सर्वस्यार्तस्य निर्वृति:, मातृलाभे सनाथत्वं अनाथत्वं विपर्यये। न च शोचति नाप्येनं स्थाविर्यमपकर्षति:, श्रिया हीनोऽपि यो गेहमम्बेति प्रतिपद्यते। पुत्रपौत्रापपन्नोऽपि जननीं य: समाश्रित:, अपि वर्षशतस्यान्ते स द्विहायन वच्चरेत्। समर्थ वासमर्थ वा कृशं वाप्यकृशं तथा, रक्षत्येव सुतं माता नान्य: पोष्टा विधानत:। तदा स वृद्धो भवति दु:खित:, तदा शून्यं जगत् तस्य यदा मात्रा वियुज्यते। नास्ति मातृसमा छाया नास्ति मातृसमा गति:, नास्ति मातृसमं त्राणं नास्ति मातृ समा प्रिया। -शांतिपर्व २६६/२६-३१

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation, Delhi and eGangotri.
जो मां समस्त जीवों के द्वारा सेवित है, जो रमण का आश्रय है, जो आश्रित की वाणी (प्रार्थना) स्वयं सुनती है तथा प्रभु को सुनाती है। जो आश्रितों के संपूर्ण दोषों का विनाश करती है तथा दिव्यगुणों से जगत् का विस्तार करती है- वे श्रीमाता हैं।

हे मां, आप संपूर्ण आपत्तियों का निराकरण करने वाली हैं भक्तों के मन में जो अभिलाषाएं हैं, उन्हें पूर्ण करने वाली आप ही हैं। आप संपूर्ण मंगलों की केन्द्रीभूत हैं। हृदय में जो शुभ-मंगल इच्छाओं का उदय होता है, उसका कारण भी आप ही हैं, इसलिये आप सर्वमंगला हैं। आप प्रणाम करने वाले भक्तों के सौभाग्य का उदय करने वाली-सौभाग्य जननी हैं, जिस प्रकार चंद्रमा को देख कर समुद्र उमंगता है, उसी प्रकार भगवती के नेत्रों को देखकर सौभाग्य का समुद्र उमंगता है। मानसिक और शारीरिक व्याधियों को नष्ट करने के लिये आप वज्र के समान कठोर हैं। हे मां, लोकयात्रा का विधान करने वाली भी आप ही हैं, दुःख को दूर करने के लिये आपके समान कोई दूसरा नहीं है। जो आपकी शरण में है, उन पर कभी विपत्ति नहीं आती। जैसे दिन भर की गर्मी-धूप से परेशान व्यक्ति को चांदनी शीतलता प्रदान करती है, वैसे ही आपकी कृपादृष्टि चांदनी के तुल्य है। संपूर्ण जीवों को चेतना, बुद्धि, निद्रा, क्षुधा, छाया, तृष्णा, शांति, जाति, लज्जा, क्षांति, श्रद्धा, कांति, लक्ष्मी, धृति, वृत्ति, स्मृति, दया, तुष्टि, पुष्टि, भ्रांति, चिति के रूप में आप ही तो हैं-

सर्व देवमयी देवी सर्व देवी-मयं जगत्।
अतोऽहं विश्वरूपां तां नमामि परमेश्वरीम्।

ललिता-सहस्रनाम के संबंध में जगदंबा की प्रेरणा से समय-समय पर जो टिप्पणियां लिखता रहा हूं, उसे जगदंबा की सेवा समझता हूं, जैसे यंत्रराज की अर्चना करना। ये टिप्पणियां जगदंबा का ही प्रसाद है, क्योंकि इनकी प्रेरणा भी मां स्वयं ही थी। जब बालक पट्टी पर किटकिन्ना काढता है तो उसे देख कर मां रीझती है। ये टिप्पणियां भी भगवती का मनोरंजन करने के लिये ही लिखी जा सकी हैं। मां अवश्य इन पर रीझेंगी क्योंकि मां का स्वभाव ही रीझने का है अपने बालक पर।

श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी एवं श्रीकृष्ण भिन्न-भिन्न तत्त्व नहीं है। श्रीकृष्ण श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी का ही पुरुष रूप है-पुंरूपा कृष्ण विग्रहा। श्री गोपाल सुन्दरी का ध्यान इस प्रकार है-

क्षीराम्भोधिस्थ कल्पद्रुमवनविलसद्‌रत्नयुङ् मंडपान्तः
प्रोद्यच्छ्रीपीठ संस्थ कर धृत जलजारीक्षुचापांकुशेषुम्
पाशं वीणां सुवेणुं दधतमवनिमाशोभितं रक्तकान्तिम्
ध्यायेद् गोपालमीशं विधिमुख विबुधैरीड्यमानं समंतात्।।

श्रृणोति, श्रावयति, श्रृणाति, श्रीणाति, श्रीयते, तथा श्रयते इन छः अर्थों में श्रीशब्द का विस्तार है- श्रृणाति निखिलान् दोषान्, श्रीणाति च गुणैर्जगत्। श्रीयते चाखिलैर्नित्यं, श्रयते च परंपदम्।।

CC0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी ही राधा हैं 'अहं च ललिता देवी राधिका या च गीयते।' वृन्दावन के रसिक भक्तों ने श्यामा-श्याम कुंजबिहारी की उपासना के रूप में ललिता त्रिपुरसुन्दरी की ही आराधना की है। इस प्रकार श्रीकृष्ण, श्रीराधा एवं श्री ललिता एक ही तत्त्व हैं।

अन्त में मैं अपनी गुरु-परम्परा को पुन: प्रणाम करता हूं और भगवती से प्रार्थना करता हूं कि इस टीका में अज्ञान, विस्मृति एवं भ्रान्ति के कारण जो अपूर्णतायें रह गयी हैं, उन्हें पूर्ण रूप में ग्रहण करें क्योंकि आप तो सदा पूर्णा हैं, अत:

अज्ञानाद्विस्मृते: भ्रान्त्या यन्नूनमधिकं कृतम्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि।

परम पूज्य जगद्गुरु शंकराचार्य शृंगेरीपीठाधीश्वर श्रीश्री भारतीतीर्थ महास्वामी जी महाराज ने प्रस्तुत कृति को अपने आर्शीवार्द से अभिषिक्त किया है, उन्हें मैं प्रणाम निवेदन करता हूँ। आदरणीय डॉ० विद्यानिवास मिश्र ने अपने व्यस्त जीवन में से समय निकाल कर इस कृति का अवलोकन किया तथा इस पर भूमिका लिखी है, एतदर्थ मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूँ।

मैं श्री कामेश्वर नाथ चतुर्वेदी तथा श्री नित्यानंद महाप्रभुजी को धन्यवाद करना अपना कर्त्तव्य मानता हूं क्योंकि वे मेरे गुरु-परिवार के मुख्य सदस्य एवं वंशज हैं। यहां जो कुछ मैं लिख सका हूं वह गुरु की कृपा ही है। श्री राम सरन जिन्दल के प्रति भी धन्यवाद करना आवश्यक है, जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन का संपूर्ण व्यय करना सहर्ष स्वीकार किया है। दुर्गा ऑफसेट प्रिंटर्स, विश्वास नगर, दिल्ली के श्री सुशील कुमार जी ने इस पुस्तक की नि:शुल्क मुद्रण सेवा की है, अत: वे भी हमारे धन्यवाद के पात्र हैं। इसके अतिरिक्त इस सेवा कार्य में जिन-जिन लोगों ने सहयोग किया है, वे सभी जगदंबा की कृपा के अधिकारी हैं। मां कल्याणमयी हैं।

हरिहर शास्त्री चतुर्वेदी

श्री विद्या भवन
कुआगली, मथुरा।

अतस्त्वामाराध्यां हरिहर विरिञ्चादिभिरपि
प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथमकृतपुण्य: प्रभवति।

हे मां, आप तो विष्णु, शिव और ब्रह्मा आदि के द्वारा आराधना करने योग्य हैं। जिसने पुण्य का संचय नहीं किया, वह भला आपको प्रणाम करने और आपकी स्तुति करने का सौभाग्य कैसे प्राप्त कर सकता है?-सौंदर्यलहरी

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

लेखक परिचय

जगज्जननी, त्रिपुरसुन्दरी भगवती माँ. श्री ललिता ही अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, स्थिति एवं संहार की कर्त्री एवं सच्चिदानन्द स्वरूपा हैं।

भुवनेश्वर्युपनिषद् में माँ श्री ललिता को "भुवनाधीश्वरीतुर्यातीता'' वैसे ही निरूपित किया है जैसे "तुरीयंब्रह्म'' से ब्रह्म को तुरीय निरूपित किया गया है। कूर्मपुराण में भी भगवान वेदव्यास ने-"एकं सर्वगतं सूक्ष्मं कूटस्थमचलं ध्रुवम् योगिनस्तत्प्रपश्यन्ति महादेव्याः परं पदम्।'' कहकर भगवती श्री ललिता को ही ब्रह्म स्वरूप प्रतिपादित किया है। ब्रह्माण्डपुराण में भी-"चितिस्तत्पदलक्ष्यार्था चिदेक रस रूपिणी'' कहकर तत्त्वमसि इस महावाक्य में प्रयुक्त तत्पद का लक्ष्यार्थ भगवती माँ श्री ललिता को ही बताया गया है।

परात्परा त्रिपुरसुन्दरी, श्री ललिताम्बा नारायण की मूल प्रकृति हैं, इन्हीं को श्रीविद्या भी कहा गया है। तभी तो ललितोपाख्यान में पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण को, स्वयं श्रीमाँ ललिता ने "ममैव पौरुषं रूपं गोपिका जनमोहनम्'' कहकर अपना ही पुरुष रूप निरूपित किया है। इसी प्रकार-"कदाचिदाद्या ललिता पुंरूपाकृष्ण विग्रहा'' अन्यत्र भी कहा गया है। इतना ही नहीं स्वयं विष्णु ने भी "भोगे भवानी रूपा सा पुंरूपात्र मदात्मिका'' कह कर उपर्युक्त कथन की पुष्टि की है। इससे स्पष्ट है कि परब्रह्म सदाशिव-स्वरूपा, श्री ललिताम्बा ही सच्चिदानंद रूपा जगदधिष्ठान भूता है, इन्हीं से जगत् की उत्पत्ति, स्थिति एवं इन्हीं में जगल्लय भी होता है। जैसा कि भगवान वेदव्यास ने ब्रह्मसूत्र में "अथातोब्रह्म जिज्ञासा'' कहकर "जन्माद्यस्ययतः'' इस सूत्र से संकेत किया है। भावनोपनिषद् में भी- "सदानन्द पूर्णःस्वात्मेव परदेवता ललिता'' कहकर श्रीललिता को ही ब्रह्मस्वरूपा सिद्ध किया गया है।

त्रिपुरसुन्दरी, भगवती श्री ललिताम्बा ही मनसा वाचा कर्मणा सर्वतोभावेन सर्वाराध्य एवं सदोपास्य हैं। इन्हीं की कृपा से प्राणी अपने सकलाभीष्टों की सिद्धि प्राप्त कर सकता है। इन्हीं की कृपा से मानव, धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष पुरुषार्थ चतुष्टयके सम्पादन में समर्थ होता है। बिना इनकी कृपा के भयनिवृत्ति एवं एकान्त शान्ति को प्राप्त करना दुर्लभ ही नहीं अपितु पूर्णतया असम्भव ही है।

भगवती माँ ललिता की आराधना के साधक यद्यपि अनेक स्तोत्र, स्तव आदि हैं, किन्तु उन सभी में १. त्रिपुरारहस्यम्; २. ललितास्तवरत्नम्; ३. त्रिपुरामहिम्नःस्तोत्रम; ४. ललितासहस्रनाम प्रसिद्ध हैं। "ललितासहस्रनाम'' ग्रन्थ महर्षि वेदव्यास विरचित

CC0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

'ब्रह्माण्डपुराण'' से निःसृत "ललितोपाख्यान'' के अन्तर्गत है। इसके उपदेष्टा परमाचार्य भगवान हयग्रीव हैं तथा गृहीता आचार्य महर्षि अगस्त्य हैं।

जगदाधारभूता जगज्जननी माँ श्री ललिता की कृपा प्राप्ति के लेए यह स्तोत्र सर्वस्तोत्रों में प्रधान स्तोत्र है। क्योंकि इसके द्वारा साधना करने वाला साधक धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष पुरुषार्थ चतुष्टय को भगवती श्रीललिता की कृपा से अनायास ही प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है। यह स्तोत्र लौकिक एवं अलौकिक उभयविध सिद्धियों का साधक है। पाठक इसका पाठ जिस कामना से करता है जगज्जननी श्री ललिता उसकी कामना को पूर्ण करती हैं।

श्री ललिता सहस्रनाम स्तोत्र का अपना विशिष्ट महत्व है इसमें लेशमात्र भी संदेह नहीं है, जैसा कि इसकी फलश्रुति में- "चरमे जन्मनि यथा श्री विद्योपासको भवेत्। नाम सहस्रपाठस्तु तथा चरमे जन्मनि।'' कहा गया है।

यहाँ श्री विद्या के परमोपासक एवं रहस्यवेत्ता श्री हरिहर जी शास्त्री, जिनने कि इस परम रहस्यमय नाम-स्तोत्र पर हिन्दी भाष्य करने का स्तुत्य प्रयास किया है, के विषय में मैं दो शब्द कहना आवश्यक समझता हूँ।

यह तो सर्वविदित ही है कि उक्त स्तोत्र पर श्रीविद्या के साधिकार विद्वान एवं आराधक स्वनामधन्य श्रीभास्कर राय प्रणीत सौभाग्यभास्कर नामक वृहद्विचारयुक्त संस्कृतभाष्य समुपलब्ध है। उनके इस भाष्य को देखकर यह सुनिश्चित करना प्रयत्नसाध्य नहीं है कि ये श्रीविद्या के परम रहस्य से भलीभाँति परिचित एवं प्रकाण्ड पण्डित थे। इनके लिखे अनेक ग्रन्थ हैं। वास्तव में इनका भाष्य ही इस रहस्यमय स्तोत्र-ग्रन्थ की ग्रन्थियो को शिथिल करने में समर्थ हुआ है। इसके अतिरिक्त उक्त स्तोत्र पर हिन्दी भाषा में भी अनेक टीकायें उपलब्ध हैं, तथापि- पं. श्री हरिहर जी शास्त्री द्वारा इस क्षेत्र में किया गया यह प्रयास भी अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। लेखक ने इसमें भगवती के प्रत्येक नाम के अभिप्राय को प्रस्फुटित कर सरल भाषा में उसे श्रद्धालु पाठकों तक पहुंचाने का जो प्रयास किया है वास्तव में वह अति प्रशंसनीय है।

पण्डित श्री हरिहर जी ने मथुरास्थ शक्तिपीठ के तत्कालीन परमाचार्य स्व० श्री १०८ श्री बदरीदत्त जी महाराज से श्रीविद्या की दीक्षा ली तथा उन्हीं की देखरेख में यन्त्रराज "जोकि आज भी विराजमान है'' की उपासना पद्धति का भलीभाँति अध्ययन किया। आज भी जब आचार्यकुल में कोई सेवा व्यवधान आशौचादि आता है तो आप ही यन्त्रराज की समर्चना में सर्वदा श्रद्धा पूर्वक सन्नद्ध रहते हैं। परमाचार्य श्री १०८ श्री बदरीदत्त जी महाराज षडंगवेद के ज्ञाता होते हुए तन्त्र शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित थे। आप

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मथुरास्थित परम प्रसिद्ध विश्रान्तितीर्थ पर स्थित श्री यमुना जी धर्मराज के मन्दिर में स्वयं अपने ही व्यय पर एक वेद-पाठशाला का संचालन भी करते थे। उन्होंने अनेक बालकों को वेदविद्या की शिक्षा प्रदान की थी। आज भी मथुरा में इनकी वैदिक परम्परा विद्यमान है। ऐसे ही स्वनामधन्य गुरु से दीक्षा प्राप्त पं. श्री हरिहर जी शास्त्री आज के इस विषमयुग में भगवती की समाराधना में सविहित प्रशंसनीय विद्वान हैं। यद्यपि इनकी अवस्था प्रायः ८० वर्ष की हो चुकी है, फिर भी इनको पाठनपठन का इतना व्यसन है कि ये कभी अपने अमूल्य समय का एक क्षण भी व्यर्थ नहीं खोना चाहते। ये श्रीमद्‌भागवत के अच्छे कथाकार हैं। इन्होंने एक श्रीविद्योपासना पद्धति-"श्रीविद्याकामधेनु'' नामक ग्रन्थ की रचना भी की है और हमेशा कुछ न कुछ लिखने पढ़ने में ही व्यस्त रहते हैं। ये एक अच्छे वार्ताकार भी हैं। आकाशवाणी मथुरा/दिल्ली से समय-समय पर इनकी वार्ताओं तथा श्रीमद्‌भागवत कथा का प्रसारण भी होता रहता है, जो शहर तथा समीपवर्ती क्षेत्र में स्पृहा-पूर्वक सुना जाता है। मैं इनके स्वास्थ्य एवं दीर्घायु की कामना करता हुआ, जगज्जननी श्रीललिताम्बा से पुनःपुनः प्रार्थना करता हूं कि वह इन्हें इस प्रकार के लोक कल्याणकारक कार्यों को करने की सतत् प्रेरणा प्रदान करती रहें। मुझे सुदृढ विश्वास है कि इनके इस स्तुत्य प्रयास से भगवती के रहस्यमय इस स्तोत्र के रहस्य को समझकर साधारणजन भी अवश्य ही लाभान्वित होंगे। इतिशम्।

–डॉ० कृष्णचन्द्र चतुर्वेदः
व्याकरणाचार्य, साहित्याचार्य, एम० ए० संस्कृत,
विद्यावारिधि,
रीडर, केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ जयपुर (राजस्थान)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ध्यानम्

सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्
तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम्।
पाणिभ्यामलिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं
सौम्यां रत्नघटस्थरक्तचरणां ध्यायेत्परामम्बिकाम्।।

अरुणां करुणातरंगिताक्षीं धृतपाशाङ्कुशपुष्पबाणचापाम्।
अणिमादिभिरवृतां मयूखैरहमित्येव विभावये भवानीम्।।

ध्यायेत् पद्मासनस्थां विकसितवदनां पद्मपत्रायताक्षीं
हेमाभां पीतवस्त्रां करकलितलसद्धेमपद्मां वराङ्गीम्।
सर्वालंकारयुक्तां सततमभयदां भक्तनम्रां भवानीं
श्रीविद्यां शान्तिमूर्तिं सकलसुरनुतां सर्वसम्पत्प्रदात्रीम्।।
सुकुंकुमविलेपनामलिकचुम्बिकस्तूरिकां
समन्दहसितेक्षणां सशरचापपाशांकुशाम्।
अशेषजनमोहिनीमरुणमाल्यभूषाम्बरां
जपाकुसुमभासुरां जपविधो स्मरेदम्बिकाम्।।

।। श्री ललिता-सहस्रनाम स्तोत्रम्।।

श्रीमाता श्रीमहाराज्ञी श्रीमत्सिंहासनेश्वरी।
चिदग्नि-कुण्ड-सम्भूता देवकार्य-समुद्यता।।१।।

उद्यद्भानु-सहस्राभा चतुर्बाहु-समन्विता।
रागस्वरूप-पाशाढ्या क्रोधाकाराङ्कुशोज्ज्वला।।२।।

मनोरूपेक्षु-कोदण्डा पञ्चतन्मात्र-सायका।
निजारुण-प्रभापूर-मज्ज़द्ब्रह्माण्ड-मण्डला।।३।।

चम्पकाशोक-पुन्नाग-सौगन्धिक-लसत्कचा।
कुरुविन्दमणि-श्रेणी-कनत्कोटीर-मण्डिता।।४।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
अष्टमीचन्द्र-विभ्राज-दलिकस्थल-शोभिता।
मुखचन्द्र-कलंकाभ-मृगनाभि-विशेषका।।५।।

वदनस्मर-मांगल्य-गृहतोरण-चिल्लिका।
वक्त्रलक्ष्मी-परीवाह-चलन्मीनाभ-लोचना।।६।।

नवचम्पक-पुष्पाभ-नासादण्ड-विराजिता।
ताराकान्ति-तिरस्कारि-नासाभरण-भासुरा।।७।।

कदम्बमंजरी-क्लृप्त-कर्णपूर-मनोहरा।
ताटंक-युगली-भूत-तपनोडुप-मण्डला।।८।।

पद्मरागशिलादर्श-परिभावि-कपोलभूः।
नवविद्रुम-बिम्बश्री-न्यक्कारिदशनच्छदा।।९।।

शुद्धविद्यांकुराकार-द्विजपंक्ति-द्वयोज्ज्वला।
कर्पूरवीटिकामोद-समाकर्षि-दिगन्तरा।।१०

निज-संलाप-माधुर्य-विनिर्भर्त्सित-कच्छपी।
मन्दस्मित-प्रभापूर-मज्जत्कामेश-मानसा।।११।।

अनाकलित-सादृश्य-चिबुकश्री-विराजिता।
कामेश-बद्ध-मांगल्य-सूत्र-शोभित-कन्धरा।।१२।।

कनकांगद-केयूर-कमनीय-भुजान्विता।
रत्नग्रैवेय-चिन्ताक-लोल-मुक्ता-फलान्विता।।१३।।

कामेश्वर-प्रेमरत्न-मणि-प्रतिपण-स्तनी।
नाभ्यालवाल-रोमालि-लता-फल-कुचद्वयी।।१४।।

लक्ष्यरोम-लताधारता-समुन्नेय-मध्यमा।
स्तनभार-दलन्मध्य-पट्टबन्ध-वलित्रया।।१५।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अरुणारुणकौसुंभ-वस्त्र-भास्वत्-कटीतटी।
रत्न-किंकिणिका-रम्य-रशना-दाम-भूषिता।।१६।।

कामेश-ज्ञात-सौभाग्य-मार्दवोरु-द्वयान्विता।
माणिक्य-मुकुटाकार-जानुद्वय-विराजिता।।१७।।

इन्द्रगोप-परिक्षिप्त-स्मरतूणाभ-जंघिका।
गूढगुल्फा कूर्मपृष्ठ-जयिष्णु-प्रपदान्विता।।१८।।

नख-दीधिति-संछन्न-नमज्जन-तमोगुणा।
पदद्वय-प्रभाजाल-पराकृत-सरोरुहा।।१९।।

सिंजान-मणिमंजीर मण्डित-श्री-पदांबुजा।
मराली-मन्दगमना महालावण्य-शेवधिः।।२०।।

सर्वारुणाऽनवद्यांगी सर्वाभरण-भूषिता।
शिव-कामेश्वरांकस्था शिवा स्वाधीन-वल्लभा।।२१।।

सुमेरु-मध्य-शृंगस्था श्रीमन्नगर-नायिका।
चिन्तामणि गृहान्तस्था पंच-ब्रह्मासन-स्थिता।।२२।।

महापद्माटवी-संस्था कदंबवन-वासिनी।
सुधासागर-मध्यस्था कामाक्षी कामदायिनी।।२३।।

देवर्षि-गण-संघात-स्तूयमानात्म-वैभवा।
भण्डासुर-वधोद्युत-शक्तिसेना-समन्विता।।२४।।

संपत्करी-समारूढ-सिंधुर-व्रज-सेविता।
अश्वारूढाधिष्ठिताश्व-कोटि-कोटिभिरावृत्ता।।२५।।

चक्रराज-रथारूढ-सर्वायुध-परिष्कृता।
गेयचक्र-रथारूढ-मंत्रिणी-परिसेविता।।२६।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
किरिचक्र-रथारूढ-दण्डनाथा-पुरस्कृता।
ज्वालामालिनिकाक्षिप्त-वह्निप्राकार-मध्यगा।।२७।।

भण्डसैन्य-वधोद्युक्त-शक्ति-विक्रम-हर्षिता।
नित्या-पराक्रमाटोप-निरीक्षण-समुत्सुका।।२८।।

भण्डपुत्र-वधोद्युक्त-बाला-विक्रम-नन्दिता।
मंत्रिण्यंबा-विरचित-विषंग-वध-तोषिता।।२९।।

विशुक्र-प्राणहरण-वाराही-वीर्य-नंदिता।
कामेश्वर-मुखालोक-कल्पित-श्रीगणेश्वरा।।३०।।

महागणेश-निर्भिन्न-विघ्नयन्त्र-प्रहर्षिता।
भण्डासुरेन्द्र-निर्मुक्त-शस्त्र-प्रत्यस्त्र-वर्षिणी।।३१।।

करांगुलि-नखोत्पन्न-नारायण-दशाकृतिः।
महा-पाशुपतास्त्राग्नि-निर्दग्धासुर-सैनिका।।३२।।

कामेश्वरास्त्र-निर्दग्ध-सभण्डासुर-शून्यका।
ब्रह्मोपेन्द्र-महेन्द्रादि-देव-संस्तुत-वैभवा।।३३।।

हर-नेत्राग्नि-संदग्ध-काम-संजीवनौषधिः।
श्रीमद्वाग्भव-कूटैक-स्वरूप-मुख-पंकजा।।३४।।

कण्ठाधः-कटि-पर्यन्त-मध्यकूट-स्वरूपिणी।
शक्तिकूटैकतापन्न-कट्यधोभाग-धारिणी।।३५।।

मूलमन्त्रात्मिका मूलकूटत्रय-कलेवरा।
कुलामृतैक-रसिका कुलसंकेत-पालिनी।।३६।।

कुलांगना कुलान्तस्था कौलिनी कुलयोगिनी।
अकुला समयान्तस्था समयाचार-तत्परा।।३७।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मूलधारैक-निलया ब्रह्मग्रन्थि-विभेदिनी।
मणिपूरान्तरुदिता विष्णुग्रन्थि-विभेदिनी।।३८।।

आज्ञाचक्रान्तरालस्था रुद्रग्रन्थि-विभेदिनी।
सहस्रारांबुजारूढा सुधासाराभिवर्षिणी।।३९।।

तडिल्लता समरुचिः षट्चक्रोपरि-संस्थिता।
महासक्तिः कुण्डलिनी बिसतन्तु-तनीयसी।।४०।।

भवानी भावनागम्या भवारण्य-कुठारिका।
भद्रप्रिया भद्रमूर्तिर्भक्त-सौभाग्यदायिनी।।४१।।

भक्तिप्रिया भक्तिगम्या भक्तिवश्या भयापहा।
शांभवी शारदाराध्या शर्वाणी शर्मदायिनी।।४२।।

शांकरी श्रीकरी साध्वी शरच्चन्द्र-निभानना।
शातोदरी शान्तिमती निराधारा निरंजना।।४३।।

निर्लेपा निर्मला नित्या निराकारा निराकुला।
निर्गुणा निष्कला शान्ता निष्कामा निरुपप्लवा।।४४

नित्यमुक्ता निर्विकारा निष्प्रपंचा निराश्रया।
नित्यशुद्धा नित्यबुद्धा निरवद्या निरन्तरा।।४५।।

निष्कारणा निष्कलंका निरुपाधि-र्निरीश्वरा।
नीरागा रागमथनी निर्मदा मदनाशिनी।।४६।।

निश्चिन्ता निरहंकारा निर्मोहा मोहनाशिनी।
निर्ममा ममताहन्त्री निष्पापा पापनाशिनी।।४७।।

निष्क्रोधा क्रोधशमनी निर्लोभा लोभनाशिनी।
निःसंशया संशयघ्नी निर्भवा भवनाशिनी।।४८।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

निर्विकल्पा निराबाधा निर्भेदा भेदनाशिनी।
निर्नाशा मृत्युमथनी निष्क्रिया निष्परिग्रहा।।४९।।

निस्तुला नीलचिकुरा निरपाया निरत्यया।
दुर्लभा दुर्गमा दुर्गा दुःखहन्त्री सुखप्रदा।।५०।।

दुष्टदूरा दुराचारशमनी दोष-वर्जिता।
सर्वज्ञा सान्द्रकरुणा समानाधिक-वर्जिता।।५१।।

सर्वशक्तिमयी सर्वमंगला सद्गति-प्रदा।
सर्वेश्वरी सर्वमयी सर्वमन्त्र-स्वरूपिणी।।५२।।

सर्व-यन्त्रात्मिका सर्व-तंत्ररूपा मनोन्मनी।
माहेश्वरी महादेवी महालक्ष्मी-र्मृडप्रिया।।५३।।

महारूपा महापूज्या महा-पातक-नाशिनी।
महामाया महासत्त्वा महाशक्ति-र्महारतिः।।५४।।

महाभोगा महैश्वर्या महावीर्या महाबला।
महाबुद्धि-र्महासिद्धि-र्महायोगेश्वरेश्वरी।।५५।।

महातन्त्रा महामन्त्रा महायन्त्रा महासना।
महायाग-क्रमाराध्या महाभैरव-पूजिता।।५६।।

महेश्वर-महाकल्प-महाताण्डव-साक्षिणी।
महाकामेश-महिषी महात्रिपुरसुन्दरी।।५७।।

चतुष्षष्ट्युपचाराढ्या चतुष्षष्टिकलामयी।
महाचतुः षष्टिकोटि-योगिनी-गणसेविता।।५८।।

मनुविद्या चन्द्रविद्या चन्द्रमण्डल-मध्यगा।
चारुरूपा चारुहासा चारुचन्द्र-कलाधरा।।५९।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

चराचर-जगन्नाथा चक्रराज-निकेतना।
पार्वती पद्मनयना पद्मराग-समप्रभा।।६०।।

पंचप्रेतासनासीना पंचब्रह्मस्वरूपिणी।
चिन्मयी परमानन्दा विज्ञानघनरूपिणी।।६१।।

ध्यान-ध्यातृ-ध्येयरूपा धर्माधर्म-विवर्जिता।
विश्वरूपा जागरिणी स्वपन्ती तैजसात्मिका।।६२।।

सुप्ता प्राज्ञात्मिका तुर्या सर्वावस्था-विवर्जिता।
सृष्टिकर्त्री ब्रह्मरूपा गोप्त्री गोविन्दरूपिणी।।६३।।

संहारिणी रुद्ररूपा तिरोधानकरीश्वरी।
सदाशिवाऽनुग्रहदा पंचकृत्यपरायणा।।६४।।

भानुमण्डल-मध्यस्था भैरवी भगमालिनी।
पद्मासना भगवती पद्मनाभ-सहोदरी।।६५।।

उन्मेष-निमिषोत्पन्न-विपन्न-भुवनावली।
सहस्रशीर्षवदना सहस्राक्षी सहस्रपात्।।६६।।

आब्रह्म-कीट-जननी वर्णाश्रम-विधायिनी।
निजाज्ञारूप-निगमा पुण्यापुण्य-फलप्रदा।।६७।।

श्रुति-सीमन्त-सिन्दूरी-कृत-पादाब्जधूलिका।
सकलागम-संदोह-शुक्ति-संपुट-मौक्तिका।।६८।।

पुरुषार्थ-प्रदा पूर्णा भोगिनी भुवनेश्वरी।
अंबिकाऽनादि-निधना हरिब्रह्मेन्द्र-सेविता।।६९।।

नारायणी नादरूपा नामरूप-विवर्जिता।
ह्रींकारी ह्रीमती हृद्या हेयोपादेय-वर्जिता।।७०।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

राजराजार्चिता राज्ञी रम्या राजीव-लोचना।
रंजनी रमणी रस्या रणत्किंकिणि-मेखला।।७१।।

रमा राकेन्दु-वदना रतिरूपा रतिप्रिया।
रक्षाकरी राक्षसघ्नी रामा रमणलंपटा।।७२।।

काम्या कामकलारूपा कदंब-कुसुम-प्रिया।
कल्याणी जगती-कन्दा करुणा-रस-सागरा।।७३।।

कलावती कलालापा कान्ता कादंबरी-प्रिया।
वरदा वामनयना वारुणी-मद-विह्वला।।७४।।

विश्वाधिका वेदवेद्या विन्ध्याचल-निवासिनी।
विधात्री वेदजननी विष्णुमाया विलासिनी।।७५।।

क्षेत्रस्वरूपा क्षेत्रेशी क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ-पालिनी।
क्षयवृद्धि-विनिर्मुक्ता क्षेत्रपाल-समर्चिता।।७६।।

विजया विमला वन्द्या वन्दारु-जनवत्सला।
वाग्वादिनी वामकेशी वह्निमण्डल-वासिनी।।७७।।

भक्तिमत्-कल्पलतिका पशुपाश-विमोचिनी।
संहृताशेष-पाषण्डा सदाचार-प्रवर्तिका।।७८।।

तापत्रयाग्नि-संतप्त-समाह्लादन-चन्द्रिका।
तरुणी तापसाराध्या तनुमध्या तमोपहा।।७९।।

चितिस्तत्पद-लक्ष्यार्था चिदेकरस-रूपिणी।
स्वात्मानन्द-लवीभूत-ब्रह्माद्यानन्द-सन्ततिः।।८०।।

परा प्रत्यक्-चितीरूपा पश्यन्ती परदेवता।
मध्यमा वैखरी-रूपा भक्त-मानस-हंसिका।।८१

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

कामेश्वर-प्राणनाडी कृतज्ञा कामपूजिता।
श्रृंगार-रस-संपूर्णा जया जालंधर-स्थिता।।८२।।

ओड्याण-पीठ-निलया बिन्दु-मण्डलवासिनी।
रहोयाग-क्रमाराध्या रहस्तर्पण-तर्पिता।।८३।।

सद्यःप्रसादिनी विश्वसाक्षिणी साक्षिवर्जिता।
षडंगदेवता-युक्ता षाड्गुण्य-परिपूरिता।।८४

नित्य-क्लिन्ना निरुपमा निर्वाण-सुख-दायिनी।
नित्याषोडशिका-रूपा श्रीकण्ठार्ध-शरीरिणी।।८५।।

प्रभावती प्रभारूपा प्रसिद्धा परमेश्वरी।
मूलप्रकृति-रव्यक्ता व्यक्ताव्यक्त-स्वरूपिणी।।८६।।

व्यापिनी विविधाकारा विद्याविद्या-स्वरूपिणी।
महाकामेश-नयन-कुमुदाह्लाद-कौमुदी।।८७।।

भक्त-हार्द-तमो-भेद-भानुमद्भानु-सन्ततिः।
शिवदूती शिवाराध्या शिवमूर्तिः शिवंकरी।।८८।।

शिवप्रिया शिवपरा शिष्टेष्टा शिष्टपूजिता।
अप्रमेया स्वप्रकाशा मनो-वाचामगोचरा।।८९।।

चिच्छक्ति-श्चेतना-रूपा जडशक्ति-र्जडात्मिका।
गायत्री व्याहृतिः संध्या द्विजवृन्द-निषेविता।।९०।।

तत्त्वासना तत्त्वमयी पंचकोशान्तर-स्थिता।
निःसीम-महिमा नित्य-यौवना मदशालिनी।।९१।।

मदघूर्णित-रक्ताक्षी मदपाटल-गण्डभूः।
चन्दन-द्रव-दिग्धांगी चांपेय-कुसुम-प्रिया।।९२।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

कुशला कोमलाकारा कुरुकुल्ला कुलेश्वरी।
कुलकुण्डालया कौलमार्ग-तत्पर-सेविता।।९३।।

कुमार-गणनाथांबा तुष्टिः पुष्टि-र्मति-धृतिः।
शान्तिः स्वस्तिमती कान्ति-र्नन्दिनी विघ्ननाशिनी।।९४।।

तेजोवती त्रिनयना लोलाक्षी-कामरूपिणी।
मालिनी हंसिनी माता मलयाचल-वासिनी।।९५।।

सुमुखी नलिनी सुभ्रूः शोभना सुरनायिका।
कालकण्ठी कान्तिमती क्षोभिणी सूक्ष्मरूपिणी।।९६।।

वज्रेश्वरी वामदेवी वयोवस्था-विवर्जिता।
सिद्धेश्वरी सिद्धविद्या सिद्धमाता यशस्विनी।।९७।।

विशुद्धिचक्र-निलया-ऽऽरक्तवर्णा त्रिलोचना।
खट्वांगादि-प्रहरणा वदनैक-समन्विता।।९८।।

पायसान्न-प्रिया त्वक्स्था पशुलोकभयंकरी।
अमृतादि-महाशक्ति-संवृता डाकिनीश्वरी।।९९।।

अनाहताब्ज-निलया श्यामाभा वदनद्वया।
दंष्ट्रोज्ज्वलाक्षमालादि-धरा रुधिर-संस्थिता।।१००।।

कालरात्र्यादि-शक्त्यौघ-वृता स्निग्धौदन-प्रिया।
महावीरेन्द्र-वरदा राकिण्यंबा-स्वरूपिणी।।१०१।।

मणिपूराब्ज-निलया वदनत्रय-संयुता।
वज्रादिकायुधोपेता डामर्यादिभि-रावृता।।१०२।।

रक्तवर्णा मांसनिष्ठा गुडान्न-प्रीत-मानसा।
समस्तभक्त-सुखदा लाकिन्यंबा-स्वरूपिणी।।१०३।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
स्वाधिष्ठानाम्बुजगता चतुर्वक्त्र-मनोहरा।
शूलाद्यायुध-संपन्ना पीतवर्णातिगर्विता।।१०४।।

मेदो-निष्ठा मधुप्रीता बन्धिन्यादि-समन्विता।
दध्यन्नासक्त-हृदया काकिनी-रूप-धारिणी।।१०५।।

मूलाधारांबुजारूढा पंचवक्त्रास्थि-संस्थिता।
अंकुशादि-प्रहरणा वरदादि-निषेविता।।१०६।।

मुद्गौदनासक्त-चित्ता साकिन्यंबा-स्वरूपिणी।
आज्ञा-चक्राब्ज-निलया शुक्लवर्णा षडानना।।१०७।।

मज्जा-संस्था हंसवती-मुख्य-शक्ति-समन्विता।
हरिद्रान्नैक-रसिका हाकिनी-रूप-धारिणी।।१०८।।

सहस्रदल-पद्मस्था सर्व-वर्णोप-शोभिता।
सर्वायुध-धरा शुक्ल-संस्थिता सर्वतोमुखी।।१०९।।

सर्वौदन-प्रीतचित्ता याकिन्यंबा-स्वरूपिणी।
स्वाहा स्वधाऽमति-र्मेधाश्रुति-स्मृति-रनुत्तमा।।११०।।

पुण्यकीर्तिः पुण्यलभ्या पुण्यश्रवण-कीर्तना।
पुलोमजार्चिता बन्धमोचनी बर्बरालका।।१११।।

विमर्शरूपिणी विद्या वियदादि-जगत्प्रसूः।
सर्वव्याधि-प्रशमनी सर्वमृत्यु-निवारिणी।।११२।।

अग्रगण्याऽचिन्त्यरूपा कलिकल्मष-नाशिनी।
कात्यायनी कालहन्त्री कमलाक्ष-निषेविता।।११३।।

तांबूल-पूरत-मुखी दाडिमी-कुसुम-प्रभा।
मृगाक्षी मोहिनी मुख्या मृडानी मित्ररूपिणी।।११४।।

CC0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

नित्य-तृप्ता भक्तनिधि-र्नियन्त्री निखिलेश्वरी।
मैत्र्यादि-वासनालभ्या महा-प्रलय साक्षिणी।।११५।।

पराशक्तिः परानिष्ठा प्रज्ञानघन-रूपिणी।
माध्वीपानालसा मत्ता मातृका-वर्ण-रूपिणी।।११६।।

महाकैलास-निलया मृणाल-मृदु-दोर्लता।
महनीया दयामूर्ति-र्महासाम्राज्य-शालिनी।।११७।।

आत्मविद्या महाविद्या श्रीविद्या कामसेविता।
श्रीषोडशाक्षरीविद्या त्रिकूटा कामकोटिका।।११८।।

कटाक्ष-किंकरी-भूत-कमला-कोटि-सेविता।
शिरस्थिता चन्द्रनिभा भालस्थेन्द्र-धनुःप्रभा।।११९।।

हृदयस्था रविप्रख्या त्रिकोणान्तर-दीपिका।
दाक्षायणी दैत्यहन्त्री दक्षयज्ञविनाशिनी।।१२०।।

दरान्दोलित-दीर्घाक्षी दरहासोज्ज्वलन्मुखी।
गुरु-मूर्तिर्गुणनिधि-र्गोमाता गुहजन्म-भूः।।१२१।।

देवेशी दण्डनीतिस्था दहराकाश-रूपिणी।
प्रतिपन्मुख्य-राकान्त-तिथि-मण्डल-पूजिता।।१२२।।

कलात्मिका कलानाथा काव्यालाप-विमोदिनी।
सचामर-रमा-वाणी-सव्य-दक्षिण-सेविता।।१२३।।

आदिशक्ति-रमेयाऽऽत्मा परमा पावनाकृतिः।
अनेक-कोटि-ब्रह्माण्ड-जननी दिव्य-विग्रहा।।१२४।।

क्लींकारी केवला गुह्या कैवल्य-पद-दायिनी।
त्रिपुरा त्रिजगद्वन्द्या त्रिमूर्ति-स्त्रिदशेश्वरी।।१२५।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

त्र्यक्षरी दिव्य-गन्धाढ्या सिन्दूर-तिलकांचिता।
उमा शैलेन्द्रतनया गौरी गन्धर्व-सेविता।।१२६।।

विश्वगर्भा स्वर्णगर्भा-ऽवरदा वागधीश्वरी
ध्यानगम्या-ऽपरिच्छेद्या ज्ञानदा ज्ञानविग्रहा।।१२७

सर्व-वेदान्त-संवेद्या सत्यानन्द-स्वरूपिणी।
लोपामुद्रार्चिता लीलाक्लृप्त-ब्रह्माण्ड-मण्डला।।१२८।।

अदृश्या दृश्यरहिता विज्ञात्री वेद्य-वर्जिता।
योगिनी योगदा योग्या योगानन्दा युगन्धरा।।१२९।।

इच्छाशक्ति-ज्ञानशक्ति-क्रियाशक्ति-स्वरूपिणी।
सर्वाधारा सुप्रतिष्ठा सदसद्रूप-धारिणी।।१३०।।

अष्टमूर्ति-रजाजैत्री लोकयात्रा-विधायिनी।
एकाकिनी भूमरूपा निर्द्वैता द्वैतवर्जिता।।१३१।।

अन्नदा वसुदा वृद्धा ब्रह्मात्मैक्य-स्वरूपिणी।
बृहती ब्राह्मणी ब्राह्मी ब्रह्मानन्दा बलिप्रियां।।१३२।।

भाषारूपा बृहत्सेना भावाभाव-विवर्जिता।
सुखाराध्या शुभकरी शोभनासुलभागतिः।।१३३।।

राजराजेश्वरी राज्यदायिनी राज्यवल्लभा।
राजत्कृपा राजपीठ-निवेशित-निजाश्रिता।।१३४।।

राज्यलक्ष्मीः कोशनाथा चतुरंग-बलेश्वरी।
साम्राज्य-दायिनी सत्यसन्धा सागरमेखला।।१३५।।

दीक्षिता दैत्यशमनी सर्वलोकवशंकरी।
सर्वार्थदात्री सावित्री सच्चिदानन्द-रूपिणी।।१३६।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

देशकालापरिच्छिन्ना सर्वगा सर्वमोहिनी।
सरस्वती शास्त्रमयी गुहांबा गुह्यरूपिणी।।१३७।।

सर्वोपाधि-विनिर्मुक्ता सदाशिव-पतिव्रता।
संप्रदायेश्वरी साध्वी गुरुमण्डल-रूपिणी।।१३८।।

कुलोत्तीर्णा भगाराध्या माया मधुमती मही।
गणांबा गुह्यकाराध्या कोमलांगी गुरुप्रिया।।१३९।।

स्वतन्त्रा सर्वतन्त्रेशी दक्षिणामूर्ति-रूपिणी।
सनकादि-समाराध्या शिवज्ञान-प्रदायिनी।।१४०।।

चित्कलाऽनन्द-कलिका प्रेमरूपा प्रियंकरी।
नामपारायण-प्रीता नन्दिविद्या नटेश्वरी।।१४१।।

मिथ्या-जगदधिष्ठाना मुक्तिदा मुक्तिरूपिणी।
लास्यप्रिया लयकरी लज्जा रंभादिवन्दिता।।१४२।।

भवदाव-सुधावृष्टिः पापारण्य-दवानला।
दौर्भाग्य-तूलवातूला जराध्वान्तरविप्रभा।।१४३।।

भाग्याब्धि-चन्द्रिका भक्त-चित्त-केकि-घनाघना।
रोगपर्वत-दंभोलि-मृत्युदारु-कुठारिका।।१४४।।

महेश्वरी महाकाली महाग्रासा महाशना।
अपर्णा चण्डिका चण्डमुण्डासुर-निषूदिनी।।१४५।।

क्षराक्षरात्मिका सर्वलोकेशी विश्वधारिणी।
त्रिवर्गदात्री सुभगा त्र्यंबका त्रिगुणात्मिका।।१४६।।

स्वर्गापवर्गदा शुद्धा जपापुष्प-निभाकृतिः।
ओजोवती द्युतिधरा यज्ञरूपा प्रियव्रता।।१४७।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दुराराध्या दुराधर्षा पाटली-कुसुम-प्रिया।
महती मेरुनिलया मन्दार-कुसुम-प्रिया।।१४८।।

वीराराध्या विराड्रूपा विरजा विश्वतोमुखी।
प्रत्यग्-रूपा पराकाशा प्राणदा प्राणरूपिणी।।१४९।।

मार्तण्ड-भैरवाराध्या मन्त्रिणी-न्यस्त-राज्यधूः।
त्रिपुरेशी जयत्सेना निस्त्रैगुण्या परापरा।।१५०।।

सत्यज्ञानानन्द-रूपा सामरस्य-परायणा।
कपर्दिनी कलामाला कामधुक्-काम-रूपिणी।।१५१।।

कलानिधिः काव्यकला रसज्ञा रसशेवधिः।
पुष्टा पुरातना पूज्या पुष्करा पुष्करेक्षणा।।१५२।।

परंज्योतिः परंधाम परमाणुः परात्परा।
पाशहस्ता पाशहन्त्री परमन्त्र-विभेदिनी।।१५३।।

मूर्ताऽमूर्ताऽनित्यतृप्ता मुनिमानस-हंसिका।
सत्यव्रता सत्यरूपा सर्वान्तर्यामिणी सती।।१५४।।

ब्रह्माणी ब्रह्मजननी बहुरूपा बुधार्चिता।
प्रसवित्री प्रचण्डाऽऽज्ञा प्रतिष्ठा प्रकटाकृतिः।।१५५।।

प्राणेश्वरी प्राणदात्री पंचाशत्पीठ-रूपिणी।
विशृंखला विविक्तस्था वीरमाता वियत्प्रसूः।।१५६।।

मुकुन्दा मुक्तिनिलया मूलविग्रह-रूपिणी।
भावज्ञा भवरोगघ्नी भवचक्र-प्रवर्तिनी।।१५७।।

छन्दःसारा शास्त्रसारा मन्त्रसारा तलोदरी।
उदारकीर्ति-रुद्दामवैभवा वर्णरूपिणी।।१५८।।

CC0. In Public Domain Kinjkant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

जन्ममृत्यु-जरातप्त-जन-विश्रान्ति-दायिनी।
सर्वोपनिष-दुद्घुष्टा शान्त्यतीत-कलात्मिका।।१५९।।

गंभीरा गगनान्तस्थां गर्विता गानलोलुपा।
कल्पना-रहिता काष्ठाऽकान्ता कान्तार्ध-विग्रहा।।१६०।।

कार्यकारण-निर्मुक्ता कामकेलि-तरंगिता।
कनत्कनक-ताटंका लीला-विग्रह-धारिणी।।१६१।।

अजा क्षयविनिर्मुक्ता मुग्धा क्षिप्र-प्रसादिनी।
अन्तर्मुख-समाराध्या बहिर्मुख-सुदुर्लभा।।१६२।।

त्रयी त्रिवर्ग-निलया त्रिस्था त्रिपुर-मालिनी।
निरामया निरालंबा स्वात्मारामा सुधासृतिः।।१६३।।

संसारपंक-निर्मग्न-समुद्धरण-पण्डिता।
यज्ञप्रिया यज्ञकर्त्री यजमान-स्वरूपिणी।।१६४।।

धर्माधारा धनाध्यक्षा धनधान्य विवर्द्धिनी।
विप्रप्रिया विप्ररूपा विश्वभ्रमण-कारिणी।।१६५।।

विश्वग्रासा विद्रुमाभा वैष्णवी विष्णुरूपिणी।
अयोनि-र्योनि-निलया कूटस्था कुलरूपिणी।।१६६।।

वीरगोष्ठी-प्रिया वीरा नैष्कर्म्या नादरूपिणी।
विज्ञानकलना कल्या विदग्धा वैन्दवासना।।१६७।।

तत्त्वाधिका तत्त्वमयी तत्त्वमर्थ-स्वरूपिणी।
सामगान-प्रिया सौम्या सदाशिव-कुटुंबिनी।।१६८।।

सव्यापसव्य-मार्गस्था सर्वापद्विनिवारिणी।
स्वस्था स्वभावमधुरा धीरा धीरसमर्चिता।।१६९।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

चैतन्यार्घ्य-समाराध्या चैतन्य-कुसुम-प्रिया।
सदोदिता सदातुष्टा तरुणादित्य-पाटला।।१७०।।

दक्षिणा-दक्षिणाराध्या दरस्मेर-मुखांबुजा।
कौलिनी-केवलाऽनर्घ्य-कैवल्य-पद-दायिनी।।१७१।।

स्तोत्र-प्रिया स्तुतिमती श्रुति-संस्तुत-वैभवा।
मनस्विनी मानवती महेशी मंगलाकृति।।१७२।।

विश्वमाता जगद्धात्री विशालाक्षी विरागिणी।
प्रगल्भा परमोदारा परामोदा मनोमयी।।१७३।।

व्योमकेशी विमानस्था वज्रिणी वामकेश्वरी।
पंचयज्ञ-प्रिया पंचप्रेत-मंचाधिशायिनी।।१७४।।

पंचमी पंचभूतेशी पंचसंख्योपचारिणी।
शाश्वती शाश्वतैश्वर्या शर्मदा शंभुमोहिनी।।१७५।।

धरा धरसुता धन्या धर्मिणी धर्मवर्धिनी।
लोकातीता गुणातीता सर्वातीता शमात्मिका।।१७६।।

बन्धूक-कुसुम-प्रख्या बाला लीला-विनोदिनी।
सुमंगली सुखकरी सुवेषाढ्या सुवासिनी।।१७७।।

सुवासिन्यर्चन-प्रीताऽऽशोभना शुद्ध-मानसा।
बिन्दु-तर्पण-सन्तुष्टा पूर्वजा त्रिपुरांबिका।।१७८।।

दशमुद्रा-समाराध्या त्रिपुराश्रीवशंकरी।
ज्ञानमुद्रा ज्ञानगम्या ज्ञान-ज्ञेय-स्वरूपिणी।।१७९।।

योनिमुद्रा त्रिखण्डेशी त्रिगुणांबा त्रिकोणगा।
अनघाऽद्भुत-चारित्रा वांछितार्थ-प्रदायिनी।।१८०।।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अभ्यासातिशय-ज्ञाता षडध्वातीत-रूपिणी।
अव्याजकरुणामूर्तिरज्ञानध्वान्तदीपिका।।१८१।।

आबाल-गोप-विदिता सर्वानुल्लंघ्य-शासना।
श्रीचक्रराज-निलया श्रीमत्-त्रिपुरसुन्दरी।।१८२।।

श्रीशिवा शिव-शक्त्यैक्य-रूपिणी ललितांबिका।।ॐ।।

(इति श्री ब्रह्माण्डपुराणे उत्तरखण्डे श्री हयग्रीवागस्त्य-संवादे श्री ललितासहस्रनाम-स्तोत्र-कथनं संपूर्णम्)

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१. श्रीमाता

ब्रह्मा से लेकर कीट तक को जन्म देने वाली श्री माँ ।

आब्रह्म कीट जननी, श्री लक्ष्मी की जननी, श्री श्रेष्ठता की माँ। श्री जहाँ नाम पर लग जाती है, वह श्रीमान् हो जाता है। श्री शब्द परब्रह्म का वाचक है। ब्रह्म ही श्री पुरुष रूप में।

श्री स्त्री रूपा श्री जी : श्री नाथ जी। स्त्री रूप में श्रीजी कहने से श्रीमाता कहलाती है। श्री से ही शोभा है, जैसे : श्रीगणेश, श्रीकृष्ण, श्रीराम, श्रीशिव, श्रीसूर्य इत्यादि। सभी जगह श्री को लगाकर महान बनाते हैं। श्री लक्ष्मी को भी कहते हैं राज्यलक्ष्मी व विजयलक्ष्मी को भी। श्रीमाता ने अपना श्रीनाम लक्ष्मी को देकर धन-सम्पत्ति की अधिष्ठात्री बना दी, जिसके पीछे सारा विश्व घूमता है। जिस धन को लोग लक्ष्मी कह कर उसके पीछे भागते हैं वह वास्तव में श्री की ही छाया है। इसको माया भी कहते हैं जो महामाया की परछायीं है। श्रीमाता सबकी जननी है। यही गायत्री है। जिसको ब्रह्मयोनि कहते हैं। श्री कल्याण वाचक है। श्रेय अच्छे कार्य करने वाले को मिलता है।

वेद में "श्रियं वासय मे कुले", श्रीसूक्त : "श्रीश्चते लक्ष्मीश्चते"। कुछ काल से श्री शब्द को श्रीजी कहने लगे हैं। सम्मान वाचक जैसे श्रीराम जी, कृष्णजी पूर्व काल में श्रीकृष्ण या श्री राम आदि। विष्णुसहस्रनाम में कहा है,

श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतां वरः।
श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः।
श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमान्लोकत्रयाश्रयः। श्लो. ७७-७८।

इष्ट देवता का न्यास हृदय में होता है इसीलिये श्रीवत्सवक्षाः। श्री का नाम शक्ति भी है। जिसमें शक्ति रहती है वही सर्व शक्तिवान कहलाता है। श्री विद्यानाम की जननी है। श्री का रहने का स्थान महापुरुष है, वही विष्णुसहस्रनाम में आता है- श्रीवत्सवक्षा अर्थात् श्री जिनके वक्षस्थल हृदय में निवास करती है श्री का वास ही विष्णु है, श्रीनिवास श्री ही जिनकी निधि है-मूर्ति है। इससे यह सिद्ध होता है कि श्री और श्रीनिवास अभेद्य है, भेदरहित हैं- जैसे प्राण और शरीर एक ही है, तो ऐसे श्रीधर और श्री एक ही है।

२. श्रीमहाराज्ञी

सर्वोपरि राज्य करने वाली लोकपालों पर भी शासन करने वाली सम्राटों पर भी शासन करने वाली महारानी। राजा का कार्य रक्षा करना है। वह सबकी रक्षक है। राजा व सम्राटों से ऊपर, पृथ्वीलोक, मृत्युलोक,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
वैकुण्ठलोक, सूर्यलोक, चन्द्रलोक, स्वर्गलोक, भूलोक, भुवर्लोक, कुबेर, वरुण व यमलोक इत्यादि सब लोकपालों पर राज्य करने वाली श्री महाराज्ञी।

३. श्रीमत्सिंहासनेश्वरी

महान राजगद्दी पर बैठी। आसन सिंह पर बैठने वाली, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र एवं सदाशिव द्वारा रचित महान सिंहासन पर विराजमान। अथवा श्रीमान् महापुरुषों के हृदय में जिसका आसन है।

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः, इन पर है आसन जिसका अर्थात् सभी के हृदयासन पर बैठी है शक्ति रूप में।

४. चिदग्निकुण्डसम्भूता

चेतनारूपी अग्नि से प्रकट होने वाली जो स्वयं प्रकाशपुंज है। देव्यथर्वशीर्ष-तामग्निवर्णां तपसा ज्वलंतीं अर्थात् स्वयं ही अग्नि है और स्वयं ही उससे प्रकट होती है। या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते। नमस्तस्यै। नमस्तस्यै। नमस्तस्यै नमो नमः।। अध्याय ५ दुर्गासप्तशती : उत्तम चरित्र।

चित्शक्ति- चैतन्यरूपा है। शक्ति चैतन्यता से प्रकट होती है- त्रिपुरा-तापिनी उपनिषद-त्रिपुरा परमेश्वरी महाकुण्डलिनी देवी जातवेद समण्डलं योऽधीते सर्वं व्याप्यते त्रिकोणशक्ति रेकारेण। चिदग्निकुण्ड त्रिकोणमध्य से प्रकट होकर छः चक्र भेदकर सहस्रदल में "ऐं" कार रूप में प्रकट होती है।

५. देवकार्यसमुद्यता

देवताओं के कार्य सिद्ध करने को हमेशा उद्यत (एवं) प्रकट होती हैं। मुररिपु वराहस्य भवती-मुररिपु मुरारी (विष्णु) के रूप में प्रकट या वाराह, नृसिंह, परशुराम, कृष्ण, बलदेव, मत्स्य, कच्छप आदि अनेक रूप में प्रकट। देवताओं के कार्य को हमेशा उद्यत। देवता सात्विकी होते हैं, उनको साधु कहा है यानी सज्जन। गीता में परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्, धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगेयुगे।

६. उद्यद्भानु सहस्राभा

सुबह को उदय होते हुए हजारों सूर्य के समान जिनके मुख का प्रकाश है,- वही सौन्दर्य का खजाना है, जिसमें से वह सौन्दर्य और प्रकाश प्राणियों को वितरित करती हैं। इसी अपने असंख्य प्रकाश में से अपना थोड़ा सा प्रकाश सूर्य को दिया है, जिससे वह त्रिलोकी में प्रकाश करते हैं। ज्योतिरूपा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७. चतुर्बाहुसमन्विता

जिनके चार हाथ हैं। इन चारों हाथों में धनुष-बाण, पाश-अंकुश धारण किये हुए हैं। चार वेद ही जिनके चार हाथ हैं। प्रतीक पूजा।

८. रागस्वरूपपाशाढ्या

किसी वस्तु में राग (आसक्ति) आशारूपी फांसी या पाश से छुड़ाने को अंकुश-ज्ञान। पाश के आठ अंग हैं जोकि तन्त्रों में कहे हैं जैसे लज्जा, घृणा, भयं, शोकं, जुगुप्सा चेति पंचमम् कुलं शीलं तथा जाति अष्टौ पाशा इमे स्मृता:। पाशबद्ध: पशु: प्रोक्त: पाश-मुक्त: सदाशिव:। उपरोक्त रहस्यमय श्लोकों का अर्थ गुरुमुख या गुरु परंपरा से ही सुलभ होते हैं।

९. क्रोधाकारांकुशोज्ज्वला

उपासक का मन जब हाथी की तरह इधर-उधर गलत रास्ते पर जाने लगता है तो राजराजेश्वरी ज्ञानरूप अंकुश से उस शरणागत आए हुए को सही मार्ग पर चलाकर भक्त के लक्ष्य को पूर्ण करती हैं।

१०. मनोरूपेक्षुकोदण्डा

मनरूपी ईख का धनुष। मन को ईख के दण्ड की तरह श्रीजी के चरणन में नवाय देना इक्षुदण्ड है। ईख की पत्ती हमेशा काहू न काऊ दिशा में हवा-झरोखा में घूमती रहती है, ऐसे ही ये मन घूमता है। इसको धनुष की डोरी से बाँधकर देवी की ओर कर देना ही मन की सार्थकता है, क्योंकि मन मोक्ष और बन्धन का कारण है। मन ही सुख-दुख का कारण है। मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयो:।। श्रीमद्भागवत स्क. ११ अ. २३ श्लो. ४३, मन के संबंध में : नायं जनो मे सुखदु:ख-हेतुर्न देवतात्मा ग्रहकर्मकाल:। मन: परंकारणमामनन्ति संसार चक्रं परिवर्तयेद्यत्।। कदर्य ब्राह्मण बहुत धनवान उसने धन का न दान किया-न स्वयं भोगा आखिर चोर ले गये। तब इसको दुख हुआ, इसीने कारण बताया- और कहा कोई मनुष्य मेरे सुख का कारण नहीं, नहीं देवता, न मैं स्वयं, न ग्रह, न कर्म, न काल, केवल मन ही कारण है। इसलिये मन को गन्ने के समान श्री माँ के चरणों में नवा देना ही मनोरूपेक्षुकोदण्डा है। त्रिपुरा तापिन्युपनिषत् में कहा है- बन्धनंविषयासक्तं मुक्त्यै निर्विषयं मन:। अर्थात् विषयासक्ति ही बन्धन है- निर्विषयता मुक्ति है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

११. पंचतन्मात्रसायका

शब्द, स्पर्श, रूप, रस गन्ध ही पांच बाण हैं। कानों से सुनना, चर्म से छूकर जानना, आँखों से देखना, जीभ से चखना, नाक से सूंघना, ये ही तन्मात्रा कहलाती है। भगवती के हाथ में ये ही पुष्पों के बाण हैं।

१२. निजारुणप्रभापूरमज्जद्ब्रह्माण्डमण्डला

अपनी अरुण आभा से सब ब्रह्माण्ड को लाल रंग से प्रकाशित करे हुए हैं।

१३. चम्पकाशोकपुन्नागसौगंधिक-लसत्कचा

चम्पा के पुष्प, अशोक का और पुन्नाग का पुष्प-तीनों प्रकार के फूलों से जिनकी चोटी गुही हुई है। मानों ये तीन पुष्प, सत्व, रज, तम तीनों गुणों के पुष्पों केशपाश में बंध रहे हैं। जिन त्रिपुष्पों की गन्ध से विश्व सुगन्धित हो रहा है।

१४. कुरुविन्दमणिश्रेणीकनत्कोटीरमण्डित्ता

तीन प्रकार के कमल-लाल कमल और नील कमल व श्वेत कमल-मणि जोकि स्फटिक से होती है, ऐसी आभा है जिसकी, उपरोक्त पद्ममणि पाषाण में भी जगदम्बा की सहज सुगन्ध है। और उन मणियों की पंक्ति श्रेणी, जिनके मुकुट में शोभा दे रही है।

१५. अष्टमी-चन्द्र विभ्राजदलिकस्थलशोभिता

अष्टमी महत्वपूर्ण तिथि-इसीलिये भगवती का प्रादुर्भाव भी अष्टमी को हुआ। देवीअष्टमी, कृष्णजन्माष्टमी, राधाष्टमी प्रत्येक पक्ष में अष्टमी का चन्द्रमा एक सा रहता है। वह अष्टमी का चन्द्रमा अलकस्थल पर विराजता है।

१६. मुखचन्द्रकलंकाभ-मृगनाभिविशेषका

श्रीजी का मुख असंख्य चन्द्रमाओं के समान है। उनके मस्तक पर कस्तूरी का टीका ऐसे प्रतीत होता है, जैसे चन्द्रमा में कलंक यों कहिये कर्पूरगौरं, जो शिव हैं उनके श्वेत अंग पर नीला हलाहल कंठ को नीला किये हुए है। मृग की टूँडी में कस्तूरी होती है, उसे मृगनाभि भी कहते हैं।

मुखचन्द्र पर अत्यन्त लाल कस्तूरी मानो गौर मुख पर नजर

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

का लाल टुमकना है।

१७. वदनस्मर मांगल्यगृहतोरणचिल्लिका

भगवती का मुखारविन्द स्मर कामेश्वर के गृह का तोरण मंगलमय झूलता हुआ बन्दनवार के समान शोभित है।

१८. वक्त्रलक्ष्मी-परीवाह-चलन्मीनाभलोचना

दया के समुद्र रूपी मुखारविन्द जल में मछलीरूपी नेत्र हैं, मछली की यह विशेषता है कि वह अपने बच्चों को देखने मात्र से पोषण करती है, ऐसे ही जगत-जननी अपने नेत्रों से देखकर सबका पालन करती है।

कुलार्णव तन्त्र के अनुसार पक्षी अपने बच्चे (अण्डे) को छूकर (स्पर्श) पोषण करती है। मछली (दृग्दीक्षा) केवल देखकर व कछुआ न देखता न छूता, केवल ध्यान मात्र रखता है, इसी से बच्चे पुष्ट हो जाते हैं। इसीलिये देवी को मीनाक्षी कहते हैं।

१९. नवचम्पक-पुष्पाभ-नासादण्ड-विराजिता

नवीन चम्पा की कली के समान जिनकी सुन्दर नासिका है।

२०. तारा-कान्ति-तिरस्कारि-नासाभरण-भासुरा

नाक का आभूषण (नथ) में जो हीरा जड़ा है, वह तारागणों की चमक (दीप्ति) को भी लज्जित करने वाला है।

२१. कदम्बमंजरी क्लृप्तकर्णपूर मनोहरा

आपके दोनों कानों में कदम्ब के पुष्प के कर्णफूल शोभा पा रहे हैं। देवी के अंगश्री के जिन गहनों का वर्णन है, वे सभी अंगों से खुशबू प्राप्त कर विश्व को सुगन्धित कर रहे हैं।

२२. ताटंक-युगलीभूत-तपनोडुपमण्डला

सूर्य, चन्द्रमा जिनके ताटंक हैं, आभूषण हैं।

२३. पद्मरागशिलादर्श-परिभाविकपोलभू

दोनों कपोल पद्मराग-मणि के समान प्रतिबिम्बित हैं, दर्पण के समान स्वयं दृश्य और द्रष्टा। सौंदर्योपासिनी।

CC-0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

२४. नवविद्रुमबिम्बश्रीन्यक्कारिरदनच्छदा

नए मूंगा जैसे ओष्ठ और अधर शोभायमान हैं।

२५. शुद्धविद्यांकुराकार-द्विजपंक्तिद्वयोज्ज्वला

शुद्ध विद्या ब्रह्म, श्वेत प्रकाश ज्ञान का द्योतक है। जिन दोनों दाँतों की पंक्ति स्वच्छ ब्रह्मविद्या का अंकुर स्वरूप है। सोलह दांत ऊपर के षोडशी के १६ अक्षर और १० महाविद्या तथा ६ महाविद्या जिनके नाम :- १. जयदुर्गा, २. शूलिनी, ३. अश्वारूढ़ा, ४. त्रैलोक्य विजया, ५.वाराही, ६. अन्नपूर्णा। इस प्रकार ३२ होते हैं, और इतने ही दाँत होते हैं।

२६. कर्पूरवीटिकामोद-समाकर्षि-दिगन्तरा

पान की बीरी से दशौं दिशा सुगन्धित हैं। कर्पूर से तात्पर्य सुगन्धि से है। यह १० वस्तुओं से बना पान का बीड़ा कहलाता है। ये वस्तु: कत्था, चूना, लोंग, लायची, कपूर, केशर, जावित्री, कस्तूरी, जायफल व सुपारी। इसके चबाने से उसके सौंदर्य में और निखार प्रतीत होता है। सौन्दर्य-लहरी: मुखे ते ताम्बूलं-नयन-युगले-कज्जलकला।

२७. निजसंलापमाधुर्य-विनिर्भर्त्सितकच्छपी

श्री राजराजेश्वरी ने अपने माधुर्य संल्लाप स्वर से वीणा के शब्द को तुच्छ कर दिया है। नाद का माधुर्य शब्द है। ब्रह्म व शब्द अखण्ड है। वेद आपका शब्द है, जोकि शाश्वत है-उसी शब्द माधुर्य से आपने वेणुनाद (बांसुरी) के सुरीले गान से विश्व को मोहित किया है।

२८. मन्दस्मित-प्रभापूर-मज्जद्-कामेश-मानसा

मन्द मुसकान से भगवान कामेश्वर के मन को मोहित किये है। आपकी मुसकान ही प्राणी मात्र को आनंद देने वाली है-आपके स्मेर मुखारविन्द का ध्यान करने वाला साधक दोनों ही प्रकार के आनंद प्राप्त करता है। सांसारिक एवं पारलौकिक। जैसा कि कहा है-

यत्रास्ति मोक्षो नहि तत्र भोग, यत्रास्ति भोगो नहि तत्र मोक्ष:।
श्री सुन्दरी पूजन तत्पराणां, भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव।

अर्थात् जहाँ भोग है, वहाँ मोक्ष नहीं, जहाँ मोक्ष है वहाँ भोग नहीं, किन्तु इनके दरबार में दोनों ही वस्तु मिलती हैं। किसको ! जो श्रद्धापूर्वक उपासना करता है उसे, सब कुछ मिलता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२९. अनाकलित-सादृश्य-चिबुकश्री-विराजिता

श्रीजी की चिबुक (ठोड़ी) इतनी सुन्दर है कि जिसकी उपमा नहीं। वह अनुपमेय है। उसकी शान की कोई दूसरी वस्तु नहीं है, तो उसे कैसी उपमा दी जाये। केनोपमाभवतुतेऽ स्य पराक्रमस्य (४/२२ दुर्गासप्तशती) आपकी तुलना किससे की जा सकती है?

३०. कामेशबद्ध-मांगल्यसूत्रशोभितकन्धरा

कामेश्वर से बंधे सौभाग्यसूत्र आभूषण मे जिनका कण्ठ शोभित है।

३१. कनकांगद केयूर कमनीयभुजान्विता

सोने के अंगद (बाजूबन्द) सुन्दर भुजाओं में शोभित है। चारों हाथों की कौनी के आभूषण बाल सूर्य के समान चमक रहे हैं।

३२. रत्नग्रैवेय-चिन्ताक-लोलमुक्ता-फलान्विता

जिनके कण्ठ में चिन्ताक रत्नों से जड़ा मोती फल, मोती को फल की संज्ञा इसलिये दी गई है कि मोती कई प्रकार से पैदा होते हैं। जैसे, गजमुक्ता हाथी के मस्तक से निकला है, ग्राह-मगर के माथे से, पर्वतों से पाषाण-मुक्ता, समुद्र से जलमुक्ता, फलमुक्ता जोकि आकाश से बूँद पड़ने पर सीप में पड़ने पर उत्पन्न होता है। जैसे कि आकाश की बूँद वर्षा से सभी फल होते हैं। इस प्रकार फलान्वित मुक्ता (मोती) जिनके कण्ठ में प्रकाशित है, फलरूपी मोती ही हंस का आहार है किसी और प्रकार पाषाणदि का खाद्य मोती नहीं हो सकता।

३३. कामेश्वर-प्रेमरत्न-मणिप्रतिपणस्तनी

प्रेमरत्न महान अमूल्य पदार्थ है, जिस प्रेम के द्वारा सबसे बहुमूल्य ईश्वर प्राप्त हो जाता है। ये कामेश्वर की बहुमूल्य वस्तु है। जो कि शिव के हृदय में है जहां कामेश्वरी की बहुमूल्य वस्तु मणि-युग्म दो स्तन हैं, जिसको पयोधर भी कहा है। इनमें दोनों पयोधरों में केवल सामान्य दूध ही नहीं, अंपितु एक में भोग और दूसरे में मोक्ष। इतना ही नहीं, जिन वस्तुओं से प्राणी मात्र का पालन होता है, अन्नादि देवताओं का खाद्यपेय अमृत भी है। इसीलिये इन्हें अन्नपूर्णा भी कहा है। उपरोक्त से तात्पर्य है कि श्री सुन्दरी अपने स्तनरूपी पण देकर (पण) पैसा या मूल्य क्रय-विक्रय भाव है। मणि देकर रत्न खरीदा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्रेम रूपी रत्न चढ़ें चक्खे प्रेम रस। दुर्गासप्तशती में मूर्ति रहस्य के श्लो. ८: भक्तान् सम्पाययेद्देवी, सर्वकाम दुघौस्तनौ, वह कामदुघा है। माँ के स्तन कामधेनु के स्तन हैं, इनको कठिन स्तन मण्डला भी कहा है। कठिन तो प्रत्यक्ष हैं पर्वत पहाड़ कठोर होता है-पर्वतस्तन मण्डले-पर्वत शिखर के स्तन, जिन स्तन रूपी पहाड़ों से पय निकलता है, पय के दोनों नाम हैं पानी व दूध।

३४. नाभ्यालवालरोमालिलताफलकुचद्वयी

नाभि रूपी आलबाल (गमला) जिसमें पौध/लता(बेल) की जड़ होती हैं उसी तरह नाभि (टूंडी) से बेल चलकर आगे जाकर उस लता में फल लगते हैं। जब माँ के गर्भ (पेट) में बच्चा होता है, तब बच्चे को नाभि द्वारा खाद्य पहुंचता है, जिसे नाल कहते हैं, उससे उसके अंग पुष्ट होते हैं। इसी प्रकार गमला नाभि है, उसमें जो लता है उसके फल है स्तनद्वय। प्रत्यक्ष देखा जाता है (टूंडी) रोम (बालों) की बेल सी दिखाई देती हैं। आगे ऊपर स्तन होते हैं। श्री माताजी के स्तन प्राणी मात्र को दूध रूपी भोज्य या भोजन देते हैं। क्योंकि वे सब की माता हैं।

३५. लक्ष्यरोमलताधारता समुन्नेयमध्यमा

कमर इतनी पतली है कि रोम लता की तरह फैली नजर नहीं आती।

३६. स्तनभारदलन्मध्यपट्टबन्धवलित्रया

स्तनों का भार इतना है कि उनके भार से वे झुकी जाती हैं, जैसे जब वृक्षों में फल लगता है तो वे झुकने लगते हैं। स्तनों में भार होना स्वाभाविक है, क्योंकि सारे विश्व को वे दूध देती हैं, जिससे बालक, जो जन्म लेता है तबसे युवा एवं वृद्ध सभी को वही दूध देती है, जो भक्त उनकी आराधना करते है, उन्हें प्राप्त होता है। जैसा कि दुर्गा सप्तशती में कहा है- भक्तान् सम्पाययेद्देवी सर्वकामदुघौस्तनौ (८ मूर्तिरहस्य) केवल दूध ही नहीं सभी इच्छित वस्तु देती हैं। श्री शंकराचार्य जी ने सौन्दर्य-लहरी (श्लो ०७) में कहा है- क्वणत्कांचीदामा करिकलश कुम्भ स्तनभरा।

३७. अरुणारुणकौसुंभवस्त्रभास्वत्कटीतटी

कटि (कमर में) सुन्दर लाल साड़ी सुसज्जित है। प्रातःकाल का समय अरुणोदय का तात्पर्य प्राकृतिक लाली है, वही राजराजेश्वरी के वस्त्र की आभा है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३८. रत्नकिंकिणिकारम्यरशनादामभूषिता

रत्नों से जटित क्षुद्र-घंटिकाओं से युक्त (घुंघरू) लटक रहे हैं ऐसी सुवर्ण (सोने) मेखला (कन्धनी) से विभूषित।

३९. कामेशज्ञातसौभाग्य मार्दवोरुद्वयान्विता

भगवान सदाशिव ही उरुद्वय (कमर के निचले भाग) को जानते हैं, जिनकी कोमलता कमनीयता का ज्ञान मात्र कामेश्वर को ही है।

४०. माणिक्यमुकुटाकारजानुद्वयविराजिता

लाल रंग की मणि के मुकुट के आकार के जिनके घुटने हैं।

४१. इन्द्रगोपपरिक्षिप्तस्मरतूणाभजंघिका

घुटनों के नीचे पिंडलियाँ इन्द्रगोप नाम की मणियों से सजी हुई हैं, जैसे कामदेव के तूणीर या तरकस या कामेश के बाणों का शस्त्रागार हो।

४२. गूढगुल्फा

पैरों की पसुलियां या टखने मांसल हैं, सुशोभित हैं।

४३. कूर्मपृष्ठजयिष्णुप्रपदान्विता

चरणों के उपर का भाग कछुए की पीठ से अधिक शोभित है।

४४. नखदीधितिसंछन्ननमज्जनतमोगुणा

जो इनके चरणों के नखों (नाखूनों) को ध्यान में लाते हैं, उनका तमोगुण ढक जाता है (अर्थात् वे इतने कांतिपूर्ण हैं कि अन्धकार नहीं रहता, वह ज्ञान के प्रकाश द्वारा दूर हो जाता है।)

४५. पदद्वयप्रभाजालपराकृतसरोरुहा

भगवती के दोनों चरण कमलों की कान्ति ऐसी है, जैसे युग-प्रकाश का सरोवर लहराता हो। दोनों चरण भक्तों को इच्छानुसार फल देते हैं। तव हि चरणावेवनिपुणौ। भक्तेष्टदान निरतं भवसिन्धु पोतम्। पद्मासनादि सुर नायक पूजनीयं। वज्रांकुशध्वज सरोरुह लांछनाढ्यम्।

संसार सागर से पार करने वाले देवताओं से पूजित आपके चरण हैं। आपके चरणों के तल प्रदेश (तरवा) में विशेष चिह्न हैं। वो हैं : वज्र अंकुश,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

और ध्वजा एवं कमल उन चरणों के प्रकाश का ध्यान करने वालों का अन्धकार नाश होकर हृदय का अंधेरा दूरा हो जाता है। जो कि अज्ञान, प्राणी के दुःख का कारण होता है, इन चरणों की शरण लेने से ज्ञान प्रकाश आता है, और सुख प्राप्त होता है।

४६. शिंजानमणिमंजीरमंडितश्रीपदाम्बुजा

इनके चरणों में मणियों से जटित नूपुर मंजुल शब्द कर रहे हैं। यह श्री चरणों की गतिशीलता का परिचय भी दे रहे हैं। यही सप्त स्वर हैं, यही वेदध्वनि है।

४७. मरालीमन्दगमना

हंस के चलने से पैरों से शब्द नहीं होता, इसलिये भगवती को मन्द-गमना कहा है। धमाके से पैर रखना कुलक्षण (स्त्री का) माना गया है। भगवती चल रही हैं, इनकी मन्द गति हंस की चाल को भी मात करती है।

४८. महालावण्य शेवधिः

वे लावण्यः सौन्दर्य का खजाना है, इनकी सुन्दरता से संसार में सुन्दरता बिखरी हुई है।

४९. सर्वारुणा

श्रीराजराजेश्वरी ललिताम्बा के स्थूल स्वरूप के सांगोपांग वर्णन के पश्चात् उसके सूक्ष्म रूप तत्त्व का विवेचन प्रारम्भ करते हुए भगवती के सभी अंगों से बरस रही लालिमा की ओर ध्यानाकर्षित होता है। देवी के अंग-अनंगों से सिन्दूर की लालिमा समाहित है। यह रंग आनंद का द्योतक है। देवी आनंदमय है।

५०. अनवद्यांगी

अनिन्द्य हैं अंग जिनके। उनका स्वरूप सौंदर्य निर्मल और निर्दोष है, जिसमें कोई वासना या निन्दा का स्थान ही नहीं है।

५१. सर्वाभरणभूषिता

सभी प्रकार के आभूषणों से सुसज्जित हैं। सभी कल्पनीय या अकल्पनीय गहनों से सहज ही सुशोभित हैं। आपके अलंकरण ब्रह्माण्ड में

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
अनेकानेक सूर्य, चन्द्र, तारागण के रूप में चमक रहे हैं।

सभी प्रकार के जेवर तो पृथ्वी पर रानी-महारानियां भी पहनती हैं, किन्तु ये जिन गहनों को एक बार धारण कर लेती हैं, दूसरे दिन स्नान करके दूसरे धारण कर लेती हैं, जोकि नवीन जवाहरात, मोती, मणि आदि सें जटित हैं, इस प्रकार के आभूषणों से भूषिता।

५२. शिवकामेश्वरांकस्था

श्री सुन्दरी शिव के अंक में (गोद में) विराजित हो रही हैं जिससे महान आनंद की उत्पत्ति होती है। उसी आनंद को भक्तों को उदारता पूर्वक दे रही हैं। उनके पति "शिव कामेश्वर'' जो कामदेव को जीतने वाले हैं। शिव-कामना या मंगल कामनाओं के ईश्वर हैं, ऐसे पतिदेव के अंक में विराजित होने वाली श्री माँ अपने सौंदर्य व वैभव को परमार्थ का हेतु बना रही हैं। अपनी व अपने पति की शोभा बढ़ा रही हैं।

दूसरा जो गूढ़तम अर्थ है, वह रहस्यों का रहस्य है, जो गुरु द्वारा ही ज्ञात हो सकता है। तन्त्र में भी शिव-शक्ति को एकरूप दर्शाया है। मंत्रों में भी यही रहस्य विद्यमान है। शिव-शक्ति एक रूप हैं, दोनों एक-दूसरे से अलग नहीं हैं। श्रीयन्त्र में मध्य में त्रिकोणभगवती का स्वरूप है तथा उसके मध्य बिन्दु शिव का स्वरूप है किन्तु यह अकथनीय विषय है।

त्रिकोणरूपिणी शक्ति, बिन्दुरूपः परः शिवः। यह अन्योन्याश्रित संबंध है।

५३. शिवा

शिव की शक्ति शिवा है। शिव नाम कल्याण का है, शिव शोभन रूप सबकी शोभा, शिवा मंगलरूपिणी- ये दोनों नाम एक ही के हैं।

परमात्मा शिवः प्रोक्तः शिवा सैव प्रकीर्तिताः।

सूर्य की शक्ति ग्रीष्म किरण/धूप/गरमाई है, चन्द्र की चांदनी, जल की शक्ति शीतलता है, ऐसे ही शिव की शक्ति है शिवा। यही विष्णु में पालिनी शक्ति, ब्रह्मा में सृजन व शिव में संहार शक्ति, पृथ्वी में धारण शक्ति के रूप में विद्यमान रहती है।

शिवा नाम शिव के साथ उनके तादात्म्य व सायुज्य का बोधक है। उनकी गोद में विराजित होकर वह इतनी एकाकार हो जाती है कि दोनों अलग-अलग नहीं रह जाते हैं। शंकराचार्य जी ने कहा है कि शिव अपनी धवलता से शिवा को आच्छादित करने का प्रयास करते हैं, तो शिवा अपनी लालिमा से शिव पर भी छायी हुई है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

५४. स्वाधीनवल्लभा

जिसके आधीन उसके वल्लभ हैं। शक्तिमान् हमेशा शक्ति के आधीन रहता है, इसी प्रकार कामेश्वरी के आधीन कामेश्वर उनकी इच्छानुसार संसार का शासन चलाते हैं। परमेश्वरी भी अपने पति के पर्यविक्षण में उन्हीं के संकल्पानुसार संसार को प्रसूत करती हैं। दोनों का आपस में समान अनुराग है। भक्तों के लिये भी यह सुगम है। यह महाशक्ति पुरुष रूप में प्रकट होती है। "मुररिपु वराहस्य भवती''- वही त्रिपुरारी हैं, वो ही मुरारी हैं। श्रीकृष्ण-ब्रजवासी ब्रजभाषा बोलते हैं उस ब्रज बानी को वेद माना है। व्रजी में कहा है : "राधा तू बड़भागिनी कौन तपस्या कीन, तीन लोक तारन तरन सो तेरे आधीन। '' या "हमारें श्यामाजू कौ राज। जाके अधीन सदा ही सामरौ या व्रज कौ सरताज'' यहाँ स्वाधीन वल्लभा की भावना प्रकट करते हैं।

५५. सुमेरुश्रृंगमध्यस्था

यहाँ अब कुछ दार्शनिक विवेचन करते हुए कहा गया है कि सुमेरु पर्वत के मध्यस्थान में रहने वाली। यह पर्वत सबसे ऊँचा माना गया है, उसके शिखर पर विराजित है श्री माँ।

इसका प्रतिरूप श्रीचक्र में भी देखा जा सकता है। श्रीचक्र श्रीमाता के रूप माधुर्य का रेखाचित्र है और "यत्पिंडे तद्ब्रह्माण्डे'' का भी द्योतक है कि जो अणुरूप आत्म तत्त्व जीवात्मा में है, वही बृहत् आकाश या परमात्मा में है। यही श्रीमाता का शरीर है, जो श्रीचक्र की रेखाओं, परिरेखाओं, कोणों, वलयों, दलों और मंडलों में प्रतिनिहित होता है।

इसी में परमानन्द बिन्दु रूप में परमेश्वरी का अवस्थान दिखाया जाता है और यही वह मेरु श्रृंग अर्थात् मेरु पर्वत का शिखर है, जिसके मध्य श्री माँ विराजित है।

अब चूंकि जैसा ऊपर कहा है कि शरीर में भी श्रीचक्र है, तो यहां भी सुमेरु है। जिसमें माँ शिव के साथ रहती है। मानव शरीर में सिर/कपाल में सहस्रार कमल के बीच में गुरु अर्थात् शिव के वामांक में श्री माँ का निवास माना गया है।

५६. श्रीमन्नगरनायिका

जिस विलक्षण नगर को आपने नेतृत्व में बसाया है, ऐसा श्रीनगर। भक्तों के हृदय में निवास करती है, वही श्रीनगर। और सहज श्रीयन्त्र है श्रीमन्नगर। क्योंकि श्रीयंत्र ब्रह्माण्ड का द्योतक है, तो वह माँ इस सुन्दरतम

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ब्रह्माण्ड की नायिका है और यही श्रीयन्त्र मानव शरीर भी है। अतः इस दिव्यशरीर में रहने वाली इस नगर की नायिका इस पूरे शरीर व मन का संचालन करने वाली।

५७. चिन्तामणिगृहान्तस्था

चिन्तामणियों से बना जो गृह या घर है ऐसे निवास स्थान में रहने वाली। चिंतामणि का कार्य है कि जो मन में संकल्प उठे उसे शीघ्र पूरा कर दे। "चिन्तामणि गृह शोभा सागर, कोटिन रवि सो बन्यौ उजागर'' ऐसी दिव्य मणियों से जुड़ी हुई हैं, इनके भवन की दीवारें। ये दिव्य मणियां वस्तुतः वे मंत्र हैं, कि जिनके उच्चारण मात्र से भगवती प्रसन्न हो जाती हैं। वाणी और मन की निर्मलता व निश्चलता का पूर्ण सामंजस्य हो और दोनों अपने उद्‌गम स्थान की उपासना में अपने को उपकृत समझें तो तत्काल इन दोनों की अधिष्ठात्री देवी का साक्षात्कार हो जाता है।

५८. पंचब्रह्मासनस्थिता

संसार की सृष्टि से पूर्व जो सत्ता विद्यमान थी, वही देवी का सर्वोच्च प्रतिष्ठान है। वह संसार की सभी अवस्थितियों से ऊपर है। उसके द्वारा पैदा किये ब्रह्मा, विष्णु, महेश संसार की सृष्टि, पालन व संहार कर रहे हैं, देवी इनके स्थान के ऊपर हरि, रुद्र, द्रुहिण, ईश्वर तथा सदाशिव के पंचब्रह्मासन पर प्रतिष्ठित है मानव-शरीर में भी मूलाधार व स्वाधिष्ठान चक्रों के ऊपर/नाभि के पास ब्रह्मग्रंथि मानी गयी है इसके ऊपर मणिपूर और अनाहत चक्रों को पार कर ललाट के पास रुद्र ग्रंथि है। इससे ऊपर ईशान या प्रधान प्राण का स्थान और इससे भी ऊपर सदाशिव या सनातन सत्ता का स्थान है और सबसे ऊपर परमेश्वरी का चित्कला रूप में चिन्मयी माँ का चिरन्तन शुभनिवास है।

५९. महापद्माटवीसंस्था

"महापद्म'' सांसारिक कमलों से अलग हैं, ऐसे बड़े-बड़े कमलों के वन में है निवास। मानव शरीर में भी इन कमलों की परिकल्पना की गई है। इन कमलों में एक चार पंखुड़ी या दलों का है, दूसरा छः का और इसी प्रकार १०, १२, १६, २ तथा हजार दलों का भी है। ये शरीर के कुछ विशेष स्थानों पर हैं, वे स्थान मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा व ब्रह्मरन्ध्र के नाम से जाने गये हैं, शरीर में इनका स्थान क्रमशः गुदा, नाभि से नीचे, नाभि, हृदय, कण्ठ, ललाट (भौंह के मध्य) तथा कपाल में है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

श्रीमाता शिव सहित हजार दलों के कमल में निवास करती हैं। अनेकानेक प्रकार के असंख्य मनुष्य और इसी प्रकार असंख्य सुन्दर कमल इस महावन की शोभा बढ़ा रहे हैं।

६०. कदम्बवनवासिनी

न केवल कमल वरन कदम्ब के फूल भी इस वन की शोभा बढ़ा रहे हैं। कदम्ब में बहुत ही मधुर युक्त गंभीर सुगन्ध होती है। अनेक रंगों की छटा भी, परन्तु प्रायः श्वेत तथा गोल आकृति के ये पुष्प भगवती को बहुत ही प्रिय है (कदम्ब कुसुमप्रिया)। इन पुष्पों का माँ अपने कुण्डल के रूप में भी प्रयोग करती है। यह फूलबिजली की चमक या वज्रपात ध्वनि से चौंक कर खिल उठते हैं।

कदम्ब का वृक्ष व्रज में अधिक मिलता है या इसके कुछ समीपी स्थलों में भी। भगवती के पुरुषरूप श्रीकृष्ण को भी यह पुष्प अत्यन्त प्रिय है। सूरदास ने अपने पदों में अनेक स्थानों पर अपने काव्य में इसका वर्णन किया है। "कदमतर श्याम चरावत गैया"। श्रीमद्भागवत् में वर्णन आता है स्कन्ध १०अ०१६ श्लो०६ "कृष्णकदम्बमधिरुह्यततो अतितुंगम्।" इत्यादि।

६१. सुधासागरमध्यस्था

ऊपर के नाम में श्रीमाँ के निवास स्थान ही की चर्चा हो रही है। यह स्थान यह वन जहां स्थित है, वह है "सुधा-सागर के मध्य"। अमृत की एक बूंद से मरा हुआ अमर हो जाता है, परन्तु यहां तो अमृत का समुद्र लहरा रहा है।

तांत्रिकों में सहस्रदल कमल जो कि ब्रह्मरन्ध्र में है, को भी अमृतमय माना है "सहस्रदल पंकजे सकल शीतरश्मिप्रभं" इसकी वर्षा से साधक अमरत्व का आत्मज्ञान प्राप्त कर लेता है।

भगवान आदि शंकराचार्य ने भी माता के निवास का सौंदर्य लहरी में सुन्दर वर्णन किया है :"सुधासिंधोर्मध्ये सुरविटपवाटी परिवृते, मणिद्वीपे नीपोपवनवति चिंतामणि गृहे, शिवाकारे मंचे परमशिव पर्यंक निलयां, भजन्ति त्वां धन्याः कतिचन चिदानन्द लहरीं।

अमृत के समुद्र के मध्यम पारिजात के सुन्दर वनों से घिरा एक मणिमय द्वीप है, वहां कदम्ब के वृक्षों से घिरे चिन्तामणियों से बने इस चिदानन्द-सदन में शिवाकार शैय्या पर परमशिव के साथ परमानन्द का अनुभव करती भगवती का जो लोग ध्यान करते हैं वे धन्य हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

६२. कामाक्षी

कमनीय अतिसुन्दर हैं आँखें जिनकी। यह नाम भी रहस्यमय है। इसके "क'' में ब्रह्म "अ'' में विष्णु "म'' कार महेश्वर का वाचक हैं इनकी अक्ष अर्थात् नेत्र। अर्थात् माँ के तीन नेत्र हैं सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि। "खं वै नाभिं चन्द्रसूर्यो च नेत्रे।

माँ के स्वरूप का दर्शन सामान्य आँखों से नहीं हो सकता क्योंकि यह आत्मिक सौंदर्य है, जो तन, मन, वाणी व चिंतन से परे है। इसको वही देख सकता है, जिस पर उसकी कृपा-दृष्टि हो। जिधर वह चाहे उधर ही देखती है माँ, रहस्य कोई नहीं जानता। परन्तु जिसे देख ले उसको कामसिद्धि हो जाती है।

वस्तुतः यह नाम अनेक रहस्यों से परिपूर्ण है। तंत्र में बीजाक्षरों का मांत्रिक महत्त्व है। यह नाम भी ऐसे ही मंत्रों के संयोग से बना है।

६३. कामदायिनी

कामना देने वाली। दुर्गाकवच में भी कहा है "यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्'' जो भी कामना करते हैं, वह सभी पूर्ण करती है।

श्रीमद्‌भागवत् में भगवान विष्णु कहते है।-"अर्चिष्यन्ति मनुष्यास्त्वां सर्वकाम वरेश्वरीम्। धूपोपहार बलिभिः सर्वकाम वर प्रदाम्। १०/२/१०। उपनिषद में भी कहा है "यमेवैष वृणुते तेन लम्यः, तस्यैष आत्माविवृणुते तनूं स्वाम्।

६४. देवर्षिगणसंघातस्तूयमानात्मवैभवा

श्रीमाता का आत्म-वैभव देवगण तथा ऋषिगणों दोनों को अनुग्रहीत करने वाला है। ब्रह्मा, विष्णु शिवादिक तथा नारद, वशिष्ठ, अगस्त्य इत्यादि ऋषियों द्वारा जिनकी स्तुति की गई। जैसे कि रात्रिसूक्त में ब्रह्मा जी कहते हैं ": त्वं स्वाहा त्वं स्वधा, त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी हीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा। इत्यादि। यह भी एक षोडषाक्षरी प्रथम नाम है आगे तेईस और नाम भी षोडषाक्षरी ही हैं। ये माता के आत्मकथा का विश्लेषण हैं।

६५. भंडासुर वधोद्युक्तशक्तिसेनासमन्विता

भगवती की अमोघ व अपार शक्ति सो भंडासुर दैत्य को

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

नष्ट-भ्रष्ट कर देती है। यह भंडासुर पत्थर की तरह निष्क्रिय है, यदि वह कुछ गलत करता भी है, तो उसे ही सही समझता है, अन्न पर ही जीवन-यापन करता है। परन्तु अन्न से प्राण, मन और विज्ञान में उसको कोई रुचि नहीं है। वह पशुता में ही सुखानुभूति करता है। अपने शरीर को ही सब कुछ समझने वाला उस पर घमंड करने वाला यह असुर जिसके पास अपनी भी सेना है। परन्तु माता की सेना व शक्ति से सम्मुख उसे नतमस्तक होना पड़ता है।

६६. संपत्करीसमारूढसिंधुरव्रजसेविता

देवी की हाथियों की सेना का नेतृत्व उसकी संपत्करी नाम की शक्ति करती है, जो समरभूमि में जब आगे बढ़ती है, तब भंडासुर और उसके परिजन या सेना थर्राती है। सम्पत्करी संपदा का सूत्रपात करती है, और संसार में प्राणियों को मोह-निद्रा से जागृत करती है "हस्तिनाद प्रबोधिनी" श्रीसूक्त में कहा गया है। क्योंकि हाथी की आवाज गंभीर परिपूर्ण मानी गई है। संपत् अर्थ सम्यक् रूप से पाना या सही रूप में पाना। विपत् ठीक विपरीत। स्वयं में कोई सांसारिक वस्तु संपत् या विपत् नहीं है, अपितु जैसे जो देखता या अपनाता है, उसी में उसका भाव सम्पनन्ता या विपन्नता का आ जाता है।

६७. अश्वारूढाधिष्ठिताश्वकोटि-कोटिभिरावृता

उसकी सेना है अश्वसेना जिसमें "कर्म" की भावना की झलक है। अश्वारूढा नामक देवी शक्ति करोड़ों घोडों को साथ लेकर चलती है। जहाँ हाथी की चाल में गंभीरता व शालीनता है, वहीं घोड़ों की दौड़ में गतिशीलता और अदम्यता है। "अश्वपूर्वा रथमध्या" वेदों ने भी श्री माता के ऊर्जस्वल रूप का वर्णन किया है। जहाँ पहले ज्ञान हो, फिर कर्म किया जाये तो अभीष्ट दूर नहीं रहता।

तांत्रिक अश्वारूढ़ा देवी का प्रयोग किसी मनुष्य के कहीं चले जाने पर उसे लौटाने के लिये भी करते हैं। इसके आकर्षक मंत्र हैं और न्यास; ध्यान भी हैं।

६८. चक्रराजरथारूढसर्वायुधपरिष्कृता

उपर्युक्त दोनों सेनाओं में भगवती की तेजस्वी और ओजस्वी शक्तियां अपने-अपने अनुरूप रथों पर सवार समर भूमि में आगे बढ़ रही हैं। जबकि माता स्वयं जिस रथ पर आसीन है, वह है चक्रराज अर्थात् श्रीचक्र, जिसमें विजय को निश्चित रूप में प्रदान कराने वाले अमोघ अस्त्र-शस्त्र भरे पड़े हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

६९. गयचक्ररथारूढमन्त्रिणीपारसावता

श्रीचक्र के उत्तम पहियों की शालीनता का गुणगान करने वाली उसकी अनुचरी "मन्त्रिणी" के रथ का मेरू चक्र चल रहा है, जिसे गेय चक्र या संगीत चक्र अथवा ज्ञानचक्र कहते हैं, अपने मधुर स्वर में मंत्रिणी सत् व असत् का अन्तर भी स्पष्ट करती है। कहते हैं गेयचक्र के सहारे श्रीमाता के श्रीचक्र का साक्षात्कार हो जाता है। परन्तु यह गेय चक्र सबकी समझ से बाहर है और जिसकी निर्मल वाणी और निश्चल मन है, वे ही इसकी भूमिका में पवेश कर सकते हैं।

७०. किरिचक्ररथारूढादंडनाथापुरस्कृता

किरिचक्र पर आरूढ दंडनाथा या वाराही श्री माता के भक्तों की रक्षा करते हुए देवी के आगे-आगे रास्ता साफ करते हुए चलती है। दंडनाथा का यह किरिचक्र कर्म का गीत धर्म की रागिनी में सुनाता है। किरिचक्र कर्मचक्र है और गेय चक्र ज्ञानचक्र है। गेय चक्र पर आरूढ मंत्रिणी श्रीमाता की चारों और पहरा देती है। मनुष्य अपने आचरण अनुसार सौ या उससे अधिक वर्षों तक अपनी काया से आनंद पूर्वक जी सकता है, जैसा ईशोपनिषद् में आदेश है "कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत्-शतं समाः" इस रहस्य को किरिचक्र बताता है। किरि:किरण/रश्मि रूपी रथ पर विराजमान। किरि: वाराह रूपी रथ पर बैठी दंडधर: यमराज सेवित।

७१. ज्वालामालिनिकाक्षिप्तवह्निप्राकारमध्यगा

श्रीमाता अग्नि की ज्वाला मंडल के मध्य निवास करने वाली हैं। अग्नि के मध्य रहने का तात्पर्य आज्ञा चक्र यानी तीसरे नेत्र या भोंहों के मध्य के स्थान जिसमें ज्ञान की ज्वाला है उनमें रहने वाली अग्नि के समान पवित्र और उज्ज्वल। यह अन्तर्ज्योति माता की कृपा से ही मिलती है, यह जितनी उद्दीप्त होती है, उतनी ही भगवती की मनुष्य पर कृपा होती है। देवी कृपा और अन्तर्ज्योति एक दूसरे पर अन्योन्याश्रित हैं।

७२. भंडसैन्यवधोद्युक्तशक्तिविक्रमहर्षिता

भंडासुर की सेना को मारने के लिये उद्यत भगवती की नकुली आदि शक्तियों के समूल सेना को रणभूमि में देख कर माता प्रसन्न हो रही है। भंडासुर को मारने के लिये उसे स्वयं तो कुछ नहीं करना पड़ता उनकी शक्ति ही यह काम बड़े आसानी से कर देती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७३. नित्यापराक्रमाटोपनिरीक्षणसमुत्सुका

माता कैसे अपने अनन्त विस्तार से अपनी शक्ति का संग्रह करती है यह इस पंक्ति में बताया गया है। स्वयं अग्निवलय में रहकर सूर्य-चन्द्र से अपने पराक्रम को प्राप्त करती हैं। इनसे जो विभिन्न कलाओं का प्रार्दुभाव होता है जिसे अमावस्या, पड़वा (प्रतिपदा) द्वितीया तृतीया से पूर्णिमा तक सोलह कलाओं का प्राकट्य होता है। चन्द्रमा की कलाओं से मानव मस्तिष्क पर तथा सागर तरंगों पर प्रत्यक्ष प्रभाव देखा जा सकता है। इन कलाओं को नित्य कलाएं या नित्या की संज्ञा दी जाती है, क्योंकि ये निरन्तर चलती रहती हैं। ये नित्या: कामेश्वरी, भगमालिनी, नित्यक्लिन्ना, भेरुण्डा, वह्निवासिनी, महावज्रेश्वरी, शिवदूती, त्वरिता, कुलसुन्दरी, नित्या, नीलपताका, विजया, सर्वमंगला, ज्वालामालिनी, चित्रा ये १५ तिथि भगवती महाबलवती सेना की नायिका हैं। अपनी नित्याओं के पराक्रम से शत्रु भण्डासुर के सेना नायकों के वध को देखने को समुद्यत श्रीमाता।

नोट: देवी मान से संवत्-युग परिवृति- मास नाथ नित्यादि साधक पूजादि प्रत्येक तान्त्रिक इस परम्परा से संकल्प करते हैं।

७४. भंडपुत्र वधोद्युक्त बाला विक्रम नंदिता

श्री कामेश्वरी अपने बाला रूप से भंडासुर के मारे जाने पर आनन्दित हो रही है, ऊपर के नाम में जो भाव है, वह है, जब माता की समस्त सैन्य शक्ति अपना पराक्रम प्रदर्शित करती है, तो देवी बड़ी उत्सुकता से उनके रण कौशल का निरीक्षण करती है। श्रीमाता की लाडली पुत्री "बाला'' इस सामरिक साज सज्जा को देखकर रणभूमि में आ पहुंचती है और भंडासुर के तीसों पुत्रों आणवादि मलों को मार डालती है। अपनी पुत्री के इस अद्भुत कार्य को देख श्रीमाता फूली नहीं समाती। भंडासुर का प्राणहरण अज्ञान, अहंकार, अत्याचार के उन्मूलन का प्रतीक है। श्रीमाता की शक्ति आत्म-शक्ति है जोकि अविनश्वर है और भंड की शक्ति पार्थिव, सारहीन, मादक है, ये नश्वर हैं। इन पर विजय पा जाने पर आत्म सेना (शक्ति) के हौसले बढ़ जाते हैं।

७५. मंत्रिण्यंबाविरचितविषंगवधतोषिता

भंड की संतानों के नष्ट हो जाने पर उसके मित्र विषंग और विशुक्र आते हैं। विषंग यह निरीह प्राणी है, जो स्वयं को सब कुछ समझता है परन्तु आत्मा को नहीं पहचानता। सत्संग की कल्पना भी नहीं कर पाता। मनुष्य भी मात्र दो कारणों से स्वयं तक सीमित रहता है, वे हैं घोर स्वार्थ और विशुद्ध परमार्थ। विषयी को अपने शरीर की और लौकिक सुख के लिये

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

आर्थिक सम्पन्नता की चिन्ता रहती है, अतः उन्हें प्राप्त करने के लिये वह दिन-रात लगा रहता है। ऐसा मनुष्य विषंग या एकांत स्वार्थ वाला होता है, जबकि दूसरी ओर सभी संगतों का त्याग करने वाला योगी सांसारिक वासनाओं से दूर आत्म आनंद में लीन रहता है, इस आनंद में सारा संसार आनंदमय दिखाई देता है। अर्थात् विषंग का एक व्यक्ति तक सीमित रहने वाला क्षुद्र, अधूरा, आतंककारी, स्वार्थी और पार्थिव आनंद का निराकरण विषंग के वध से होता है जोकि श्रीमाता की मंत्रिणी शक्ति (देवी) करती है। विष हैं अंग जिसके, विषय - विष से संयम (मंत्रिणी) बचाती है।

७६. विशुक्रप्राणहरणवाराहीवीर्यनंदिता

विशुक्र विषंग का ही भाई है , यह निर्वीर्यता का प्रतीक है। शुक्र मानव शरीर में परमेश्वरी की वह परम ज्योति है, जो वरदान रूप में प्रत्येक प्राणी को सहज ही मिला है यह मनुष्य के शरीर में तेज, ओज और परम प्रकाश है। अब जो मनुष्य इसे मात्र विषय वासना का साधन समझ दुरुपयोग करने में लगा रहता है, वह सहज प्राप्त इस प्रकाश से प्राप्त होने वाली अन्य पारलौकिक कृपाओं से वंचित रहता है। इस विषय विशुक्र का प्राण हरण करती है "वाराही" शक्ति अर्थात् विशिष्टताओं से युक्त देवी, जो अलौकिक आनंद अक्षय आनंद को देने वाली अक्षय सुख प्रदान करने वाली है, वह विनाशोन्मुख विषय रूपी विशुक्र को नष्ट कर देती है, जैसे कि दुष्टों की संगत में पड़े सत्संग से वंचित विषंग को मननशील व्यक्तित्व वाली मंत्रिणी नष्ट करती है। और इस प्रकार मंत्रिणी और वाराही शक्ति विषंग और विशुक्र का संहार करती है। श्रीमाता इन्हें देख हर्षित हो रही हैं। विषंग विपरीत अंक से पैदा होता है - यही पाप पुरुष माना गया है, जिसे तांत्रिक "वाम कुक्षौविचिन्तयेत्" भूतशुद्धि के प्रसंग में मानते हैं।

७७. कामेश्वरमुखालोककल्पितश्रीगणेश्वरा

कामेश्वर के मुख देखने से गणेश जी को उत्पन्न करने वाली। अर्थात् जब भंडासुर व उसके तीसों पुत्र, दोनों मित्र या भाई विषंग और विशुक्र को बाला, मंत्रिणी और वाराही शक्तियों के द्वारा नष्ट किया जाता है और जब सारी विघ्न बाधाएं समाप्त होती हैं, तो परमेश्वरी इतनी प्रसन्न हो रही है और इन आनंद के इन क्षणों में परमानन्दमय पति के प्रसन्न और प्रफुल्ल मुख मंडल को एक बार देखती हैं तो सामने श्री गणेश का आविर्भाव हो जाता है।

ऐसा भी कहा है कि संग्राम के भीषण कांड में जो विघ्न

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
बाधाएं उत्पन्न हो रही थी, उनके पार करने के लिये श्रीमाता कामेश्वर के मुखमंडल से प्रेरणा पाकर श्री गणेश्वर या विघ्नेश्वर की सृष्टि करती है, जिसे वे दूर करते हैं।

श्री गणेश महेश्वरी के महासंकल्प ओर महेश्वर के मुखमंडल की आभा और रूप कल्पना से प्रकट हुए। गणेश और कुमार शिव-पार्वती की अतिविशिष्ट सन्तान हैं। अपने सुपुत्र की विघ्नहारिणी विशेषता को देख माता फूली नहीं समाती।

७८. महागणेशनिर्भिन्नविघ्नयंत्रप्रहर्षिता

परमेश्वरी के मार्ग में विघ्न-बाधाएं उत्पन्न करने वाले भंडासुर की सभी चेष्टाओं का निवारण उनके प्रिय पुत्र श्री गणेश सभी यंत्रवत् यातनाओं को नियंत्रित करने में समर्थ होते हैं। भंड के सभी विघ्नयंत्रों को नष्ट होते देखकर प्रसन्न होती है।

७९. भंडासुरेन्द्रनिर्मुक्तशस्त्रप्रत्यस्त्रवर्षिणी

भगवती की सेना में विघ्न डालने को "विघ्नयन्त्र'' नामक अस्त्र फैंकता है भंड, जिसे विघ्नेश्वर तुरन्त नष्ट कर देते हैं, साथ ही उनकी माता परमेश्वरी भंडासुर के प्रत्येक शस्त्र, जो कि भौतिक होते हैं, को अपने अमोघ अस्त्रों, जोकि मानसिक होते हैं, के द्वारा काट देती हैं, इस प्रकार वह उसे शस्त्र-विहीन करती हैं।

८०. करांगुलिनखोत्पन्ननारायणदशाकृतिः

श्रीमाता की सृष्टि भी बहुत विलक्षण है। उनके हाथ की उंगलियों के नाखूनों से नारायण के दस रूप प्रकट होते हैं। भगवती के अंगों से उत्पन्न होने वाले २४ अवतार नारायण के रूप में हैं। इनमें प्रमुख दस अंगुलियों के नाखूनों से उत्पन्न हुए : राम, कृष्ण, वाराह, नृसिंह, परशुराम, वामन, बुद्ध, मत्स्य, कच्छप, व कल्कि ये भगवती के अंशावतार होने से शाक्तों के पूज्य हैं।

संसार के सभी प्राणी पार्थिव दृष्टि से तो पशुओं के समान ही हैं, लेकिन आध्यात्मिक दृष्टि से मात्र मानव में ही पशुपतिनाथ विराजमान हैं, जिनकी प्रेरणा उसमें चैतन्य उसे विचारने को मजबूर करता है, जिससे वह अपने को पहचान पाता है और जब मृण्मय मानव को अपनी हिरण्मय चेतना का अनुभव होने लगता है, तब सारा अज्ञान दूर हो जाता है और सच्चे ज्ञान का अनुभव होता है। इसलिये मानव शरीर भी देवी का मंदिर है और इसके
CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अंगों में देवी की आभा बसी हुई है, अतः आध्यात्मिक दृष्टि से मनुष्य सर्वोपरि है संसार सृष्टि में। मनुष्य के हाथ को भी परम पवित्र माना गया है, जिससे परमात्मा की पूजा होती है। सांसारिक व असांसारिक सभी कार्यों का निष्पादन भी इन्हीं हाथों से होता है। एक स्मृति के अनुसार "कराग्रे वसते लक्ष्मी, करमध्ये सरस्वतीं, करमूले तु शर्वाणी, प्रभाते कर दर्शनम्'' अर्थात् हाथ के अग्र भाग में लक्ष्मी, मध्य में सरस्वती, मूल भाग में महेश्वरी विराजमान रहती हैं। अतः प्रांतः सोकर उठते ही अपने हाथ देखने को शुभ माना गया है। मनुष्य के हाथों में पशुओं के हाथों से यही विशिष्टता है। मनुष्य सोच-समझकर काम निष्पादित करता है जबकि पशु स्वभाववश होकर।

परमेश्वरी का वरद हस्त इसी प्रकार लोकोत्तर भव्यता और दिव्यता से परिपूर्ण है। इसलिये उनके हाथों की उंगलियों के नाखूनों से समस्त चराचर सृष्टि का प्रादुर्भाव होता है।

८१. महापाशुपतास्त्राग्नि-निर्दग्धासुरसैनिका

महान पाशुपत अस्त्र के तेज से भंडासुर की समस्त सेना भस्म हो जाती है।

८२. कामेश्वरास्त्रनिर्दग्धसभाण्डासुरशून्यका

कामेश्वर नाम के अमोघ अस्त्र से भण्डासुर के सहित उसकी पूरी सेना जो कि शून्यक नाम की है, को जला कर निःशेष कर देने वाली श्रीमाता।

शरीर के बहुत से नाम हैं गात, वपुः, देह। इनमें एक "भाण्ड'' भी है। एक लोकोक्ति में अकर्मण्य को "खाने का भाण्ड'' (बर्तन) कहते हैं, शरीर पाप, पुण्य का भी भांड है, जिसको मालूम नहीं कि ये केवल अन्नादि भरने ओर निकालने की मशीन नहीं हैं। उसके इस अज्ञान रूपी अन्धकार को ही भण्डासुर कहते हैं, इसका नाश "विद्युद्दाम समप्रभाम्'' बिजली के प्रकाश से जिस प्रकार अंधेरा नष्ट हो जाता है। जिसके हृदय में अनन्त प्रकाशमयी श्रीमाता का निवास है उसके पास भंडासुर की आसुरी शक्तियां नहीं आ सकती।

भंडासुर जिस नगरी में रहता है, वह है "शून्यक'' अर्थात् जिसका समस्त वैभव शून्य के बराबर है, उसमें तत्त्व की कोई बात ही नहीं। सांसारिक सभी वैभव क्षणभंगुर हैं, मानव शरीर भी। कोई भी वस्तु मानव को अमरत्व प्रदान नहीं कर सकती। अमरत्व प्रदान करने वाला है "आत्मज्ञान'' "ब्रह्म भावना'' "अन्दर का आनन्द'' ये सभी सांसारिक सुख-समृद्धि से अलग हैं। संसार की सारी सम्पत्ति शून्य और सर्वात्मा की सर्वव्यापक सत्ता ही संसार

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
का वास्तविक सार है, जो स्वतः पूर्ण है। अतः संसार की सारहीनता को शून्यता को समझने के लिये कामेश्वर की कृपा की आवश्यकता है।

८३. ब्रह्मोपेन्द्रमहेन्द्रादिदेवसंस्तुतवैभवा

ब्रह्म, उपेन्द्र (भगवान विष्णु) और महेन्द्र इत्यादि देवता श्रीमाता के वैभव की प्रशंसा करते हैं।

चतुर्मुख ब्रह्मा चारों वेदों द्वारा स्तुति करते हैं। दुर्गा सप्तशती में रात्रिसूक्त में ब्रह्मा जी बोले : त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं ह्री... तथा अर्गलास्तोत्र में कृष्णेन संस्तुते देवि...। श्रीमाता के आत्म वैभव के महत्त्व को पहचान परम पुरुष व परा-प्रकृति की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हैं।

८४. हरनेत्राग्निसंदग्ध कामसंजीवनौषधिः

हर (शिव) के नेत्र की अग्नि ने काम को भस्म कर दिया तब भगवती ने उसे संजीवनी औषधि दी।

यह हरनेत्राग्नि प्रत्येक मनुष्य में विद्यमान है। प्रत्यक्ष दिखने वाली दो आंखों के अलावा मस्तक में तीसरी आंख है, जो अन्दर की ओर खुलती है और जब यह खुलती है तब अज्ञान आवरण दूर हो जाता है तथा ज्ञानी जीवन्मुक्त हो जाता है।

सौन्दर्य लहरी में कहा है : "जगदिदमनंगो विजयते" अर्थात् बिना शरीर ही समस्त जगत को जीत रखा है। किन्तु अपनी विजय होने से हुए अभिमान को भगवान श्रीकृष्ण ने उसके गर्व को नष्ट किया था रासलीला प्रसंग में।

८५. श्रीमद्वाग्भवकूटैकस्वरूपमुखपंकजा

श्रीमाता के कमल के समान कोमल मुख मंडल से निकले शब्दों के प्रत्येक अक्षर में अमृत बरसाने वाली आकर्षक वाणी निकलती है।

भगवती का मन्त्रमय शरीर है, जिसे तीन कूटों में विभक्त किया ज़ाता है, यह प्रथम कूट है जोकि भगवती के मुखमंडल के बारे में। तान्त्रिक दृष्टि से इसका बहुत महत्त्व है। यह ब्रह्म विद्या श्रीविद्या का एक भाग है ताकि इसके ग्रहण करने के पात्र व्यक्ति को ही गुरु द्वारा गुप्त रूप से कान में दिया जाता है, तभी फलीभूत होता है।

संसार प्रेममय है। श्रीमाता प्रत्येक प्राणी में प्रेम का प्राकृतिक बीज बोती है, जिसके द्वारा सांसारिक प्राणी दैहिक और पार्थिव आनंद का सेवन करते हैं, जिसे अलौकिक रूप में अनुभव करने पर परमानन्द की प्राप्ति होती

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

है। काम वासना मनुष्य को पशुवत बना देती है और देवतुल्य भी। प्रेम की विभिन्न भूमिकाओं को माता अपने विभिन्न रूपों में प्रकट करती है। पार्थिव या स्थूल रूप से देखने पर शारीरिक सौंदर्य आनंद का आधार दिखता है परन्तु इसी क्षणभंगुर देह को सूक्ष्म रूप से देखने पर अस्थि, चर्म, रक्त, मांसादि से बना हुआ पुतला है, परन्तु इसी साररहीन देह के पीछे परम रमणीयता का बोध होता है। रूप व पाप में सनातन संबंध माना गया है, पाप जिसका भंडासुर के रूप में परिहार करने पर रूप की दिव्यता सामने आती है, इसी दिव्यता का प्रतीकात्मक वर्णन मिलता है, इन तीन कूटों में। प्रथम में मुख मंडल, जिसका वर्णन सांसारिक मनुष्य के आकर्षक मुख से मीठे-मीठे शब्द निकलें, वह हृदय को कितने अमृतमय जान पड़ते हैं और इन मीठी बातों के बीच यदि मधु-मुस्कान भी बिखरती हो, तो कितनी मादक मोहक आभासित होती है। श्रीमाता का सौंदर्य तो "महालावण्य शेवधिं" की महत्तम सीमा है।

८६. कण्ठाधःकटिपर्यन्तमध्यकूटस्वरूपिणी

कंठ से कमर तक भगवती के शरीर को मध्य कूट कहा गया है। यह मुख के समान खुला न होकर प्रायः ढका हुआ है। प्रथम कूट में शरीर के नौ द्वारों में से सात द्वार खुलते हैं परन्तु मध्यकूट में एक भी द्वार नहीं है, जबकि सभी नौ द्वारों की संचालन प्रक्रिया इसी कूट से प्रारंभ होती है। अर्थात् मुख से निकले शब्द नाभि से, मुख पर प्रसन्नता आदि मुद्रा आँख में छलकती है, वह हृदय से, आदि। सम्पूर्ण शरीर के स्वास्थ्य की चाबी इसी कूट के अन्दर है।

८७. शक्तिकूटैकतापन्नकट्यधोभागधारिणी

कमर से नीचे का भाग शक्तिकूट तीसरे कूट से तात्पर्य है। यह एक मंत्रमय निधि है। शक्ति के प्रमुख केन्द्र इस मूलाधार में ही शक्ति-स्वरूपिणी का प्रमुख निवास है। यह शक्ति किसी मनुष्य में जागृत और किसी में सुप्त रहती है। शक्ति जागती है तो मनुष्य की चेतना विकासोन्मुख हो जाती है। मूलाधार में कुण्डलिनी कमर से नीचे होती है, जो जागृत होकर कमर के स्वाधिष्ठान चक्र द्वारा होती हुई नाभि के मणिपूर चक्र में पहुंचती है, जो आगे हृदय स्थित अनाहत चक्र फिर कंठ के विशुद्ध चक्र से होती ललाट में आज्ञाचक्र में पहुंचती है और वहां से कपाल में ब्रह्मरन्ध्र के सहस्रार चक्र विराजित आनंदमयी माँ के चरणों से अमृत निकलता है, जो स्वयं को अमृत से आप्लावित करने के बाद उसके प्रसाद से शरीर के प्रत्येक अंग को रसाप्लावित कर देती है। इसलिये शक्ति-कूट को पराशक्ति का प्रधान स्रोत मानते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

८८ मूलमंत्रात्मिका

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मूलमन्त्र ही श्रीमाता की आत्मा है और यही श्रीविद्या का स्वरूप है।

उपर्युक्त तीन कूट अलग-अलग होते हुए भी एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। प्रत्येक प्राणी की शारीरिक संरचना में भी यह कूट अलग दिखाई देते हैं। जिस प्रकार तीनों कूटों का समेकित स्वरूप शरीर कहलाता है, वैसे ही कूटों का स्वरूप मंत्र कहलाता है। (मुख, कंठ से कमर के अंग तथा कमर से नीचे के अंग मिलकर देह कहलाते हैं)। यह शरीर ही आत्मा का आनंदनिलय है, इसी में भगवती का निवास है परन्तु साक्षात्कार करने के लिये इस मनुष्य देह की सर्वप्रथम आवश्यकता है। इस शरीर के वाग्भव कूट से निकलने वाले शब्द परमेश्वरी के वाग्विलास को चित्रित करने वाला मंत्र है। शरीर का चाल-चलन ही उसकी देवी का प्रतिनिधित्व करने वाला स्वतन्त्र तंत्र है। अतः भगवती का स्थूल सौंदर्य, सूक्ष्म सौंदर्य, यांत्रिकी स्वरूप, मांत्रिक महत्त्व और तांत्रिक विधान इसी मनुष्य शरीर पर आधारित है। इसलिये उपनिषदों में बार-बार यह उपदेश है कि जब तक यह शरीर हमारे साथ है जल्द से जल्द इस शरीर के भीतर के अशरीरी, अविनश्वर व अनिर्वचनीय आनंदमयी लीला का हृदयंगम करना आवश्यक है।

जैसे कि प्रत्येक मनुष्य की बोली व उसका ढंग अलग होता है, देवताओं का भी अलग मंत्र होता है, क्योंकि श्रीमाता सब देवों की जननी है, इनका मंत्र मूलमंत्र है।

८९. मूलकूटत्रयकलेवरा

कूट त्रय, प्रमुख तीन कूट होते हैं, जो मानव शरीर में होते हैं, प्रत्येक प्राणी में भी। परन्तु श्रीमाता के दिव्य शरीर के जो तीन प्रधान कूट हैं, उन्हें मूल-कूटत्रय माना गया है। देवी का दिव्य शरीर वह मूल बिन्दु है, जिसका बिंब या प्रतिबिंब प्रत्येक प्राणी में दिखता है, प्राणी प्रतिनिधि रूप है, उसे वही करना होता है, जिसे वह करना चाहती है यथा हम तभी देखते हैं जब देवी की दृष्टि उसके पीछे हो।

कूटत्रय का मूल भी शारीरिक मानसिक व आध्यात्मिक है, स्थूल शरीर, मांत्रिक महत्त्व मानसिक तथा अखंड आनंद आध्यात्मिक। तीनों रूपों में देवी का "मूल कूटत्रय" आधार है। अब सभी मंत्रों के तीन कूट होते हैं। मंत्र राज गायत्री, बाला, पंचदशी, श्रीविद्या सभी में तीन कूट हैं। देवी का जो दिव्य शरीर है, वह चराचर के "कूटत्रय" का मूल है, अतः वह 'मूल कूटत्रय कलेवरा' है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

९०. कुलामृतैकरसिका

कुल अर्थात् शरीर, उसमें अमृत तत्व अर्थात् ललाट और कपाल के मध्य सहस्रदल कमल है उसमें आनंद का अमृत सदा लहराता रहता है। इस अमृत रस का रसास्वादन करने व अपनी कृपा से कराने वाली श्रीमाता।

पाँच तत्त्व से बने इस क्षणभंगुर शरीर में जो अमृत है वह इस शरीर के भस्म होने पर भी अपना चित्प्रकाश फैलाता रहता है, इस अमरत्व और आनंदतत्व का आस्वादन परमेश्वरी की कृपा से ही संभव है। साधक यह रसास्वादन श्रीमाता की कृपा से कुण्डलिनी जागृत करके इसका रसास्वादन प्राप्त करता है, जिसके पश्चात् वह पूर्णता को प्राप्त हो जाता है और फिर उसे कुछ इच्छा नहीं रहती।

९१. कुलसंकेतपालिनी

"कुल'' के संकेतों का पालन करने और कराने वाली। अब कुल का अर्थ पितृकुल व गुरुकुल भी है तथा जैसा ऊपर बताया "शरीर'' भी है। "प्राणी मात्र का शरीर'' जब उसकी ही संरचना है, तो उसकी रक्षा करने या उसके नियमों का पालन करने या कराने का उत्तरदायित्व भी उसी पर है। अत: मनुष्य के शरीर में मूलाधार, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा, चक्रादिकों में देवी के विभिन्न रूप विद्यमान हैं, जोकि साकिनी, काकिनी, लाकिनी, राकिनी, डाकिनी या याकिनी आदि के रूप में हैं। उनके नियमों व संकेतों का पालन भी स्वयं करती है।

दूसरी और जैसे पिता, पितामह, प्रपितामह ये पितृकुल हैं और गुरु, परमगुरु, परमेष्ठीगुरु गुरुकुल है इनके संकेतों का पालन।

९२. कुलांगना

कुल को पवित्र बनाये रखने वाली कुलवधू। कुल की अंगना अर्थात् कुल के अन्दर रहने वाली। परमेश्वरी भी कुल (शरीर) को छोड़ कर कहीं नहीं जाती, जब तक प्राण रहते हैं शरीर में वह वास करती है वह उस शरीर की स्वामिनी हैं।

कुलवान् स्त्री लज्जावती होती है और स्वयं को छिपाकर रखती है, इसी प्रकार भगवती मन्त्रमय शरीर की है जोकि गुप्त रहती है। "षटकर्णो भिद्यते मन्त्र'' यानी यदि कोई तीसरा सुनता है तो मंत्र निष्फल हो जाता है।

मानसेभ्य: पठेत्स्तोत्रं वचसा वा मनुं जपेत्। उभयं निष्फलं यान्ति भिन्नभाण्डं जलं यथा। अर्थात् मन से पाठ करना, वाणी से जोर से उच्चारण

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

करके जप करना ऐसे हैं जैसे फूटे बर्तन में पानी।

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

९३. कुलान्तस्था

कुल के अन्तस में स्थित। जैसा ऊपर लिखा है कुल के अन्तर्गत रहने वाली कुल की मर्यादा का पालन करने वाली कुल को पवित्र बनाए रखने का कर्त्तव्य निर्वाह करती है। कुल को अपने में विलीन कर लेने वाली।

९४. कौलिनी

कुलवती (कुटुम्बिनी) कुल अर्थात् सहस्रदल कमल।

भगवती के पास पहुचँने वाले दो प्रशस्त मार्ग हैं, जो परम्परागत भी हैं- एक है कौल मार्ग तथा दूसरा है समय मार्ग। कौल मार्ग कुल में रहते हुए कुलांगना के सहयोग से कैवल्य पद को प्राप्त करने का कर्मयोग है, जबकि समय मार्ग या समयाचार ज्ञान और ध्यान के माध्यम से संयम के सहारे सहस्रदल कमल में निवास करने वाली सरसिज निलया देवी का साक्षात्कार करने का संयत और संतुलित साधुमार्ग है। कौल मार्ग को वामाचार भी कहा जाता है तथा समयाचार को दक्षिणाचार। कौल मार्ग में कामवासना का सेवन वर्जित नहीं है, बल्कि मांस, मदिरा, मुद्रा, मैथुन व मत्स्य का सेवन विहित है। परन्तु इसमें अत्यधिक सन्तुलन की आवश्यकता होती है। इसमें गृहस्थ जीवनयापन करते हुए काम को यथेष्ट सेवन करते हुए भी परमेश्वरी का सान्निध्य का अनुभव किया जाता है, जीव मात्र उसी के तेजपुंज का प्रतिरूप है, तो स्त्री भी उसी की दिव्यता का प्रतिरूप है तथा उसकीं दिव्यता का प्रतिरूप है तथा उसकी सश्रीकता को स्वस्थ दृष्टिकोण से समझने और उसकी दिव्यता को आत्मसात करने से श्रीमाता के इस प्रतिनिधि के द्वारा देवी की दिव्यता का बोध होने लगता है। इसके विपरीत साधारणतः मनुष्य नारी के बाह्य सौंदर्य और उसके वासनामय व्यक्तित्व के वशीभूत होकर बजाय कामाक्षी की कृपा प्राप्त किये, कामिनी के धिक्कार का भागी बनकर रह जाता है और इस प्रकार योग भी भोग में परिवर्तित हो जाता है और साधक अपने ही मार्ग का रोड़ा बन कर रह जाता है।

समयाचार में इस प्रकार का कोई खतरा नहीं है उसमें यम, नियम, संयम, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि आदि प्रशस्त साधनों से समयमार्गी आगे बढ़ता रहता है। शिव का सायुज्य ही साधक का लक्ष्य है। शिव और शक्ति का सामरस्य ही इस साधना का सार है। साधक और साध्य, आराधक और आराध्य, जीव और ब्रह्म, प्रकृति और पुरुष तथा तत् और त्वम् का एकाकार होना ही समयाचार की संविदा हैं। संविदा का

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दूसरा नाम समय है, जिसे आचरण में लाना ही साधन। का रहस्य है।

जैसे एक गृहिणी परिवार की मर्यादा का पालन करते हुए घर में रहती है, उस प्रकार कौलिनी देवी कुलांतस्था होकर कुलांगना का कर्त्तव्य निर्वाह करती रहती है। जब कोई कुनवा वाली अपने परिवार को देखती है, तो उससे प्रसन्न होती है, अपने बड़े कुल को देखकर सुखी होती है, इसलिये कौलिनी कहा गया है।

९५. कुलयोगिनी

कुलयोग योग क्रिया है, कुल चतुर्दल पर विराजमान (कुण्डलिनी) योग के द्वारा सहस्रार में जाना योग है।

कुल में कोई वैषम्य या वैमनस्य की भावना पैदा न हो, इसका कौलिनी ध्यान रखती है। शरीर में प्रत्येक अंग का अपना महत्त्व होता है और सर्वत्र प्राणशक्ति का संचार होता रहता है इस प्रकार इस शरीर रूपी समुदाय या कुल में पारम्परिक सहयोगी को सुनिश्चित करने वाली साध्वी गृहणी को कुल-योगिनी कहा गया है।

९६. अकुला

वह कुल में रहते हुए भी कुल पर निर्भर नहीं है और कुल से स्वतंत्र भी रह सकती है। दूसरी यह कि वह सबको अपने में लीन कर लेती है, तब वह बिना कुल की "अकुला'' होती है- "एकोऽहं''।

९७. समयान्तस्था

समय (काल) या हर समय रहने वाली। काल के अन्त में जिसकी स्थिति है, समय शिव का भी नाम है। शिव की अन्तःस्थल में रहने वाली।

९८. समयाचारतत्परा

कुल की मर्यादा का पालन करना परमेश्वरी को प्रिय है। समयाचार की संयत साधना भी भगवती को प्रिय है। संयत भोगी जो देवी भावना से आचरण करता है वह भोगी भी योगी है और असंयत योगी भी भोगी है। यह योग और भोग का संतुलित सामंजस्य ही जीवन-साधना का सात्विक लक्ष्य है।

समयाचार को रहस्यमय भी कहा जाता है जो कि गुरु द्वारा ही जाना जाता है (गुरुमखैक वेद्य समयाचार) समयाचार समय के अनुसार आचार भी कहा जा सकता है, जैसे सुबह प्रातः-सन्ध्या, दोपहर, मध्याह्न-संध्या, सायं-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation, Delhi and eGangotri.
संध्या तथा तुरीय रात्रि-संध्या। इसी प्रकार पूजन का भी अलग-अलग समय होता है।

९९.मूलाधारैकनिलया

मूलाधार में रहने वाली। मूलाधार लिंग व गुदा के मध्य का स्थान उसमें चार दल का कमल है जिसके मध्य "अ" "क" "थ" आदि त्रिकोण हैं, उस पर तेज प्रकाश विद्यमान है, वही महान शक्ति है, जोकि मूलाधार में ही आनन्दानुभव करती है।

वस्तुतः मूलाधार, शक्तिकूट के बारे में बहुत कुछ लिखा जा सकता है परन्तु वह भी शायद पूर्ण नहीं होगा। इसका प्रयोग भी उसी प्रकार इतना कठिन और दुःसाध्य है। "श्रीमद्वाग्भव कूटैक स्वरूप मुखपंकजा" से "समयाचार तत्परा" तक के चौदह नाम मुख से मूलाधार तक की स्थितिज ऊर्जा का वर्णन करते हैं तो उपरोक्त नाम "मूलाधारैक निलया" से "विसतंतु तनीयसी" तक के नाम मूलाधार से सहस्रार तक मूलशक्ति की गतिशीलता व उससे उत्पन्न ऊर्जा का वर्णन प्रस्तुत करते हैं। प्राणशक्ति मानव शरीर के भीतर या बाहर, कभी समय सीमा के अन्दर कभी बाहर, तथा कभी स्थूल व कभी सूक्ष्म रूप में साधकों के मन के नेत्रों के सम्मुख आती है।

मूलाधार मेरुदंड यानी रीढ़ की हड्डी के सबसे नीचे के हिस्से में है। यहीं पर पराशक्ति का शक्तिकूट भी बसा हुआ है। यहीं भगवती का स्थायी निवास है।

यह वायु और उपस्थ के मध्य चार दलों का कमल होता है।

योगीजन भगवती त्रिपुरसुन्दरी को कुण्डलिनी के रूप में देखते हैं, जो यहीं रहती है। भगवान् शंकराचार्य ने कहा है-

"महीं मूलाधारे कमपि मणिपूरे हुतवहं, स्थितं स्वाधिष्ठाने हृदि मरुतमाकाशमुपरि। मनोऽपि भ्रूमध्ये सकलमपि भित्वा कुलपथं, सहस्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरते। अर्थात् हे कुण्डलिनीरूपे भगवती ! तुम मूलाधार में पृथ्वीतत्व, मणिपूर में जलतत्व, स्वाधिष्ठान में अग्नितत्व, अनाहत में वायुतत्व, विशुद्धि में आकाशतत्व, आज्ञा में मनस्तत्व को पार करके सहस्रार में अपने पति परमशिव के साथ एकान्त में विहार करती हो। मीरा भी इसी का संकेत अपने पदों में करती हैं: हेरी मैं तो प्रेम दीवानी मेरा दरद न जाने कोय। शूली ऊपर सेज पिया की किस विध मिलना होय, गगन-मंडल पर सेज पिया की किस विध सोना होय।

इसका जो चार दलों का कमल है रक्त वर्ण का है और प्रत्येक दल पर क्रमशः वँ, शँ, षँ, सँ अक्षरों की स्थिति मानी गई है। इसका यन्त्र

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
पृथ्वीतत्व का द्योतक है और चतुष्कोण है यंत्र का रंग पीत है, बीज लॅं हैं बीज का वाहन ऐरावत हाथी है। यंत्र के मध्य में स्वयम्भू लिंग हैं, जिसके चारों और सर्पाकार साढ़े तीन फेरे में लिपटी हुई अपनी पूँछ को अपने मुख में दबाये हुए सुप्त कुण्डलिनी-शक्ति विराजमान है। यह यौगिक क्रियाओं द्वारा जाग्रत होकर विद्युत शक्ति से मेरुदण्ड के भीतर ब्रह्मनाडी में प्रविष्ट होकर ऊपर की ओर चलती है। यह शक्ति जिसे प्राणशक्ति और शास्त्रानुसार 'देवी'' कुण्डलिनी कहागया है। जब तक बालक मातृगर्भ में होता है, उसके यह जागृत होती है तथा उसके पृथ्वी पर आते ही निद्रित हो जाती है।

ज्ञेया शक्तिरियं विष्णोर्निर्भया स्वर्णभास्वरा।
सत्वं रजस्तमश्चेति गुणत्रय प्रसूतिका।।

यह कुण्डलिनी शक्ति ही परमात्मा की व्यापक शक्ति है। यह भयरहित तथा सुवर्ण के तुल्य दीप्तमती है तथा सत्व, रज, तमोगुणों की प्रसूति है।

हठयोगदीपिका में कहा गया है:-
कन्दोर्ध्वं कुण्डलीशक्तिः सुप्ता मोक्षाय योगिनाम्।
बन्धनाय च मूढानां यस्तां वेत्ति स योगवित्।।

कन्द के ऊपरी भाग में कुण्डलिनी-शक्ति शयन कर रही है। जो योगी इसका उत्थापन करता है, वह मोक्ष प्राप्त करता है। जो कुण्डलिनी-शक्ति को जगाने की युक्ति जानता है, वही योग को यथार्थतः जानता है। अतः जो पुरुष प्राण को दशमद्वार (सहस्रार) में ले जाना चाहता है, उसे उचित है कि वह गुरु की सन्निधि में एकाग्रचित्त होकर युक्ति से उस शक्ति को जाग्रत करे। इस शक्ति की जागृति हेतु साधक को अनुभवी सद्गुरु से जागरण की कुंजी प्राप्त करनी चाहिए। मात्र ग्रन्थों पर निर्भर नहीं रहना चाहिए, अन्यथा अनर्थ की संभावना है।

यह स्थान जहाँ मूल शक्ति का चिर - निवास है, मूलाधार कहलाता है, कमर से ऊपर के हिस्से को सुदृढ आधार यही मूलाधार कहलाता है, क्रियाओं की दृष्टि से भी यहीं से सर्जन और यहीं से विसर्जन होता है। समस्त संसार की सृष्टि का भी स्थान यही है, तो इस सृष्टि के पीछे छिपी हुई परमेश्वरी की परमसत्ता का साक्षात्कार कराने वाली दृष्टि भी इसी की आराधना से प्राप्त होती है। इसके विपरीत शारीरिक मल, दुर्गन्ध व मलिनता को निष्कासित करने वाला स्थान भी यही है, जिससे निर्मल आनन्द की अनुभूति होती है। यहीं यह विचित्र "शक्तिकूट'' है, जो दैहिक वासना और दैविक उपासना दोनों का अद्‌भुत संगम प्रस्तुत करता है। मानव शरीर का यही मार्मिक अंग लौकिक वासना के कामुक क्षणिक संभोग का उत्कट आनंद प्रदान भी

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

करता है और अलौकिक आनंद के अनन्य आराधक हो आत्मा और मन के अभिन्न संयोग की अपार्थिव अनुभूति भी कराता है। इस प्रकार यह दो मार्गों का संगमस्थल है, जिनमें से एक ऊपर की ओर परम श्रेय के भवन में पर्यवसित होता है और दूसरा नीचे की तरफ चलकर पार्थिव सुख के गर्त में परिणित होता है। लौकिक आनंद क्षणिक, क्षण-भंगुर, प्रत्यक्ष, सर्व-सुलभ साध्य होता है, जबकि अलौकिक आनंद अखंड, अप्रत्यक्ष, मानसिक व गहरी साधना के पश्चात प्राप्य, बहुत कम लोगों को प्राप्त हो सकता है, जन-सामान्य के लिये अज्ञात होता है तथा ज्ञात होने पर भी इसकी उलझनों से बचना चाहते हैं। इसलिये जब प्रेय व श्रेय के मध्य जब संघर्ष होता है तो मेधावी ज्ञानी मनुष्य प्रेय का परिचय मात्र पाते ही अंत में श्रेय को अंगीकार कर लेता है। यह देवी की अनुकंपा से प्राप्त होता है। वस्तुतः इन्द्रिय-सेवन के तात्कालिक विषय-सुख से शारीरिक तेज नष्ट होता है, जबकि आत्मा और मन के संयोग के मिलने से जो आन्तरिक आनन्द मिलता है, वह शरीर के समस्त तेज को ओज में बदलकर शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक विकास का रास्ता ही खोल देता है।

इसकी तरह ही संसार भी श्रेय और प्रेय का संगम स्थल है, इसीलिये दोनों रास्ते खुले हैं जो जिसे पसंद करे वहाँ जा सकता है। परन्तु श्रेय बहुत साधना के पश्चात् मिलने वाला आत्मिक आनंद है, जो सर्व-सुलभ होते हुए भी दुर्लभ और दुर्गम है परन्तु सुख का यही मात्र मार्ग है। किसी भी दृष्टि से देखें तो यह मूलाधार ही लौकिक और अलौकिक अभियान का मूल आधार सिद्ध होता है। जब श्रीमाता कीं अनुकंपा से लौकिक और अलौकिक सुख की अलझन सुलझ जाती है, तो कुंडलिनी की नींद खुल जाती है। और एक बार इसकी नींद खुलने पर साधक का सपना टूट जाता है और वह अपने सच्चे स्वरूप को पहचानने लगता है। इसी को योगशास्त्र में "गाँठ" का खुलना कहा जाता है।

१००. ब्रह्मग्रंथिविभेदिनी

एक बार कुंडलिनी का जागरण हो जाता है तो वह बहुत जल्दी-जल्दी ऊपर की ओर बढ़ती है। यह ब्रह्मग्रन्थि का भेदन करने वाली है। अर्थात् ब्रह्म के और जीव के बीच में जो गाँठ है, उस प्रपंच रूपी गाँठ को भेदकर ब्रह्म का साक्षात्कार करती है।

मूलाधार से कुण्डलिनी जब चलती है तो उसके मार्ग में स्वाधिष्ठान में ब्रह्मग्रन्थि आती है। वह महाशक्ति कुण्डलिनी उसे बेधकर आगे बढ़ती है फिर दूसरी और तीसरी ग्रंथि का विभेदन करती है, जिसका आगे वर्णन किया जाएगा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मुमुक्षु साधक के हितार्थ एक अनुभवसिद्ध प्रणाली का संक्षेप में निम्नलिखित प्रकार से वर्णन किया जा सकता है:-

कुंडलिनी जागरण करने वाले साधक का नेति, धोति, बस्ति आदि क्रियाओं द्वारा अपने घट अर्थात् देह की शुद्धि कर लेनी चाहिए तत्पश्चात् अष्ट प्रकार के प्राणयाम की शिक्षा लेनी चाहिए। हालाँकि सभी प्राणायाम इस षट्चक्रभेदन में आवश्यक नहीं, तथापि योगियों के लिये उपयोगी है। प्राणायामों के पीछे मुद्राएँ अर्थात् महामुद्रा, महाबेध, महाबन्ध, विपरीतकरणी, तारण, परिधानयुक्ति चालन, शक्तिचालिनी आदि आवश्यक मुद्राएँ भी सीखनी चाहिए। मुद्रा सदैव बन्धत्रय सहित करनी चाहिए।

गुदा स्थित मूलाधार जो एक चार दल का कमल सदृश है उनमें वं, शं, षं, सं चार बीजाक्षर हैं। पृथ्वी तत्त्व व गणपति देव हैं, जिनकी मानस पूजा, जप कर कुण्डलिनी - शक्ति के जागरण के लिये उनसे प्रार्थना करनी चाहिए। इसके पश्चात् मूलाधार के ऊपर गुदा व लिंग के मध्य में स्वाधिष्ठान चक्र है जिसमें छः पंखुडियों का कमल है, इसमें बं, भं, मं, यं, रं, लं की स्थिति है, जल तत्त्व है अर्धचन्द्राकार है। बं बीज है, देव ब्रह्मा है। पूर्वोक्त प्रकार से प्रार्थना के पश्चात् तीसरे चक्र का ध्यान करना चाहिए, वह है नाभि कमल में मणिपूर नाम का, जिसमें दस पंखुडियाँ हैं, उसमें डं, ढं, णं, तं, थं, दं, धं, नं, पं, फं, अक्षर स्थित है, नील रंग है, रं बीज है तथा देव विष्णु है, अग्नि तत्त्व है। मानसिक पूजनोपरान्त अगला चक्र अनाहत हृदय में बारह दल कमल का है, अरुण वर्ण है तथा यहाँ कं, खं, गं, घं, ङं, चं, छं, जं, झं, ञं, टं, ठं, अक्षर स्थित है। अनाहत चक्र का वायुतत्व है, रुद्र देव है। इसके पश्चात् विशुद्ध चक्र का ध्यान किया जाता है, जो कण्ठ में है, सोलह दलों का है अँ से अः तक सोलह स्वरों की स्थिति है, पूर्ण चन्द्राकार आकाशतत्व, इसके जीवात्मा देव है। छठा चक्र है आज्ञा चक्र जो दोनों भौंहों के बीच स्थान में मेरुदण्ड के भीतर ब्रह्मनाडी में स्थित है, दो दलों के इस कमल का वर्ण श्वेत है। ह एवं क्ष चक्र अक्षरों की स्थिति वाले इस चक्र को विद्युत् प्रभा से युक्त माना गया है। चक्र का बीज "ओउम्" है, परमात्मा देव है। इन छः चक्रों के बाद मेरुदण्ड के ऊपरी सिरे पर सहस्रदल वाला सहस्रार चक्र है, जहाँ परमशिव विराजमान रहते हैं, हजार दलों वाले इस कमल में प्रत्येक अक्षर व स्वरों की बीस-बीस आवृत्ति मानी गयी है। कुण्डलिनी शक्ति का परमशिव से संयोग ही उक्त समस्त लययोग का ध्येय है। यह विषय अत्यन्त ही गहन परन्तु सूक्ष्मरूप में बताया गया है। सार यह है कि नश्वर पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, बुद्धितत्वों को एक दूसरे में लीन करके अन्त में अमर - अद्वैतरूप का अनुभव करना लक्ष्य होना चाहिए। यही उद्देश्य पंचोपचार - पूजा का है। ये पांचों

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
उपचार उक्त पांचो तत्वों के स्थानापन्न हैं, जैसे गन्ध (पृथ्वी) लं, नैवेद्य (जल) वं, दीप (अग्नि) रं, धूप (वायु) यं, पुष्प(आकाश) है।

मूलाधार से चलकर कुण्डलिनी शक्ति अपनी पहली मंजिल श्रीमाता की कृपा से पार कर पहली गाँठ खोलती है, इसे "ब्रह्मग्रंथि-विभेदनी" कहते हैं।

१०१. मणिपूरान्तरुदिता

स्वाधिष्ठान से आगे चलकर मणिपूर चक्र को बेधती है।

१०२. विष्णुग्रंथिविभेदिनी

जैसा कि पीछे कहा गया है कि मणिपूर चक्र में विष्णुशक्ति समेत रहते हैं, वह कुण्डलिनी इस ग्रंथि को भी भेदकर आगे ऊपर की ओर जाती है।

१०३. आज्ञाचक्रान्तरालस्था

परमेश्वरी की कृपा से यह भी ग्रंथि खुल जाती है। पहले जब ब्रह्मग्रंथि खुलती है तब साधक को शरीर की सारहीनता का पता चलता है और जब विष्णु-ग्रंथि खुलती है तब अपने मद की मादक माया का बोध होता है, शरीर और मन से परे साधक को ले जाने वाली परमेश्वरी मणिपूर चक्र में निवास करती है। आज्ञा चक्र को रुद्र ग्रंथि कहा जाता है। समस्त शरीर कि क्रियाओं का केन्द्रीय संचालक, आदेश, निदेश, अनुदेशन यहां स्थित तीसरी आंख से होता है।

१०४. रुद्रग्रंथिविभेदिनी

वही कुण्डलिनी यहां रुद्रग्रंथि को भी भेद कर षट्चक्रों का भेदन कर देती है, यह उसके गन्तव्य का अन्तिम पड़ाव है। इसके पश्चात् वह ब्रह्मरन्ध्र में पहुंचकर सदाशिव में लीन होकर शाश्वत आनन्द की वर्षा करती है, इसे ही अमृताप्लावन कहते हैं।

१०५. सहस्राराम्बुजारूढा

हजार दल का श्वेत कमल जो कपाल में है उस पर गुरु का स्थान बताया गया है, वह भी श्रीमाता सहित। यहां पर आठों पहर अमृत वर्षा होती रहती है इसलिये न बुढापे की परेशानी न मृत्य का भय। साधक मन में जब इसका साक्षात्कार करता है, तो वह स्वयं को विश्वात्मा का अभिन्न अंग मानता

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
है, जोकि अमर है। इस हजार दलों वाले सहस्रार को अम्बुज अर्थात् कमल कहा गया है, उस पर रहने वाली श्रीमाता।

१०६. सुधासाराभिवर्षिणी

सहस्रदल कमल सुधा यानी अमृत की वर्षा करता है। यहां शीत रश्मि अर्थात् बर्फ हिम या अमृत का सागर हमेशा रहता है। भौतिक रूप में भी सिर को ठंडा रखने के उपाय किये जाते हैं सिर में गर्मी चढ जाने पर मनुष्य पागल हो सकता है। अतः सुधा के सार से सारे शरीर को सरस बनाता है यह सहस्रदल कमल। इसलिये इसकी सुधा की धारा भी सहस्रधारा बनकर सहस्रशीर्षा, सहस्रार, और सहस्रपाद संसार को रसाप्लावित करती रहती है।

१०७. तडिल्लतासमरुचिः

आपका बदन (शरीर) विद्युत के समान प्रकाश युक्त है। अपितु आकाश में वर्षाकाल में बादलों में अंधेरी छा जाती है, उस समय बिजली चमकती है, वह प्रकाश भगवती से होता है, क्योंकि उसका प्रकाश करोड़ों विद्युत से भी अधिक है। जैसा दुर्गा के ध्यान में कहा है "विद्युद्दाम समप्रभां" अथवा "तडित्कोटिप्रभादीप्तां" इस महाप्रकाश के ध्यान करने से उपासक के अन्तस्थल (हृदय) का अन्धकार दूर होकर ज्ञान का प्रकाश होता है। अज्ञान अंधेरा है, ज्ञान को प्रकाश कहते हैं।

१०८. षट्चक्रोपरिसंस्थिता

छः चक्रों के ऊपर रहने वाली। जैसा कि पिछले कुछ नामों में छः चक्रों का वर्णन हुआ है, जो मूलाधार से आज्ञाचक्र तक हैं, उनके ऊपर सहस्रार कमल का स्थान है, जिसमें रत्न सिंहासन पर गुरु रूप शिव के साथ शक्ति विराजमान है। इसके अतिरिक्त षट्चक्रों पर भी शक्ति रूपान्तर से रह रही है।

१०९. महासक्ति

इस संसार सागर की समस्त शक्ति का केन्द्र होने के कारण यह महाशक्ति है। संसार की समस्त आसक्ति को इसी में केन्द्रित करके साधना की जाये तो उसकी सिद्धि प्राप्त होती है। इस महाशक्ति से ही अनेकों शक्तियां प्रकट होती हैं जैसे इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्ति, प्राणशक्ति। इस शक्ति को कला भी कहा गया है- जैसे चन्द्रमा की १६ व सूर्य की १२ अग्नि की १०।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

११०. कुण्डलिनी

सर्प के आकार में, कुंडल का आकार गोल होता है। मूलाधार में सांप की तरह कुंडलिनी साढ़े तीन वर्तुल आकार बनाकर सिमटी हुई मुद्रा में सोये रहती है। जिस तरह सांप गोल आकार करके सोता है। जब साधक कूर्च बीज का प्रयोग करता है, तो वह ऐसे जागती है, जैसे किसी ने डंडा मार के जगाया हो। या जैसे सोता नाग भौचक रहकर अपना फन ऊपर उठाता है। इसी प्रकार ऊपर की ओर चलती है। योगी इसे छः चक्रों के रास्ते लाते हुए ब्रह्मरन्ध्र में ले आते हैं तथा ब्रह्मलीन हो जाते हैं। यहीं जीव व ब्रह्म का एकीकरण होता है।

१११. विसतंतुतनीयसी

ये कुण्डलिनी शक्ति कमल की डंडी के समान कोमल है। कमल की डंडी या नाली को तोड़ने से तन्तु अर्थात् रोम के सौवें भाग की समान बारीक होती है जैसा कि ब्रह्मसूत्र में है:

'बालाग्र शत भागस्य शतधाकल्पितस्य च' अर्थात् रोम (बाल) का सौवें भाग के बराबर अत्यन्त सूक्ष्म। इसका वर्णन शास्त्रों में बहुत जगह आता है, जैसे श्रीमद्भागवत में स्क. २अ. २श्लो. १९० में है। "स्थानेषुषट् सूत्रमयेज्जितक्लम:'' २.२.१९ से लेकर २१वें श्लोक तक छः चक्रों का वर्णन, प्राणी की गति का वर्णन श्री शुकदेव जी ने किया है।

११२. भवानी

भव की गृहेश्वरी भवानी। भव नाम शिव। भव संसार सागर का भी नाम है, अतः भव से पार कराने वाली भवानी। भवन अर्थात् शंकर के भवन में रहने वाली भवानी। यह श्रीमाता का सुन्दर नाम है। संसार में जो कुछ संभव है, सब भव और भवानी की कृपा से ही है, वही इस भवसागर के आदि माता-पिता हैं। महाकवि कालिदास ने भी इस प्रथम युगल की "जगत: पितरौ वंदे पार्वती परमेश्वरौ'' कह कर वंदना की है। संसार की उद्भव, प्रभव-विभव और संभव का आधार भवानी और शंकर ही हैं जिनकी तुलसीदास ने भी प्रत्येक प्राणी के मन में श्रद्धा और विश्वास के रूप में वंदना की है। ये भिन्न दिखाई देते हुए भी अभिन्न हैं, जैसे सूर्य और प्रकाश, चांद और चांदनी, जल व लहर व शीतलता। अतः इसके साक्षात्कार करने के लिए अनुभव करने की आवश्यकता है, भावना के बल पर।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

११३. भावनागम्या

भावना से ही जानी जाने वाली, भावना से ही प्राप्त होने वाली। भाव के कई प्रकार हैं जैसे मातृभाव, देवभाव, ईश्वरभाव। अर्थात् मुख्य वस्तु भावना ही है, वही हृदय की भाषा है, जिसे भवानी समझती है। भाव बिना भक्ति नहीं, भक्ति बिना लक्ष्य प्राप्ति नहीं। भगवती या भगवान् भाव से ही मिलते हैं: "भावे विद्यते देव:।" गीता में भी भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं: "भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानस उच्यते।" (अ. १७ श्लो. २६) अर्थात् मन का तप भाव को शुद्ध रखना है। साधक के मन में सच्ची-भावना का उदय होने से उसे संसार की सार-हीनता का पता चल जाता है और साधना का कोई भी प्रकार क्यों न हो, राह उसकी "भावना" ही होती है।

११४. भवारण्य-कुठारिका

भव-संसार रूपी जो घना जंगल है, जिसमें जीव भटक रहा है, उसे काट कर मार्ग बनाकर भक्त को सही मार्ग पर लाने वाली श्रीमाता। जब सत्य भावना का उदय साधना, संस्कार और संयोग से संकलित परिपाक से होता है, तब उस प्राणी को भव की बाधा नहीं सताती और यह महावन माता की कृपा से भावना का उपवन बन जाता है। भावना का कुठार संसार के वन को नष्ट कर उसे उपवन बना देता है और जीवन की जटिलमतम समस्या सुलझकर उसे जीवन की धारा मिल जाती है।

११५. भद्रप्रिया

संसार में जो कुछ भद्र, शुभ और मंगलकर है, वह देवी के लिये, प्रिय है। भद्रता श्रीमाता की प्रमुख विशेषता है, व भद्रता की मूर्ति है। भद्र पुरुषों से प्रेम रखने वाली।

११६. भद्रमूर्ति

कल्याणी, कल्याण की प्रतिमा, मूर्ति, निधि, भद्र, अति सुन्दर। कल्याण करना ही स्वभाव है जिनका। वेदों में भी कहा है "भद्रंकर्णेभि श्रृणुया-म देवा भद्रंपश्येमाक्षिभिर्ययत्रा:" आदि। हम कल्याणयुक्त अच्छी बातें कानों से सुनें अच्छी वस्तु आंखों से देखें। मंगलमय भावना की वह साकार मूर्ति है। जहां भद्रता है, वहां यह "भद्रमूर्ति" अपने आप विराजमान हो जाती है। स्वभक्तों को भद्रता प्रदान करती हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

११७. भक्तसौभाग्यदायिनी

क्रमांक १०९ से ११७ तक नौ नाम "चलक्षर सूत्र'' के अनुसार विभक्त हैं। ऊपर भद्रता को सूचित करने वाला यह नाम भगवती के उस गुण की ओर संकेत करता है जो भक्तों को सौभाग्य प्रदान करती है। अर्थात् भक्तों के दुर्भाग्य को सौभाग्य में बदलने की शक्ति यदि किसी में है, तो वह मात्र मां ही में है। जैसा भगवान शिव के सम्बन्ध में तुलसीदास जी ने लिखा है कि "मन्त्र महामणि विषय ब्याल के, मेंटत कठिन कुअंक भाल के।'' (जैसा कि सिद्ध है कि शिव-शक्ति एक ही है) मात्र उपासना से ही भाग्य बदल सकता है। मां तो देवताओं को भी सौभाग्य प्रदान करती है, तो भला देवता "भवानी'' के नियम का उल्लंघन करते हुए कैसे किसी का भाग्य बदल सकता है। मां का भक्त भी समस्त संसार का कल्याण चाहता है "सर्वे भद्राणि पश्यंतु, मा कश्चित् दुःखभाग् भवेत्''।

११८. भक्तिप्रिया

भक्ति ही है प्रिय जिसकी अथवा भक्ति को पसन्द करने वाली। भक्त का मानसिक समर्पण ही भक्ति है। शांडिल्य सूत्र के भक्ति-मीमांसा के अनुसार भक्त अपने इष्ट की ओर पूर्णतः समर्पित होता है और ज्ञानी ज्ञान से इष्ट पर अपना ध्यान केन्द्रित रखता है। यह समर्पण आठ प्रकार का बताया गया है जो एक म्लेच्छ में भी हो सकता है- गरुड पुराण तथा विष्णु पुराण के अनुसार यह नौ प्रकार की है। नारद पुराण के अनुसार १० प्रकार की है। रामचरित मानस के अनुसार जो शबरी के प्रसंग में स्वयं भगवान राम नौ प्रकार की भक्ति का उपदेश देते हैं, वे हैं- नवधाभक्ति

नवधा भगति कहउँ तोहि पांही, सावधान सुनु धरु मन माहीं।
प्रथम भगति संतन्ह कर संगा, दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।
गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भगति अमान।
चौथि भगति मम गुन गन, करइ कपट तजि गान।।
मंत्र जाप मम दृढ़ विस्वासा, पंचम भजन सो बेद प्रकासा।
छठ दम सील बिरत बहु करमा, निरत निरंतर सज्जन धरमा।
सातवं सम मोहि मय जग देखा, मोतें संत अधिक करि लेखा।
आठवं जथा लाभ संतोषा, सपनेहुं नहिं देखइ परदोषा।
एक अन्य स्थान पर इससे पूर्व कहा है
"धर्म तें बिरत जोग तें ग्याना, ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना।

इस प्रकार सत्संग, कथा-श्रवण, गुरु-सेवा, संकीर्तन, जप-भजन,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
दम व शील रहित कर्म, राम-मय संसार को जानकर व्यवहार करना, संतोष, व दोष न देखना ही नौ भक्ति बताई है। भक्ति भक्त को भगवान या भगवती के वात्सल्य का पात्र बना देती है। अर्थात् भक्त और भगवती को जोड़ने वाली संधि कराने वाली है भक्ति। ये भजंति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् (गीता) भक्तिपूर्वक भजन करने वाले और इष्ट में कोई अन्तर नहीं रह जाता है।

११९. भक्तिगम्या

भक्ति द्वारा गम्य भक्ति से ही उपासक को मिलने वाली। जब प्रेमी भक्ति से प्रेमोन्मत्त हो जाता है, तो उसे उसी "इष्ट" का दर्शन सर्वत्र होता है, उसके अतिरिक्त उसे कहीं कुछ नजर ही नहीं आता तथा उसके अतिरिक्त कुछ उसे अच्छा ही नहीं लगता है, न इच्छा होती है। क्योंकि भक्त का मन व बुद्धि भगवती के चरणों में समर्पित होता है, इस प्रकार दोनों का, आराधक व आराध्य का एकीकरण आराधना ही कराती है। गीता में कहा है "मय्यर्पित मनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः। अर्थात् जिसने अपना मन बुद्धि मेरे में लगा दिया है, वही मुझे प्रिय है।

त्रिशती के ७३ वें नाम में भी "लक्षणा गम्या" कहा है। वे भक्ति के क्या लक्षण हैं, जो गम्य हैं। शिवस्तव में भी यही प्रार्थना है कि हे प्रभु। हमारी क्या शक्ति कि हम आपकी महानता के एक अणु सम कण की भी प्रार्थना कर सकते हैं यह तो आपकी ही कृपा है कि हमारा अपूर्ण समर्पण आपकी उपासना के योग्य बना देता है।

कठोपनिषद के अनुसार मनुष्य अपना स्वत्व बाहरी दुनिया को देखकर बतलाता है, अतः उसे मात्र बाहरी दुनिया ही नजर आती है। परन्तु बुद्धिमान अपने आन्तरिक नेत्र को खोलकर कभी नाश न होने वाली अपनी इच्छाओं को अनुभव करता है। राजमार्तण्ड व योगसूत्र भी ध्यान को ही "भक्ति" का मार्ग बतलाते हैं। गम्य का अर्थ, पहुंच होने से है।

१२०. भक्तिवश्या

भक्ति के वश में रहने वाली। श्रीमद्भागवत में भगवान विष्णु ने दुर्वासा से कहा है- (अ. ४, श्लो. ६३) अहं भक्त पराधीनो, अर्थात् मैं भक्ति के अधीन हूं, स्वतन्त्र नहीं हूं। तभी तो भक्ति से जब देवताओं ने आवाज लगाई, तभी शीघ्र आना पड़ा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

जब भक्त भगवती के प्रति समर्पित हो जाता है, तो उसे कोई भय नहीं रहता। द्वैत से भय पैदा होता है, अद्वैत से नहीं। जब भक्त पार्थिव जगत से विभक्त हो जाता है तथा अलौकिक और अक्षय आनंद में आसक्त हो जाता है, यही आसक्ति सांसारिक भय से मुक्ति प्रदान करती है। भगवती भक्त को आश्वस्त कर रही है कि उसका भय, भय नहीं रहेगा। भगवती भक्तों के सभी प्रकार के सांसारिक-असांसारिक भयों से मुक्ति प्रदान करती है। यह शत्रु, मृत्यु, रोग, हानि अथवा सांसारिक आवागमन का बन्धन, सभी का हरण करने वाली है।

१२२. शाम्भवी

शंभु की पत्नी शांभवी। शंभु के भक्तों की माता। शंभु का अर्थ भलाई को बढ़ाने वाला और शांभवी उसके साथ इस लोक-कल्याण के कार्य में साथ देने वाली। योगशास्त्र (हठ प्र.) के अनुसार यह एक मुद्रा भी है, जो अपलक दृष्टि से ध्यान के रूप में तन्त्र में जानी जाती है। कल्पसूत्र के अनुसार तीन प्रकार की दीक्षा शक्ति; शांभवी व मान्त्री। देवी भागवत के अनुसार आठ वर्ष की कन्या शांभवी होती है।

१२३. शारदाराध्या

शारदा (सरस्वती) द्वारा आराधिता। मां ललिता ने उन्हें प्रसन्न होकर विद्या का अधिपति बना दिया। जिस पर मां सरस्वती प्रसन्न हो जाए, उसे वह विद्वान् बना दें। श्रीमद्भागवत में-देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् (१.२.४) कहा गया है। पाणनीय ने भी व्याकरण में प्रवेश पाने के लिये सरस्वती की प्रार्थना की । लघुकौमुदी के आरंभ में "नत्वा सरस्वतीं देवीं शुद्धां गुण्यां करोम्यहम्।"

वाणी के माध्यम से किसी को भी प्रसन्न या रुष्ट किया जा सकता है। बिगड़ते काम भी बन सकते हैं। बात करने का कौशल होना चाहिए। देवी-देवता भी मंत्र के अधीन होते हैं।

एक अन्य अर्थ के अनुसार "शरद" ऋतु में जिसकी आराधना करनी चाहिए। शरद नवरात्र में उपयुक्तता अधिक है। रक्तदंतिका की आराधना इसी नवरात्र में की जानी चाहिए, ऐसा रूद्रयामल का कहना है। त्रिशती में भी "लक्ष्मी-वाणी-निषेविता" कहा है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१२४. शर्वाणी

शंकर का एक नाम शर्व भी है, जिसका प्रयोजन अनावश्यक तत्त्व को हटा,आवश्यक व अविनश्वर तत्त्व को आगे बढ़ाना है, उसकी सहचरी शर्वाणी जैसे शिव-शक्ति और भवानी और शांभवी।

१२५. शर्मदायिनी

शर्म सुख को कहते हैं। वह सुख देने वाली है और वह भी क्षणभंगुर नहीं, शाश्वत सुख। लौकिक नहीं स्थायी और अलौकिक।

भगवद् गीता के अनुसार "सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धि ग्राह्य-मतीन्द्रियम्। सुख आत्यन्तिक बुद्धि के द्वारा प्राप्त होता है, जो दो प्रकार का होता है: अविनाशी और क्षणिक। श्रीमां दोनों ही सुख को देने वाली हैं "श्रीसुन्दरी पूजन-तत्पराणां भोगश्च मोक्षश्च करस्थएव। भोग व मोक्ष दोनों देने वाली है।

१२६. शांकरी

शंकर की शक्ति शांकरी। शं=शम्=कल्याण=शान्ति देने वाली शांकरी।

१२७. श्रीकरी

"श्री'' करने वाली। श्रीलक्ष्मी, शोभा, सौंदर्य, माधुर्य आदि अनेकगुण सम्पन्न या सबको सफलता देने वाली या सबका आश्रय प्रदान करने वाली श्रीकरी। विष्णु सहस्रनाम में भी श्रीकर भगवान विष्णु को कहा गया है, उनकी पत्नी लक्ष्मी श्रीकरी हैं।

१२८. साध्वी

परमशिव की पतिव्रता। उनकी सतत् सभी काल (भूत, वर्तमान, भविष्य) में सहचरी। सीधी बात करने वाली व ऐसे ही भक्तों की भोली-भाली सीधी बातें मानने वाली साध्वी। सौंदर्य लहरी (९६) में भी कहा है हे साध्वी: हे पतिव्रत धर्म परायण स्त्रियों में प्रथम, आपके स्तन भी महादेव द्वारा अछूते ही सुरक्षित हैं। कुरवका की लेई द्वारा भी उन्हें नहीं छुआ गया है। कुरवका लाल अमरनाथ की पत्तियों से बनी लेई है जो हथेली, स्तन व गाल लाल करने के काम में भारतीय स्त्रियों द्वारा प्रयोग में लाई जाती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

१२९. शरच्चन्द्र निभानना

अति सौंदर्ययुक्त शरत् के चन्द्रमा की तरह देवी का मुखमंडल है। चन्द्रमा की आभा अमृत की किरणों से रंजित मानी जाती हैं जो उसकी आलोक की आभा में सम्मिलित है। जो इस मुख को एक बार क्षण भर के लिये देखले, वह उस अक्षय आलोक में सदा के लिये लीन हो जाता है।

१३०. शातोदरी

छोटा है पेट जिसका। यह भी सुन्दरता का एक लक्षण है। अथवा शतोदरा यानी जिसमें सैंकड़ों गुफाएं हैं, उस हिमालय की पुत्री । दूसरा यह मुख की आभा जिस प्रकार संयम व सौंदर्य को प्रकट करती है, उसी प्रकार संयम की मात्रा को उदर जोकि कम से कम संचय को प्रकट करता है। भक्तों को भी यही उपदेश दे रही है कि कम भोजन करके उपासना हो सकती है। शातोदरी एक यंत्र भी कहा गया है, उसके द्वारा उसकी साधना की जाती है। देवी के रूप हैं यंत्र, मंत्र और तंत्र। तंत्र जहां देवी के स्थूल रूप को प्रकट करता है, जिसमें पूजा-पाठ अर्चन व आराधन होता है। मंत्र सूक्ष्म रूप में अक्षरों द्वारा भावना से आराधना की जाती है। स्थूल में एक आकृति का ध्यान किया जाता है, वैसी ही भावनानुसार उसे देखने का प्रयास किया जाता है। वहीं मंत्र में अक्षर रूप में इससे इष्ट का आकार स्वत: हृदय में बनता है। मंत्र सिद्धि होने पर आभा मुख-मंडल पर आ जाती है। देवी की रूपकल्पना रेखा चित्र द्वारा यंत्र द्वारा की जाती है जो श्रीचक्र के रूप में होती है। यह ब्रह्माण्ड व पिंडांड दोनों का प्रतीक होता है। प्रत्यक्षत: प्राणी शरीर ही श्रीचक्र है, जिससे निकला शब्द ही श्रीविद्या मंत्र है और शरीर के विभिन्न क्रियाकलाप ही आराधना है, यह तांत्रिक विधान में आता है। एक मनुष्य जागृतावस्था में क्रियाकलाप और सुप्तावस्था में स्वप्न देखता है। सुषुप्त में स्व को विस्मृत कर प्रगाढ़ निद्रा में सोकर आराम करती है। इसी प्रकार आत्मस्वरूपिणी देवी कभी स्थूल, कभी सूक्ष्म और कभी कारण रूप धारण करती है और साधक को दर्शन देती है।

१३१. शांतिमती

पूर्ण शान्तिमयी-भक्तों को शांति देने वाली। शांति की मूर्ति, जिसमें किसी प्रकार का क्षोभ नहीं है। माता से प्राप्त शांति साधारण भौतिक या मानसिक मात्र नहीं, बल्कि असाधारण आध्यात्मिक और शाश्वत होती है।

१३२. निराधारा

जो स्वयं आधार से रहित है, अपितु सबका आधार वही है और

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वह किसी पर आश्रित नहीं वरन् सब उसके आश्रित हैं, उसी पर टिके हुए हैं। समस्त ब्रह्माण्ड ही उस पर आधारित है। सबका मूलाधार। सूत-संहिता के अनुसार आराधना दो प्रकार की होती है, एक बाहरी दूसरी आन्तरिक। बाहरी दो प्रकार की है वैदिक और तांत्रिक। आन्तरिक भी दो प्रकार की होती है, एक वह जो साधार (आधार सहित) है दूसरी निराधार जो पहली से कहीं बड़ी है। साधार में आराधना के लिये साधनों की आवश्यकता है, चाहे वह कोई मानसिक कल्पना रूप में हो जबकि निराधार आराधना में किसी रूप में साधनों की आवश्यकता नहीं, यह मूलाधार अनाहत आधार जो मूर्त रूप में नहीं होते, पर देवी की आराधना की जाती है।

१३३. निरंजना

अंजन अर्थात् मिथ्या रूप अविद्या से रहित। मल से रहित। कालिमा या अन्धकार से रहित क्योंकि वह तो अंधकार दूर करनेवाली ज्योतिर्मयी है। निरंजन शब्द ब्रह्म का वाचक है।

१३४. निर्लेपा

निर्लेपा द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि वह किसी में लिप्त नहीं है, सब कुछ करती है, सबमें व्याप्त है फिर भी सबसे अलग है। जैसे पानी में रहते हुए भी कमल का पत्ता गीला नहीं होता इसी प्रकार निर्लेपा है श्रीमाता।

जैसे सबकी जननी होते हुए भी सबसे अलग है सबको अपने में समाहित करते हुए भी सबसे विलग है सब कुछ करती हुई भी कुछ करती प्रतीत नहीं होती यही गीता के निष्काम कर्मयोग का सार है। इसको और स्पष्ट इस तरह समझा जा सकता है कि जब उत्कट प्रतिफल की लालसा से प्रेरित होकर अहंकार पूर्वक जो काम किया जाता है, वह करने वाले को परेशान कर देता है और चैन नहीं लेने देता तथा इसके विपरीत बाहरी आवरण या आकर्षण से दूर रहकर जो काम अपने कर्त्तव्य पालन समझ कर किया जाये तो करने वाला कर्म के बन्धन में नहीं पड़ता, यही उसकी निर्लिप्तता है। भगवती इसी प्रकार निर्लिप्त है, निर्लेपा है।

१३५. निर्मला

कलुषित आचरण यथा काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या-द्वेष, मद, मात्सर्य आदि मल हैं, जो मन को मलिन बना देते हैं। भगवती इन सभी विकारों से रहित हैं। यदि भक्त इन विकारों से दूर रहकर परमार्थ भाव से काम करें तो मन-मालिन्य धुल जाता है और निर्मल बन जाता है। माता मल-रहित हैं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
अतः वह पवित्र है जैसे वर्षाऋतु में जल गदला हो जाता है, परन्तु शरद में निर्मल हो जाता है।

१३६. नित्या

जो नित्य हैं सदा रहने वाली हैं, जो न कभी उत्पन्न होने वाली है और न समाप्त होने वाली है। सदा एक रस एक रूप न घटती है न बढ़ती है, सदा एक ही स्थिति में रहती है।

नित्या का एक यह भी रूप है-कामेश्वरी से चित्रा तक १५ नित्या हैं। कृष्णपक्ष में चित्रा से कामेश्वरी तक व शुक्लपक्ष में कामेश्वरी से चित्रा तक। ये प्रतिपदा से पड़वा से आरंभ होकर पूर्णमासी तक तथा दूसरी पड़वा से अमावस्या तक।

इसका एक रूप यह भी है कि जब साधक यह नश्वर शरीर जब परमेश्वरी की कृपा से अविनश्वर आत्म-तत्त्व को या उसके चिरंतन मूल्यों को पहचानने लगता है, तो उसके जीवन की अनित्यता मिट जाती है और माता नित्या रूप में दर्शन देती है। उसकी लीला अनित्य है, यह प्रकाश-अंधकार, जीव, जीवन इस पंच-भौतिक जीवन का सब कुछ अनित्य हैं। वस्तुतः यहां नित्य और अनित्य की आंख मिचौली होती रहती है। दोनों एक-दूसरे से बंधे लगते हैं। इस प्रकार निर्लेपा, निर्मला और नित्या में आचरण, चिंतन और अस्तित्व को शरीर मन और आत्मा के संबंध से बोध कराया गया है।

१३७. निराकारा

जो कि किसी प्रकार के आकार से रहित हो जिसका कोई आकार न हो। श्रीमद्भागवत, ८.३.२४, में गजराज ने स्तुति की-स वै न देवासुरमर्त्यतिर्यक् नस्त्री न षण्ढो न पुमान् न जन्तुः। नायं गुणः कर्म न सन्न चासन्, निषेधशेषो जयतादशेषः।। अर्थात्- वह परब्रह्मस्वरूपिणी, परमतत्व न देवता है, न असुर, न मनुष्य है, न पशु, न पक्षी, न स्त्री, न पुरुष, न नपुंसक, न साधारण, न असाधारण है, न गुण, न कर्म, न कार्य, न कारण, सबका निषेध होने पर भी जो शेष बचता है वही सब कुछ है।

एक ओर जहां वह समस्त संसार को अपने अन्दर धारण करके सर्वाधारा है वहीं निराधारा भी कहा है, दोनों एक दूसरे के विपरीत लगते हुए तात्विक दृष्टि से एक ही तत्व के द्योतक हैं। जहां वह सबको सनातन आधार प्रदान करती है, वह सर्वाधारा है और क्योंकि उसके लिये किसी आधार की आवश्यकता नहीं है, अतः वह निराधारा भी है। ऋग्वेद का एक सूक्त इसका विवेचन करता है:

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

"हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्,
स दाधार पृथिवीं मतेमां कस्मैदेवाय हविषा विधेम।''

अर्थात् समस्त चराचर सृष्टि के आरंभ में विद्यमान परमपुरुष की परमसाध्वी माता ने आकाश व धरती को अपने भीतर धारण कर लिया था। अतः वह सर्वाधारा भी है और निराधारा भी।

इसका प्रत्यक्ष उदाहरण यह भी है कि प्रत्येक मनुष्य में उसका निवास है, जबकि सब अलग-अलग शक्ल और आवाज के होते हैं। सबके आकार का आधार वही है, अतः वही निराकार है।

१३८. निराकुला

किसी भी प्रकार की आकुलता से रहित। 'दिव्यथर्वशीर्ष'' में भगवती स्वयं कहती हैं "विद्याहमविद्याहम्'' यद्यपि वह "अविद्या'' भी है, अपितु उससे परे भी है, अतः व्याकुलता तनिक भी नहीं है। जहां तेरा-मेरा की भावना से ही प्राणी में व्याकुलता आती है, परन्तु उसके तो सब हैं अच्छे और बुरे दोनों, तो व्याकुल क्यों हों ! जो व्याकुल नहीं होता, वह मनुष्य "दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगत-स्पृह'' न दुख में दब जाता है न सुख में स्वयं को विस्मृत करता है।

१३९. निर्गुणा

गुणों से रहित। सत्व, रज, तम तीनों गुणों से रहित। जैसे "निराकारा'' के विवेचन में कहा है कि जो सबके बाद बचता है वह (परमेश्वरी) वही है अर्थात् शून्य है। सब गुणों से सम्पन्न होते हुए भी गुणों से परे है। क्योंकि गुणों का उद्भवं तो इन्हीं से होता है। गंगा जहां से निकलती है, वह कोई जलाशय नहीं है, वह तो हिम है, जो नीचे से आ रही गर्म वायु आदि के स्पर्श से जल बनता है। इसी प्रकार सब सगुण होते हुए भी वह निर्गुण है। इस स्थिति में साधक "तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः'' के लौकिक गुण-दोषों से परे हो जाता है तथा जैसी जाकी भावना तैसी ताकों सिद्ध। गुण और आत्मा में सीधे कोई भी संबंध नहीं है, उसकें मध्य में मन है। जब साधक आत्मा के आनंद की ओर भागता है तो गुण उसके लिये गौण हो जाते हैं इसके विपरीत जब गुणों की ओर भागता है, तो आत्मानंद उससे परे होने लगता है

१४०. निष्कला

भगवती में सब कला होते हुए भी वह उससे अलग है। कला

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

किसी भी सत्ता को सीमित करती है। गीता में भगवान ने कहा है कि संसार के सभी प्राणी मेरे ही भाग हैं। सब एक परमात्मा की आत्मा हैं तो जब परमेश्वरी का ध्यान किया जाये तो क्या उसके एक ही हिस्से का ध्यान करके उसके स्वरूप को जाना जा सकता है ! नहीं, उसके समग्र रूप को ही ध्यान करना होगा। इसी प्रकार एक विद्वान कहते हैं कि कला को कलात्मक बनाने वाली या कलामयी स्वयं कला से परे है, इसलिये उनको "निष्कला" कहा गया है। निष्कलं निष्क्रियं शान्तम्।

१४१. शान्ता

वह शान्त स्वरूपा है सौम्य रूपा है। सप्तशती में कहा है-"अति सौम्याति-रौद्राय" और यही भगवती शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभिं सुरेशं विष्णुरूपा है, शान्ति परम सुख है और "अशान्तस्य कुतः सुखम्।" त्रिपुरा उपनिषद में "शान्ति, बिना अस्थिर हुए" है।

१४२. निष्कामा

कामना रहित। जिनको कोई इच्छा नहीं है। क्योंकि वह पूर्ण है। वह तो स्वयं कामना पूर्ण करने वाली है। देवी भागवत में कहा है "जब सभी इच्छाएं पूर्ण हो जाती हैं तो कुछ भी बचा नहीं रह जाता, जिसकी वह इच्छा करे।" "यं यं चिन्तयते कामं..." भगवती सबकी इच्छाएं पूर्ण करती है, यही उसे शांति प्रदान करती है।

१४३. निरुपप्लवा

जोकि अविनाशी है जिसका नाश नहीं होता अथवा अमृत पान कराने वाली अमृतमयी मां। अथवा वह सभी प्रकार के विघ्नों का निवारण करती है। जब मनुष्य की कामनाऐं अत्यधिक हो जाती हैं, तो वह अशांत रहता है, जिनके निराकरण करने में भगवती को आनंद आता है तथा सब साधन निष्काम भाव से कार्य करता है तो उसके मार्ग से विघ्न को दूर करना वह अपना कर्त्तव्य समझती है।

१४४. नित्यमुक्ता

सर्वथा बन्धनों से मुक्त अथवा जिसके उपासक नित्यमुक्त होते हैं। जीवनमुक्त हैं या वह मोक्षरूपा है। बंधन मात्र मन की रचना है, जो शरीर व मन तक ही सीमित होता है। आत्मा को इन तन-मन से अलग पहचान पाना ही नित्यमुक्ता का बोध कराता है। जिससे साधक आध्यात्मिक आनंद की अनुभूति करता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१४५. निर्विकारा

विकार से रहित। चूंकि काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर इत्यादि विकार मन से ही उत्पन्न होते हैं, तो जैसा ऊपर बताया कि मन के एक ओर गुणावगुण हैं, संसार है, दूसरी और आत्मा है। यदि ये सब गुणावगुण रहेंगे तो मन इनकी ही ओर चलता रहेगा, यदि मन ने आत्मा या स्व के आंतरिक वैभव का आभास पा लिया तो वह इन सब गुणावगुणों की ओर से निर्विकार हो जाएगा। भगवती के इस स्वरूप को निर्विकार कहा गया है।

१४६. निष्प्रपंचा

नि+प्रपंच अर्थात् सब प्रपंचों से रहित। छल-छिद्र जिसमें नहीं हों। यह संसार ही प्रपंच है, परन्तु इसको बनाने वाली इन सब प्रपंचों से अलग है। दूसरे यह कि पांच तत्व ही प्रपंच हैं- पृथ्वी, जल, पावक, गगन, समीर, जिन सब से आत्मा ही मात्र निष्प्रभावित रहती है। इसीलिये आत्मस्वरूपिणी मां को "निष्प्रपंचा" कहा है।

१४७. निराश्रया

जिसका कोई आश्रय नहीं है, अपितु वही सबका आश्रय है।

आत्मा को किसी आश्रय की आवश्यकता नहीं है, बल्कि शरीर या मन को ही आत्मा की आवश्यकता है। बिना आत्मा के शरीर या मन का कोई अस्तित्व नहीं।

१४८. नित्यशुद्धा

वह नित्य ही शुद्ध, पवित्र और निर्मल है। नित्य-शुद्धा व नित्यबुद्धा भगवती का स्मरण करते ही मनुष्य पवित्र हो जाता है, क्योंकि वह सर्वदा पवित्र है। प्रज्ज्वलित अग्नि की तरह आत्मा पवित्र है जबकि शरीर सर्वथा अपवित्र, परन्तु "अपवित्र पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपिवा" वाक्य से स्पष्ट है कि उसके स्मरण मात्र से सदैव सब पवित्र हो जाते हैं।

१४९. नित्यबुद्धा

सर्वदा जागने वाली। चैतन्यस्वरूपा। बोधयुक्त। शुद्धा व बुद्धा भगवती के दो रूप हैं, ये नित्या भी हैं, जिन १५ नित्याओं का पहले विवेचन कर चुके हैं। भगवती तारा भी हैं। जैन तीर्थकरों में भी कृपा की देवी जानी जाती हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१५०. निरवद्या

जिसमें निन्दनीय वस्तुओं का तनिक भी समावेश नहीं है या जिनका उपासक नरक आदि को नहीं देखता। यह अविद्या का ही विलोम है। लिंग पुराण के अनुसार अट्ठाईस करोड़ नरक हैं, जोकि घोर नरक से माया तक हैं, जहां शिव या शक्ति का उपासक नहीं जाता।

१५१. निरन्तरा

अन्तर से रहित। अविच्छिन्न, जैसे गंगा की धारा बराबर चलती रहती है बीच में व्यवधान नहीं पड़ता इसी प्रकार दया का स्रोत हमेशा निरन्तर चलता रहता है। ज्ञान का स्रोत अमृत-प्रवाह या विद्या का स्रोत निरन्तर बहता रहता है। यदि कोई शंका करे कि जब उसका दया का स्रोत बहता है, तो उसकी सृष्टि में जिसमें कि सभी उसी की सन्तान हैं, सभी पर उसकी दया होनी चाहिए। तो सभी संसार में सुख प्राप्त करें और सभी मोक्ष को प्राप्त हो। परन्तु ऐसा नहीं है। क्योंकि वस्तुत: उसकी दृष्टि में तो सब समान हैं, किन्तु जो उसकी गंगा के समीप भी न जाए तो उसे गंगाजल कहां से प्राप्त हो। इसी प्रकार यदि उसकी करुणा रस सागर के समीप ही न जाए तो कैसे दया रूपी अमृत का पान हो सकेगा। इसके लिये जिस ज्ञान की आवश्यकता है, वह "सद्गुरु" से ही मिल सकता है। गीता में भी भगवान ने कहा है -"समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति मन प्रिय:, ये भजन्ति तु मां भक्तया मयि ते तेषु चाप्यहम्। कि मेरे लिये सब समान है, किन्तु जो मुझे भजता है मैं भी उसको भजता हूं। जो मोहि भज़ै भजूं में ताकों।

गीता में ही कहा है कि आत्मा अमर है, उसमें कोई व्यवधान या अन्तर नहीं अत: संसार एक ही आत्म तत्व को अपने में समाहित किये हुए है। व्यवहार में भेद तो माया के वशीभूत होने के कारण है। अत: एकतत्व "आनंदमय आत्मा" की यह अखंडधारा निरन्तर बहती आई है और बहती रहेगी। यही निरंतरा है।

१५२. निष्कारणा

राजराजेश्वरी जो सब का कारण होते हुए भी कारण रहित हैं। यही उसकी महत्ता है कि सबका कारण होते हुए भी कारण नहीं है। जैसे निराकार हैं और साकार भी। विष्णु सहस्रनाम में "करणं-कारणं कर्ता-विकर्ता गहनो गुरु।" देव्यथर्वशीर्ष में - अहमानन्दानानन्दो "मैं आनन्द में ही निरानन्द हूं। मैं ही विद्या में अविद्या और वेदों में अवेदों में अर्थात् सब कुछ

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मैं ही हूं। श्रुतियों के अनुसार "किसी ने उसको पैदा नहीं किया बल्कि वही सबकी स्वामिनी है''

१५३. निष्कलंका

किसी प्रकार का कलंक नहीं होना ही निष्कलंक है। पाप रहित है। चन्द्रमा में कलंक हो सकता है, परन्तु भगवती के मुख-मण्डल में किसी भी प्रकार का कोई कलंक नहीं।

१५४. निरूपाधि

उपाधियों से रहित। अविद्या से रहित। संसार का प्रपंच, उपद्रव आदि सब से पृथक् शुद्ध पवित्र और आनंदमय। उसे किसी विशिष्ट गुण, धर्म या लक्षण से नहीं पहचाना जा सकता, क्योंकि वह तो किसी लौकिक उपाधि से सीमामय हो जाएगा, जबकि भगवती को किसी सीमा में नहीं बांधा जा सकता।

दूसरे यह कि "सद्हेतु'' है, जिससे भगवती को जाना जा सकता है।

१५५. निरीश्वरा

जिसके ऊपर कोई दूसरा ईश्वर नहीं है। अर्थात् वह स्वयं ही ईश्वर है। वही सबकी शासक है, उससे ऊपर कोई नहीं। साधक जिस भावना से आराधन करे, वह उसी रूप में प्रकट हो जाती है, क्योंकि वह भावनामय है। मनस्वी की प्रत्येक मान्यता में वह मनोन्मनी मंगलमय रूप में प्रकट होती है। सबकी अधिष्ठात्री सर्वेश्वरी पर किसी के ऐश्वर्य का आधिपत्य नहीं चलता, अतः वह निरीश्वरा है।

१५६. नीरागा

राग-द्वेष से रहित, यहां से कुछ नाम जोड़ियों में हैं, जिनमें बताया गया है कि न केवल यह नहीं बल्कि उक्त दोष को दूर करने वाली भी है। इस नाम के आगे "राग मथना'' है। जिसका तात्पर्य है कि वह राग-द्वेष को मथती है या चूर-चूर कर देती है। राग का अर्थ इच्छा भी है तो वह इच्छा रहित है। मात्र वही है, जिसकी सब इच्छाएं पूर्ण हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१५७. रागमथना

जैसा ऊपर कहा गया है कि राग-द्वेष को दूर भगाने वाली। अच्छा आदर्श प्रस्तुत करके ही आदर्श स्थापित किया जा सकता है, अत: स्वयं वह रागद्वेष से दूर है।

१५८. निर्मदा

मद से रहित। अभिमान या घमण्ड, मरूर, अहंकार जिसमें नहीं है। जब मनुष्य धन या ऐश्वर्य से सम्पन्न हो जाता है, तो उसे "मद'' या उसकी उन्मत्तता आ जाती है। किन्तु जिस पर ईश्वर की कृपा नहीं होती है, उसे ही यह मिथ्याभिमान होता है, जिस पर वह कृपा करे, उसे यह नशा नहीं होता अभिमान तो क्षुद्र या ओछे ही को होता है। जैसा कि गीता में कहा है कि-"अहंकार विमूढात्मा कर्ताहमितिमन्यते''। एक अन्य स्थान पर "विद्या विवादाय धनं मदाय शक्ति परेषांपरिपीडनाय, खलस्य साधो र्विपरीतमेतत् ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय। यहां यही समझना है कि धन जो कि कई प्रकार के होते हैं, उनका मद तो खल को ही होता है।

१५९. मदनाशिनी

मद, काम, क्रोध, मोह आदि से उत्पन्न होने वाले मद का नाश करने वाली जैसे काम द्वारा मद (उन्मत्तता या पागलपन) एक बार नारदमुनि को हुआ, वे शीलनिधि की कन्या को देखकर कामातुर हो गये और तब नारायण रूप में कृपा करके उनके "मद का नाश किया। दूसरे दुर्वासा जी को क्रोध का नशा था, उन्होंने तप के मद में राजा अम्बरीष को कृत्या के द्वारा भस्म करना चाहा, उसी मद के चक्र में पड़ वे त्रिलोकी में भागते रहे, तब भगवान विष्णु ने उनका मद, ज्वर दूर करने का उपाय किया।

१६०. निश्चिंता

चिन्ता से रहित। चिन्ता तो उसे हो जिसको कोई कामना हो। या छल-छिद्र करने वाला हो। यहां केवल प्रसन्न चित्त रहना है, तो चिन्ता की क्या आवश्यकता। यह शंका हो सकती है कि वह चिन्ता न करेगी तो भक्तों की विपत्ति कौन दूर करेगा। परन्तु उसकी तो सहचरी "लक्ष्मी-वाणी निषेविता'' लक्ष्मी और सरस्वती हैं, जो उसके भक्तों के दुखों को दूर करती हैं। चिन्ता तो एक धोखा है, वह भी कहा जाता है कि चिन्ता चिता समान है, वह जिन्दे मनुष्य को जला डालती है। परन्तु भगवती के उपासक चिन्ता रहित होते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१६१. निरहकारा

अहंकार से रहित। अहंकार तीन प्रकार के होते हैं- वैकारिक, तैजस, तामस। भूतादि (सत्व, रजस व तामस गुणों से युक्त क्रमशः) तीनों से रहित। जिसमें चिन्ता ही न होगी वह अहंकारयुक्त नहीं हो सकता।

१६२. निर्मोहा

मोह से रहित। मोह का दूसरा नाम मूढ़ता भी है। मोह माया के कारण होता है और माया की वशीभूत लौकिक बुद्धि असत्य को ही सत्य समझती है। जैसा कि आज के भौतिक युग में लोग कहते हैं कि वह यह नहीं जानते कि ईश्वर है या मृत्यु के बाद उसका क्या होगा, वह तो यह जानते हैं कि इस संसार में उनके जीवन में क्या हुआ। उसका धन, स्त्री, वैभव आदि ही उसे सत्य नजर आते हैं। जिसे वह मूल्यवान् समझता रहता है। वह क्षणभंगुर वस्तुतः मूल्यहीन ही होता है। परन्तु भगवती की कृपा से उसे वास्तविकता का पता चल जाता है और वह इस मोह से छूट जाता है।

१६३. मोहनाशिनी

भगवती जिस पर कृपा करे उसका मोह ही नष्ट होता है। मोह जो कि एक मानसिक ज्वर है, जिसे वह विभिन्न रूपों द्वारा अपने साधकों में से निकालती है। नारद-प्रसंग आदि इसके कई उदाहरण हैं।

१६४. निर्ममा

यद्यपि वह अनेक ब्रह्माण्डों की जननी है, तथापि यह ममता कि यह वस्तु मेरी है, इस अज्ञान से दूर है। ममता माया और मोह सगी बहन हैं। जहां "मेरा" की भावना आ जाए, वहां माया मोह आ ही जाती है। वैसे तो संसार ही "ममता" से चलता है परन्तु पारमार्थिक दृष्टि से यह साधना की भावना में बाधक है। आध्यात्मिक साधना में तो यह ममता मृगमरीचिका ही लगती है।

१६५. ममताहन्त्री

ममता वाली बुद्धि का हरण करने वाली। भगवान श्रीकृष्ण से अर्जुन को इसी ममता से दूर रहकर युद्ध करने की सलाह दी थी। माता ममता से संसार का पालन भी करती कराती है और अपने साधक को इससे दूर ले जाती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१६६. निष्पापा

पाप से रहित। जैसे अग्नि के पास शीत या ठण्ड नहीं आ सकती, वैसे ही उस पुण्य मूर्ति के सामने पाप आ ही नहीं सकता है। पुण्यात्मा के संग से पाप धुल जाते हैं। राम के आते ही अहिल्या तर गई। जैसे अग्नि सबको अपने में समाहित करके पवित्र कर लेती है, भगवती अपने साधकों को पाप से दूर करती है यही अगले नाम द्वारा बताया गया है।

१६७. पापनाशिनी

अपने शरण आए भक्तों के पाप नष्ट करने वाली। पाप के भय से मुक्त कर देने वाली। गीता में कहा है-अहं त्वां सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः- जब तू मेरी शरण आ जाएगा तो मैं तेरे सब पाप दूर कर दूंगा। तू सोच मत कर। चिन्ता मन का विषय है चिन्तन करना चाहिए इष्ट, का तो सब कार्य सम्पन्न हो जाते हैं।

१६८. निष्क्रोधा

क्रोध रहित। शान्ति स्वरूप। यद्यपि शासक को अपराधी के लिये दण्डित करना पड़ता है। माता-पिता भी बालक को ताड़ना देते हैं परन्तु क्षणिक क्रोध अलग है-हालांकि है वह भी क्रोध ही है परन्तु समय आने पर क्षणिक क्रोध हो, तो वह व्यक्ति क्रोधी नहीं कहा जाता। गीता में कहा है।

क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात् स्मृति विभ्रमः।

स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धि नाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति। अर्थात् क्रोध से मूढता, मोह से स्मृति-भ्रम हो जाता है, जिससे बुद्धि का नाश हो जाता है और बुद्धिनाश से सर्वनाश हो जाता है। रावण, हिरण्यकशिपु, कंस, हरिण्याक्ष, महिषासुर, चण्ड, मुण्ड, शंभु-निशुम्भ आदि इसके उदाहरण हैं। क्रोध ही ऋषियों का तप नष्ट कर देता है। गीता में कहा है " त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः। काम क्रोध, लोभ और मोह। उपासक इनसे परे ही रहे, तो उत्तम, नहीं तो मार्ग भूल जाता है। क्रोध करने से क्रोध शांत नहीं होता, शांत रहने से ही दूर होता है।

१६९. क्रोधशमनी

भक्तों का क्रोध नाश करने वाली। क्रोध से वह सौम्यरूप चला जाता है। वह तो स्मेरमुखी है, प्रसन्न-वदना है, वह क्रोध ऐसे नष्ट करती है, जैसे प्रकाश अंधकार को। क्रोध अंधकार है और स्मेरमुखी शांति-स्वरूपिणी।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

भगवती प्रकाशरूप। क्रोध में बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, विवेक नष्ट हो जाता है। परिणाम का विचार जाता रहता है, विचार-शक्ति ही क्षीण हो जाती है। भगवती का नाम शान्ति है। देवी-भागवत में रात्रिसूक्त में कहा है "लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिक्षान्ति रेव च"। भगवती शान्ति है, महिष क्रोध रूप है, तो जैसा पहले कहा है, क्रोध द्वारा क्रोध शांत नहीं होता या खत्म नहीं होता भगवती क्रोधरूपी महिष को बलि समझ कर भक्षण करती है। शांति क्रोध को खा जाती है और तलवार (खड्ग) ज्ञान है अर्थात् क्रोध पर वार ज्ञान से होता है।

१७०. निर्लोभा

भगवती को लोभ नहीं है। वह तो उदारतापूर्वक अपने भक्तों को जो कुछ मांगते हैं, दे देती है। अन्य देव देर कर सकते हैं। किन्तु वह तो क्षण भी नहीं लगाती। सद्य:प्रसादिनी है।

१७१. लोभनाशिनी

भक्तों को यदि कोई लोभ हो भी जाता है, तो उस लोभ का नाश करने वाली। यह उसका रोग होता है तो उपासना में बाधा पहुंचती है अत: वह शीघ्र ही उसको लोभ रूपी रोग से छुटकारा दिला देती है। कहा जाता है कि लालच सभी अच्छाइयों को नष्ट कर देता है। तंत्रराज में गुरु के लक्षणों के बारे में कहा है कि जो संशय रहित होकर शंका दूर करे और कुछ भी आशा न रखता हो अर्थात् कोई लालच न हो।

१७२. नि:संशया

जो संशयों से रहित है। तर्क से रहित है। जैसा कि ऊपर गुरु के लक्षणों का वर्णन करते हुए बताया गया है। साधक जब तक मन में गुरु या देवता के प्रति संशय में रहेगा, तब तक उसका सब कुछ किया व्यर्थ ही होता है परमात्मा में श्रद्धा विश्वास नि:सन्देह होना चाहिए। गीता में कहा है "संशयात्मा विनश्यति अर्थात् जो संशय करने वाला है, वह नष्ट हो जाता है"। नसुखं संशयात्मन:।

१७३. संशयघ्नी

शंकाओं का नाश करने वाली। भक्त में संशय हो तो गुरु रूप में नष्ट करने वाली। "छिद्यन्ते सर्व संशया:" संशय दूर होने पर पूर्ण शान्ति प्राप्त होती है ये ही परम लाभ है। संदेह अन्धकार है। नि:संशय ही प्रकाश है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१७४. निर्भवा

जो अजन्मा है। इसका कार्य तो जन्म-मृत्यु से छुटकारा दिलाना है, वह भला जन्म कैसे ले। समय-समय पर लीला दिखाने के लिये वह अवतार लेता है। गीता में कहा है सर्वोच्च ब्रह्म अजन्मा है।

१७५. भवनाशिनी

भवसागर में आवागमन का नाश करने वाली। जो साधक भगवती की शरण में चला जाता है उसे पुनर्जन्म नहीं लेना पड़ता। यह उसकी कृपा का ही फल है। उपनिषद् में भवनाशिनी एक नदी का नाम है।

१७६. निर्विकल्पा

जिसका कोई विकल्प नहीं। यदि कल्पवृक्ष कहा जाये तो वह कल्पवृक्ष की भी जननी है। वह भी उसकी इच्छानुकूल ही फल देता है। उसमें इच्छित फल देने की शक्ति श्रीमाता से ही है। विकल्प का अर्थ कल्पना से भी है, परन्तु कल्पना तो सच्चाई से दूर होती है। सत्य नहीं हो सकती।

संकल्प से बहुत कुछ होता है संकल्प ही सबसे प्रबल होता है। इसी से सृष्टि चलती है, जन्म से मृत्यु पर्यन्त सारा व्यवहार संकल्प से ही होता है। अन्त:करण से पैदा संकल्प ही सात्विक होता है और क्योंकि भगवती आत्मस्वरूपिणी हैं अत: वह उस सात्विक संकल्प को वास्तविकता में बदल देती हैं। परन्तु ऐसा संकल्प मन के प्रबल आकर्षण के कारण विकल्पों की हवा में उड़कर धूमिल हो जाता है। अत: भगवती निर्विकल्पा है। अत: साधक को शुद्ध संकल्प करना चाहिए जो अपने कठिन साध्य को सिद्ध करने में समर्थ होता है। पार्वती द्वारा शिव व जानकी द्वारा राम को पतिरूप में प्राप्त करने का सात्विक संकल्पपूर्ण होता है।

१७७. निराबाधा

जिसमें कोई बाधा नहीं है। वह तो स्वयं बाधाओं को दूर करने वाली है। साधक के मन में सत्संकल्प ही होने चाहिए, संकल्प अपने आप पूरे होते हैं और फिर संकल्प शांत हो जाते हैं। मन में किसी प्रकार का विकार उत्पन्न न हो, तो साधक आत्मा के आंगन में पहुँच जाता है, बिना किसी बाधा के। जहां भगवती आत्मस्वरूपिणी के दर्शन होते हैं।

१७८. निर्भेदा

जिसमें भेदभाव न हो। भेद पृथकता का भाव तो क्षुद्र और ओछों

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

में होता है। वह तो महान् है, सर्वव्यापी है, सभी उसकी सन्तान हैं। उस "एक" के अतिरिक्त दूसरा है ही नहीं। तो भेद कैसा, वह ही एक परम तत्व है, परब्रह्म परम सत्ता परमात्मा अनेक रूपों में है। "मुररिपु वराहस्य भवती" काली, तारा,बगला-बाला-भुवनेश्वरी-महालक्ष्मी-महासरस्वती-दुर्गा-राधा-सावित्री-गायत्री आदि अनेक रूप में वह एक ही शक्ति है। वह ही पुरुष रूप में सदाशिव महाविष्णु, ब्रह्मा, वामन, वाराह, नृसिंह, मत्स्य, कच्छप, बुद्ध, कल्कि आदि है। तब भेद को स्थान कहां, वह तो भेद रहित है। जीवमात्र उसकी दृष्टि में एक जैसे हैं। जैसे सूर्य की किरणें सब पर समान रूप से पहुंचती है। पवन भेदभाव नहीं करती। ये उसके ही अंश हैं।

भेदहीन उपासना ही परम सुख का कारण है। एकानेक। वह एक है ओर अनेक भी वही है। एकतत्त्व प्रतिभासित नाना। वह एक है, लगती अनेक है। जाकी रही भावना जैसी प्रभु मूरति देखी तिन तैसी। वह तो एक ही है, देखने वाले की दृष्टि है, वह वैसा चाहता है वैसा ही देख पाता है। गीता में कहा है "यो यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्" जो मेरी जिस रूप में उपासना करता है, मैं उसी रूप में उसे भजता हूं।

इस उपासना में यही विशेषता है कि वह भेद व बुद्धि से अलग रहकर अपने इष्ट को ध्यान में रखकर आनंद प्राप्त करता है। समस्त संसार में उसी को देखता है। रामचरित मानस में तुलसी भी "सियाराम मय सब जगजानी" कहते हैं। सर्वत्र राम ही के दर्शन करते हैं। हालांकि उन्होंने राम के अलावा शंकर की भी प्रार्थना की, परन्तु कोई भेद नहीं देखा उसी राम का दर्शन शिव में भी किया-

"चातक रटत तृषा अति ओही, जिम सुख लहहि न शंकर द्रोही"

श्रीमद्भागवत में कहा है कि वह एक ही हरि सर्वव्यापी है-

खं वायुमग्निं सलिलं महींश्च। "मत्तः प्रकृति-पुरुषात्मकं जगत्"।

१७९. भेदनाशिनी

भेद का नाश करने वाली। जीव तथा ईश्वर एक ही तत्त्व हैं उसमें जो भेद समझे वह अज्ञानी है, उस भेद-बुद्धि को नाश करके प्रकाश करके भक्तों का कल्याण करने वाली। इसमें अपने-पराये का भेद या ऊंच-नीच का भेद है, उसे दूर करती है।

१८०. निर्नाशा

नाश से रहित। अविनाशी जिसका कभी नाश न हो। ब्रह्म सत्य,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
ज्ञानस्वरूप और अखण्ड है। गीता में भी कहा है आत्मा अमर है, सर्वव्यापी है। जो कुछ सीमित है, वही मिटता है और असीम में मिल जाता है, परन्तु असीम कभी नहीं मिटता। इस आत्मतत्व का प्रतिनिधित्व करने वाली परमेश्वरी नाश रहित है निर्नाशा है।

१८१. मृत्युमथिनी

मृत्यु को दूर करने वाली। देवी की उपासना अमृतमय है। शिवभाव होना ही अमृततत्व है। देवो भूत्वा देवं यजेत्। जब देवमय हो गया साधक, ज्ञानामृत का पान कर लिया तो फिर मृत्यु किसकी, वह तो अमर हो जाता है। इस नश्वर शरीर के अन्दर छिपी अविनश्वर आत्मतत्व की सत्ता का पहचाना जाना ही श्रीमाता का साक्षात्कार कर पाना है। साधक इससे जीवन्मुक्त हो जाता है। वैसे तो सांसारिक हर कार्य करता ही है, परन्तु उन सबके बन्धनों से मुक्त रहता है।

१८२. निष्क्रिया

क्रिया से रहित ब्रह्म। जिनको कुछ भी करना शेष नहीं। विहित या निषिद्ध कोई क्रिया न करने वाली। श्रुति कहती है एक वही परमतत्व है जो इच्छा रुचि या अरुचियों से परे है। तब वह क्या करे। साधक की सांसारिक परन्तु आध्यात्मिक जीवनधारा में त्याग की भावना से स्वयं को वह अपने मन को और अपनी आत्मा को बहलाता रहता सा दीखता है। वह सक्रिय भी दिखता है, परन्तु "त्यागभाव" है, इसलिये निष्क्रिय रहता है। इसी प्रकार का भाव भगवती में भी है, जिससे उसे निष्क्रिया कहा है।

१८३. निष्परिग्रहा

जहां संचय का भाव न हो। किसी प्रकार के भी परिग्रह से रहित हो। एकमेवाद्वितीयंब्रह्म। भगवती किसी से कोई वस्तु लेती नहीं है, वह किसी के परिग्रह से मुक्त है। साधक को किसी से कोई वस्तु लेनी नहीं चाहिए, वरन देनी ही चाहिए। क्योंकि लेने से तेज नष्ट होता है, देने से बढ़ता है। भक्तजन अनेक प्रकार से पूजार्चन करते हैं, परन्तु वह किसी से कुछ मांगती तो नहीं कि मेरी अमुक सेवा करो। कीर्तन करो आदि। उसे तो एक सच्ची भावना ही चाहिए। आजकल बाहरी आडंबर में अधिक विश्वास करते हैं दिखावे में परन्तु उस "निष्परिग्रहा" भगवती को कुछ नहीं चाहिए।

१८४. निस्तुला

जिसकी तुलना किसी से भी नहीं की जा सकती या उपमा नहीं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दी जा सकती, जैसा कि दुर्गासप्तशती में कहा है: केनोपमाभवतु तेऽस्य पराक्रमस्य। भगवती के रूप लावण्य के वर्णन के बाद उसकी उपमा की दुःसाध्यता का वर्णन है। निःस्तुला, तुला यानी तराजू अर्थात् किसी भी तराजू में न तोला जा सकने वाला।

१८५. नीलचिकुरा

नील से यहां कृष्ण वर्ण से है चिकुर अर्थात् बाल। दूसरा अर्थ नील गगन ही भगवती के नीले केश हैं। ये चमकीले केश सुन्दर लग रहे हैं।

१८६. निरपाया

जिसका कभी नाश न हो। अपने स्थान से न हटने वाली अपने ध्रुव बिंदु पर रहनेवाली। वस्तुतः मानव जीवन में तो भटकाव है परन्तु साधक आध्यात्मिक दृष्टि से एक ध्रुव बिंदु या मूलबिंदु में एकाग्र होकर भगवती की उपासना करता है।

१८७. निरत्यया

भगवती स्वयं अपार है असीम है। दुर्गासप्तशती में "हरि-हरा-दिभिरप्यपारा'' कहा है, कि जिसका विष्णु शिव भी पार न पा सके। कोई भी मनुष्य एक सीमा से बाहर नहीं जा सकता। सीमा की या मर्यादा का उल्लंघन यदि संभव हुआ तो खतरनाक है। अत्यय का अर्थ उल्लंघन या अतिक्रमण है। उसकी आज्ञा या सीमा को कोई नहीं लांघ सकता।

१८८. दुर्लभा

जिनको पाना दुर्लभ है। जोकि अत्यन्त कठिन व्रत, नियम, संयम, योग, स्वाध्याय, अर्चन आदि बहुत कुछ साधन करने पर ही प्राप्त हो, वह दुर्लभ है। इतना कुछ करने के बाद भी जो सुलभ न हो। योगियों के लिये भी दुर्लभ है।

१८९. दुर्गमा

दुर्गम हैं मार्ग जिसको प्राप्त करने का या ज्ञान के दीपक से दर्शनीय। दुर्लभा "आ''कारान्त है, अतः दुर्गमा के आगे अ छिपा है अर्थात् "अदुर्गमा''। दुर्गम नामक दैत्य का संहार करने वाली। जिसके पास पहुंचना कठिन हो। अन्दर पहुंच भी गये तो बिना दिव्य चक्षु के दर्शन कठिन, क्योंकि दुर्लभा दुर्गमा दुर्गा है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१९०. दुर्गा

दुर्ग यानी किले में रहने वाली। वस्तुत: आत्मा के लिये जिस प्रकार यह शरीर किला है आत्मा ही परमात्मा का स्वरूप है। इन आत्मा का सम्मिलित स्वरूप परमेश्वरी का है। दुर्गा दुर्गतिनाशिनी या भक्त के दुर्गम कार्य को भी सुगम कर देने वाली। सप्तशती में कहा है-"दुर्गेस्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तो" "दुर्गेति भद्रकालीति"। दुर्ग नाम के दैत्य का बध करने से दुर्गा। नव-दुर्गा- "प्रथम शैलपुत्री...नवमं सिद्धदात्री।" १३४ वें नाम निर्लेपा से १८७ वें निरत्यया तक ५४ नामों में कई प्रसिद्ध मंत्र वेदमाता गायत्री, बाला, त्रिपुरसुन्दरी, षोडशी आदि आये हैं।

१९१. दु:खहन्त्री

दु:खों का हनन करने वाली। सबसे बड़ा दुख ईश्वरी को विस्मृत करना है और तो यह संसार ही दुख का कारण है। आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक तीनों प्रकार के दुख दूर करने वाली। दारिद्र्यदु:खभयहारिणि का त्वदन्या।"

१९२. सुखप्रदा

सांसारिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के सुखों को देने वाली। भगवती भुक्ति-मुक्ति प्रदायिनी है। सांसारिक सुख, निर्धन को धन, नि:संतान को संतान, रोगी को आरोग्य, भयभीत का भयहरण, युद्ध में जय दिलाने या आध्यात्मिक आनंद प्रदान करने वाली अपने चरणों में मन लगाने वाली। गीता में कहा है "सुखमात्यन्तिकंयत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्।"

१९३. दुष्टदूरा

भगवती ने कई विरोधी शक्तियों का निर्माण किया। अच्छी और बुरी भी और जो तत्त्व बुरे गुणों से प्रभावित होकर दोषयुक्त हो जाते हैं, उनको भगवती अप्राप्य हो जाती है। जिस प्रकार उत्कृष्ट शिष्टता के सामने निकृष्ट दुष्टता दूर हो जाती है। मानस में कहा है 'निर्मल मन जन सो मोहि पावा, मोहि कपट छलछिद्र न भावा।"

१९४. दुराचारशमनी

जो नियम-विरुद्ध या शास्त्र-विरुद्ध आचार करते हैं, उन्हें दुराचारी कहा जाता है, उस दुराचार को शान्त करने वाली। दुराचारी को

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
सदाचारी बना देने वाली, उसके दुराचार का शमन करके। विवेक के अभाव में ही मनष्य अच्छे और बुरे में अन्तर स्पष्ट नहीं कर पाता, अत: जो निश्छल भाव से माता की शरण में आ जाए, तो उसमें विवेक का गुण भरती है।

१९५. दोषवर्जिता

भगवती दोष-रहित हैं। उसमें राग-द्वेष नहीं है। सामान्यत: मनुष्य दूसरों के दोषों को ढूंढता है। अपने दोषों की ओर नहीं देखता। जो अपने दोषों को देखता है, उसे दूसरों के दोष खटकते नहीं। आत्मनिरीक्षण करने वाला यह व्यक्ति स्वयं को दोष-वर्जित बना लेता है। इसी गुण का प्रतिनिधित्व भगवती करती है।

१९६. सर्वज्ञा

सबको जानने वाली। भीतर की, बाहर की सब कुछ जानने वाली। सबको पैदा करने वाली देवी ही सबके हृदय की जानने वाली है, किसी के गुण या दोष उससे छिपे नहीं है। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि प्रत्येक मनुष्य अपने दोष-गुणों को स्वयं जानता है।

१९७. सांद्रकरुणा

अत्यन्त है करुणा जिसमें। जिस प्रकार माता पुत्र पर दया करती है। इसी प्रकार प्राणी मात्र, जो उसकी ही सन्तान हैं, वह करुणामूर्ति सबका भरण-पोषण करती है। वह किसी को भी दोषी कहकर दूर नहीं करती। सब पर समान रूप से दया करती है।

१९८. समानाधिकवर्जिता

जिसके समान या जिससे अधिक कोई नहीं। "एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा'' दु० सप्त०। उसके ही बनाये इस अखिल ब्रह्माण्ड में कोई भी शक्ति उसके समान या उससे बढ़कर नहीं है।

१९९. सर्वशक्तिमयी

सबकी शक्ति वही है। दुर्गा-सप्तशती के द्वितीय अध्याय में कहा है- "अतुलं तत्र तत्तेज: सर्व देव शरीरजम्। एकस्थंतदभून्नारी व्याप्तलोकत्रयंत्विषा।'' सब देवताओं के शरीर से तेज शक्ति निकल कर एक तेजपुंज नारी रूप में प्रकट हुआ। तो सब की शक्ति-सर्वमयी शक्ति हो गयी। शक्ति के केन्द्र भगवान विष्णु ने श्री लक्ष्मी अथवा महाशक्ति को अपने हृदय

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
में स्थान दिया, क्योंकि इष्ट देव का स्थान हृदय में है। दूसरे यह कि संसार की मूल शक्ति भगवती है यथा सूर्य की प्रकाश, अग्नि की तेज और आकाश की शब्द-शक्ति उसकी ही कृपा से हैं। प्राणी-मात्र की शक्ति का मूल भी वही है। महिषासुर को मारने के लिये देवताओं से तेज मिला, वह भी मूलत: तो भगवती का ही दिया हुआ तेज था। मार्कण्डेय-पुराण में इसका विस्तृत वर्णन है।

२००. सर्वमंगला

सब प्रकार का मंगल देने वाली। मंगलमयी- सब मंगलों की केन्द्रस्थल। "सर्वमंगलमांगल्ये'' सब मंगलों की जननी। मंगल का भी मंगल करने वाली। भगवती सब प्राणियों को इसलिये शक्ति बांटती है, ताकि लोक-मंगल हो। सबका कल्याण हो, सबका जीवन सुखमय बने। देवी-शक्ति सबमें व्याप्त है, किसी में कुछ क्रम और किसी में कुछ अधिक परन्तु इस शक्ति का उपयोग जब तक सर्वमंगल सबकी ईश्वरी या स्वामिनी। सब पर शासन करने वाली सबकी मालिकिनी। भगवती ऐश्वर्य से युक्त ईश्वरी है जो कि ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, आदित्य, वसु, विद्याधर यक्ष, राक्षस, देवता, मनुष्य, तिर्यक् सबकी ही स्वामिनी है, क्योंकि सभी उसमें व्याप्त हैं, उसी की शक्ति से संचालित हैं। सबकी अधिष्ठात्री है। उस पर किसी का आधिपत्य नहीं इसलिये सर्वेश्वरी हैं।

२०१. सद्गतिप्रदा

भगवती सद्गति देने वाली है। स्वर्ग से लेकर मोक्ष पर्यन्त सद्गति मानी जाती है। ज्ञान से मोक्ष मिलता है। जीवन में ही मोक्ष होना सद्गति है। दूसरे यह कि सत अर्थात् सत्य और गति यानी लक्ष्य, अर्थात् सत्य के लक्ष्य को प्रदान करने वाली। और जिसने सत्य का लक्ष्य पकड़ लिया उसकी सद्गति तो जीवन में ही हो गई।

२०२. सर्वेश्वरी

सबकी ईश्वरी या स्वामिनी। सब पर शासन करने वाली, सबकी मालकिन। भगवती ऐश्वर्य से युक्त ईश्वरी है, जो कि ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, आदित्य, वसु, विद्याधर, यक्ष, राक्षस, देवता, मनुष्य, तिर्यक सबकी ही स्वामिनी है। क्योंकि सभी उसमें व्याप्त हैं, उसी की शक्ति से संचालित हैं। सबकी अधिष्ठात्री है उस पर किसी का आधिपत्य नहीं, इसलिये सर्वेश्वरी है।

२०३. सर्वमयी

सबमें व्याप्त। "सर्व खल्विदं ब्रह्म'' कोई वस्तु ऐसी नहीं, जिसमें

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वह निवास न करती हो, जो कुछ सब वह ही है। जैसे शिवमयी, विष्णुमयी, ब्रह्ममयी, जलमयी, अग्निमयी, आकाशमयी, तेजोमयी, कल्याणमयी। उसकी व्यापकता का वर्णन नहीं किया जा सकता। कामिका के अनुसार २४० संसार हैं, ज़ोकि उस सर्वव्यापक के शरीर पर विद्यमान हैं। यह भुवन है।

२०४. सर्वमंत्रस्वरूपिणी

मातृकारूपा। अक्षरों से मन्त्र बनते हैं तो सब अक्षर उसके स्वरूप हैं। अ अर्थात् नहीं है क्षर यानी नाश जिसका, उसे अक्षर कहते हैं। जिसका कभी नाश ही न हो। मंत्राणां मातृ-रूपणी।

सर्वमयी को ही सिद्ध करने के लिये "सर्वमंत्रस्वरूपिणी" "सर्वयंत्रात्मिका" तथा सर्वतंत्र-स्वरूपा है भगवती।

मंत्र सात करोड़ हैं, परन्तु मूल मंत्र विद्या है। मंत्र एक ऐंसा साधन है जिसकी सहायता से जीवात्मा मन के माध्यम से परमात्मा तक पहुंच पाता है। मंत्र परमेश्वरी का ही रूप है। मंत्र का मनन करने से दिव्य चेतना जागृत होती है। जिससे परमेश्वरी का सांन्निध्य मिलता है, अत: भगवती सर्व मंत्रस्वरूपिणी है।

२०५. सर्वयंत्रात्मिका

सब यंत्रों की आत्मा यानी आत्माहीन कोई वस्तु नहीं है, चाहे वह जड़ हो या चेतन। सबमें ही चैतन्य की आवश्यकता होती है। वह यंत्रों द्वारा कार्यों को सफल करने वाली है। यंत्र रेखाकार या पद्म-दलाकार पूजा के यंत्र होते हैं, जिसकी यथाविधि उपासना-अर्चन करके सभी सांसारिक वस्तु सम्पत्ति संतति और जो कामना होती है, प्राप्त होती है। इतना ही नहीं भक्ति और मोक्ष भी पा लेते हैं। आधुनिक युग में भी यंत्र यानी मशीनों से सब कुछ पैदा होता है, संभव है।

जैसे मंत्र मानसिक आराधन के साधन हैं, यंत्र बहिर्मुख साधना के और इसी प्रकार तंत्र मानसिक और शारीरिक दोनों प्रकार की आराधना की प्रक्रिया है। वस्तुत: ये तीनों ही मन को शरीर से अलग कर आत्मा के निकट ले जाने के साधन हैं। हालांकि विद्वान् इन तीनों के न होने पर भी आत्मा के निकट जाने या परमात्मा का सांन्निध्य पाने की बात कहते हैं कि जो ज्ञानी यह मानते हैं कि तथ्य यह है कि शरीर में भी अमिट रहने वाले तत्व हैं, जो परमेश्वर से एकाकार कराते हैं, लोग भक्ति द्वारा भी सांन्निध्य प्राप्त करते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२०६. सर्वतंत्ररूपा

जितने भी तंत्र हैं वह ब्रह्म का रूप प्रतिपादित करते हैं। तंत्र को आगम भी कहा गया है। वेदों को निगम कहा जाता है। अर्थात् आगम-निगम जिसका मार्ग दिखाते हैं, वह ब्रह्म तंत्रस्वरूपिणी साकार तंत्रों के ही माध्यम से होती है। पुरुष रूप भी वही धारण करती है, जैसे राम कृष्ण, नृसिंह, वाराह और स्त्री रूप भी जैसे राधा, रुक्मिणी, सीता, लक्ष्मी, पार्वती, सरस्वती, दस महाविद्या, दशावतार इत्यादि।

तंत्र यानी आगम पवित्र शरीर है भगवती का : १. कामिक चरणकमल, २. योगजः टखना (एडी के ऊपर का), ३. व ४. करण व प्रसृतः पंजे, ५. अजितः घुटने, ६. दीप्तः जांघ, ७. अंशुमतः पीठ, ८. सुप्रभेदः नाभि, ९. विजयाः पेट, १०. निश्वासः हृदय, ११. स्वायंभुवः छाती, स्तन, १२. अनलः त्रिनेत्र, १३. वीरागमः गला, १४. रुरुतंत्रः कान, १५. मुकुटः चोटी या मुकुट, १६. विपुलः बाहें, १७. चन्द्रज्ञानः सीना, १८. बिम्बः मुख कमल, १९. प्रोद्गीतः जीभ, २०. ललितः गाल, २१ सिद्धः ललाट, २२. सन्तानः कान की बाली, २३. किरणः लाल रंग का रत्न, २४. वितुलः पोशाक तथा शेष सभी तंत्र उसके शरीर के बाल हैं।

२०७. मनोन्मनी

मन सहित सब इन्द्रियां ध्यान-योग के द्वारा जब भ्रूमध्य में आती हैं, तब उन्मनी अवस्था कहलाती हैं। पुनः मन का भी लय हो जाने पर ध्यान-ध्यातृ-ध्येय का मद नहीं रहता। शून्य ही शून्य बिंदु रूप में रह जाता है वही परमतत्व है।

योगिनीहृदय के अनुसार "भौंह" और "ब्रह्मरन्ध्र" के मध्य आठ स्थान हैं, जिन्हें इंदु, रोधिनी, नाद, नादान्त, शक्ति, व्यापिनी, समाना तथा आठवां उन्मनी या "मनोन्मनी" है। इसके बाद अन्तिम और नौवा ब्रह्मरन्ध्र है। भौतिक और आध्यात्मिक सत्ता के मध्य मन का किवाड़ है और जो इन्द्रियों और आत्मा के बीच है। इसके मध्य में बैठे मन को अन्तर्जगत् की अनन्त लावण्य की ओर प्रवृत्त करने वाली देवी "मनोन्मनी" है। योगशास्त्र में यह एक मुद्रा भी है।

२०८. माहेश्वरी

ईश्वर से भी बड़े महेश्वर की शक्ति। ईश्वर के अनेक रूप हैं यथा रामेश्वर, त्र्यम्बकेश्वर, योगेश्वर, सिद्धेश्वर, रंगेश्वर इत्यादि महेश्वर एक

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
हैं और उनमें ही विद्यमान माहेश्वरी है। दोनों एकरूप है। यहां से सत्ताईस नाम "महा" शब्द से जुड़े हैं। मह यानी ब्रह्म। सत्ताईस नक्षत्र भी हैं, जिनका स्वामी चन्द्रमा है। मह ब्रह्म और स्वर यानी ओउम। लिंग पुराण में महेश्वर के तीन गुण कहे हैं: तामस, राजस और सत्व, जिनसे रुद्र, ब्रह्मा और विष्णु, प्रलय, सृष्टि व पालन करते हैं, उस महेश्वर की माहेश्वरी।

२०९. महोदवी

महादेव की अर्धांगिनी। देवों के देव और महादेव और देवीयों की देवी महादेवी। शिव अपनी आठवीं कला में महादेव जिनकी पत्नी रोहिणी, और पुत्र बुध हैं।

२१०. महालक्ष्मी

महाविष्णु की महान् यानी सबसे बड़ी शक्ति महालक्ष्मी। एक महालक्ष्मी की रश्मि से ही लक्ष्मी कई रूपों में प्रकट होती है। लक्ष्मी-नारायण, लक्ष्मी-गणेश, वास्तु-लक्ष्मी, पृथ्वी को भी लक्ष्मी का स्वरूप माना है। शास्त्रों में इसे विष्णुपत्नी कहा है, क्योंकि सोना चांदी, जवाहरात से लेकर अन्न जल इस जमीन से ही मिलते हैं। राज्य लक्ष्मी, जो राज्य में विजय दिलाती है और गृहलक्ष्मी इत्यादि। लक्ष्मी के बहुत से अवतारों में राम के साथ सीता, कृष्ण के संग वह महालक्ष्मी स्वयं दो रूप में : महान् आल्हादिनी शक्ति राधा, असंख्य गोपी, जो गुप्त रहने वाली हैं यथा मनुष्य के शरीर में असंख्य नाड़ी हैं। लीला संचालन में यानी संचार में कार्य करती है। उस महालक्ष्मी की किरण है।

महासरस्वती, महालक्ष्मी, महादेवी आदि सभी देवी-देवताओं की जन्मदात्री वह श्रीमाता आदि लक्ष्मी है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार यह तीनों गुणों से युक्त है। शिव पुराण के अनुसार सबका सम्मोहन करने वाली सर्वोच्च शक्ति सुन्दर नीलाम्बरा श्यामा जो कि शिव की गोद में प्रतिष्ठित है, वही लक्ष्मी महालक्ष्मी है। आंयुष्यसूक्त के अनुसार वह श्रीलक्ष्मी पार्वती ही है। धौम्य स्मृति के अनुसार तेरह वर्ष की कन्या "महालक्ष्मी" कहलाती है।

२११. मृडप्रिया

मृड नाम शिव का है। अर्थात् शिव की प्रिया। अन्तःकरण का झुकाव ही प्रेम होता है। अत्यन्त प्रेम होने पर दोनों एक रूप हो जाते हैं। भगवती महासुन्दरी शिव से अत्यन्त प्रेम करती हैं। वे शिव में समा जाती है तथा शिव अपनी प्रिया में समा जाते हैं। वह एक-प्राण बन जाते हैं। इस प्रकार शिवा और शिव दो देह में महिला और पुरुष रूप हो जाते हैं। वही भगवान

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मृड (शंकर) कृष्ण बन कर अपनी महाशक्ति "श्रीराधा" के साथ एक प्राण दो देह हो जाते हैं (मथुरा में वाटीकुंज में इस प्रकार के दर्शन हैं।)

जब प्रेमी तन्मय होता है, तो जिसका ध्यान करता है, वही बन जाता है। भृंगी एक कीट को अपने पास लाकर उसको भयभीत करता है, हालांकि उसे कोई हानि नहीं पहुचांता परन्तु भौंरे के भय से उसी का निरन्तर चिन्तन करने वाला कीड़ा भी भौंरा बन जाता है।

मृड का अर्थ मृत्यु पर विजय पाने वाला यानी मृत्युंजय भी है। परमेश्वरी की आराधना करने वाला जन्म-मृत्य के भय से दूर होकर मृत्यु के रहस्य को जान जाता है और अमरत्व प्राप्त कर लेता है, जो उसकी आराधना का चरम ध्येय माना जाता है। इसका एक अर्थ प्रसन्नता भी है। महिम्नस्तव के अनुसार शिव का सात्विक रूप ही "मृड" है, जो कि मनुष्य के कल्याणार्थ है।

२१२. महारूपा

महात्रिपुर-सुन्दरी के उपर्युक्त ३० नाम उनकी महत्ता का वर्णन करते हैं, जो उसके नाम "माहेश्वरी" से प्रारंभ हैं। उक्त "महारूपा" नाम से तात्पर्य सबसे श्रेष्ठ होने से है या सर्वाधिक रूपवान् हो सकता है।

विष्णु-पुराण के अनुसार विष्णु निर्मित चार प्रधान, पुरुष, व्यक्त और समय चारों इस संसार की सृष्टि, सृजन तथा लय के कारण हैं। भगवती इन चारों के ऊपर है। "रूपंरूपं प्रतिरूपो बभूव" दो रूपों के संयोग से तीसरा रूप जन्म लेता है, और इसी से सृष्टि चलती है। वह भगवती के सहयोग से ही संभव है। इस प्रकार भगवती सबकी मूलाधार होने के कारण महारूपा है।

२१३. महापूज्या

क्योंकि संसार की एक वही विश्वमाता है और सबकी माता-पिता है। समस्त संसार की मूल वही है, अतः सबकी आराध्या भी वही है। क्योंकि माता-पिता ही संसार में प्रत्यक्ष देवता हैं। जिस प्रकार प्राण होने पर ही शरीर के विभिन्न अंग उसके भरोसे अपने कार्य में संलग्न हैं। इसी प्रकार माता के भरोसे समस्त प्राणी।

श्रीमाता ही सबकी एकमात्र पूज्य हैं। वैसे तो माता-पिता और गुरु पूज्य हैं लेकिन उनकी भी पूज्य एक वही है। षोडशोपचार पूजा से उच्च राजोपचार-पूजा और उससे बढ़कर शिव, इन्द्र आदि जिसे कर सकते हैं वह महापूजा।

देवी भागवत पुराण और पद्म पुराण के अनुसारः शिवःमन्त्र,.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
ब्रह्मा:मणि, विष्णु:नीलम (नीला पत्थर), कुबेर:सोना विश्वेदेव:चांदी, वायु:तांबे, वसु:पीतल, वरुण, स्फटिक,अग्नि:रत्न, शक्र:मोती, सूर्य:मूंगा, सोम:वैदूर्य गृहराक्षस: लोहे, से पूजित होते हैं।

२१४. महापातकनाशिनी

महा पापों का नाश करने वाली। "कृतस्याखिल पापस्य ज्ञानतोऽज्ञानतोऽ पि वा प्रायश्चित्तं परं प्रोक्तं पराशक्तिः पदस्मृतिः।" जानकर या अज्ञान से जो पाप हों, भगवती चरणों का ध्यान करने मात्र से समाप्त हो जाते हैं। क्योंकि वह करुणामयी है, अतः शरणागत को वह दुखी नहीं देख सकती इसलिये उसके ताप, पाप, शोक को नष्ट कर देती है।

२१५. महामाया

माया मनुष्य को भ्रमित करती है। प्रत्येक प्राणी के अन्तःस्तल में आसीन माया ही जीवन में प्रेरित करती है। सत्य की भांति दीखने वाली माया, सत्य से परे होती है। जेसे स्वप्न में दीखी वस्तु, नींद टूटने पर नहीं होती, उसी तरह सांसारिक जीवन में सत्य प्रतीत होनेवाले माया मोह का भेद भगवती की शरणागत होने पर नींद टूटने की तरह उसका भेद खोल देती है। यह आंख-मिचौली मानव और माया के बीच चलती रहती है। जीवात्मा और परमात्मा के बीच यह माया का परदा जब तक मनुष्य अपने "स्व" को भुलाकर उस सनातन और सर्वव्यापी सत्व में एकाकार नहीं होता, यह हटता नहीं है। यह एक रहस्यमयी रचना है, जो भगवती की कृपा के बगैर हटती नहीं और परमात्मा से दूरी बनी रहती है, इसी के कारण। कभी हमें कोई चीज अच्छी या बुरी नजर आती है, तो यह माया का ही प्रभाव है, क्योंकि कुछ भी अच्छा या बुरा नहीं होता। कई बार एक ही वस्तु एक के लिये अच्छी और दूसरे के लिये बुरी लगती है।

२१६. महासत्त्वा

महाबलवती। सारे विश्व का भरण-पोषण करने वाली। रजोगुण से सृष्टि पैदा करना तम से संहार और सत्त्व से पालन-संरक्षण करने वाली महासत्त्वा। "महांति सत्वानि यस्याः सा"

२१७. महाशक्ति

वह महान तत्व, जिससे असंख्य शक्ति उत्पन्न होती है, जैसे इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्ति, प्राणशक्ति, धारणाशक्ति, ग्रहण शक्ति,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
घ्राणशक्ति इत्यादि। मनुष्य में कुण्डलिनी के रूप में यह विद्यमान रहती है परन्तु इसका ज्ञान होना कठिन है यह सद्गुरु ही प्रदान करते हैं।

२१८. महारति

जिस परब्रह्म-स्वरूपिणी भगवती रति के पति महाकाम हैं, वह सांसारिक रति से सर्वथा भिन्न है, अत्यधिक ऊंची है। सांसारिक रति तो नाशवान् है परन्तु वह महारति तो सदाशिव में रत है, जो उनके परमानन्द का कारण हैं।

जीवमात्र इस प्राकृतिक रमणीयता के प्रति आकर्षित रहता है। सौंदर्य, माधुर्य और सामर्थ्य जीव को रमणशील बनाता है, परन्तु सांसारिक रति से शरीर दुर्बल और नीरस बनता है, जबकि अन्तर्मुखी रमणीयता सनातन सुख प्रदान करने वाली होती है।

२१९. महाभोगा

समस्त चराचर ही जिसकी भोग-सामग्री है। या "भोग'' प्रदान करने वाली। सांसारिक और पारलौकिक दोनों। पार्थिव भोग नश्वंर होता है। ऐन्द्रिय सुख क्षणिक है, शारीरिक के अलावा मानसिक और आध्यात्मिक सुख भी होता है। ये इसी क्रम से उत्तमोत्तम हैं।

२२०. महैश्वर्या

महान् ऐश्वर्य है जिसका। ईश्वंर की ईश्वरी महेश्वरी। "ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्यः यशसः श्रियः। ज्ञान वैराग्ययोश्चैव "जो सबका ईश्वर (स्वामी) या पति अथवा (मालिक) है, महेश्वरी उनको ऐश्वर्य देती है, जिससे वे ईश्वर बन जाते हैं। ऐश्वर्य भी भोग की तरह तीन होते हैं- शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक। सांसारिक ऐश्वर्य जीवन में ही साथ नहीं देता। मृत्यु के बाद तो प्रश्न ही नहीं होता।

२२१. महावीर्या

मनुष्य के पास सबसे बहुमूल्य वस्तु शुक्र(वीर्य) है, जो उसे जीवन में उत्साहित रखता है तथा शक्ति प्रदान करता है। तेजवान् बनाता है। इसे बीज भी कहते हैं, संसार के मूल "बीज'' धारण करने वाली "महावीर्या''। बुद्धि क्षमता भी इसी से है।

२२२. महाबला

जो भी संसारी या असंसारी बलशाली है, वह उसी "महाबला''

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

के बल से ही बलयुक्त हुआ है, वह "बल" का वितरण करने वाली है। मनष्य, देव, और दैत्य भी उसी के बल से शक्तिशाली हुए हैं। वह ही सबसे बलवान है समस्त बलवानों के बल भी वही है वही महाबलवान् है। गीता में "बलंबलवतांचाहम्" कहा है।

२२३: महाबुद्धि

संसार में सब जीवों से सर्वाधिक बुद्धिमान् मनुष्य ही है। बुद्धि ही मनुष्य को अच्छे-बुरे का ज्ञान कराती है, यही वह संबल है जिसकी सहायता से मनुष्य सांसारिक तथा यदि मां सद्बुद्धि दे तो उसकी ओर आकर्षित होकर संसार में फिर कुछ भी जानने योग्य नहीं रह जाता। गायत्री मंत्र में भी "धीयो योन: प्रचोदयात्" कहा जाता है अर्थात् हमारी बुद्धि को प्रेरित करें, क्योंकि बुद्धि ही ब्रह्म की ओर जा सकती है। दुर्गा सप्तशती में "स्वस्थैस्मृता मति मतीव शुभां ददासि" कहा है।

२२४. महासिद्धि

शक्ति लौकिक ही नहीं अपितु अलौकिक भी होती हैं, सिद्धियों के रूप में लौकिक और अलौकिक सिद्धियों में सर्वोपरि ललिताम्बा की महत्ता ही सर्वोपरि है। अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा आदि आठ सिद्धियां उसकी सेवा में रहकर ही वरदान स्वरूप सिद्धि प्राप्त करती हैं। जो आराधक श्री जी से चाहे तो वह कोई भी सिद्धि दे देती है परन्तु जो कुछ न ले उसके लिये तो भगवती "महासिद्धि स्वरूपिणी है" उसके लिये कुछ भी दुर्लभ नहीं।

२२५. महायोगीश्वरेश्वरी

योगेश्वरों की ईश्वरी। श्रीकृष्ण योगेश्वर हैं, उनकी भी ईश्वरी। ब्रह्म, विष्णु और महेश भी योगेश्वर हैं, जिनकी शासक होने के कारण मां ललिता महायोगेश्वरेश्वरी है। गीता योगशास्त्र है। गीता-सप्तशती में महायोग का रहस्य बताया गया है।

२२६. महातन्त्रा

ज्ञानार्णव और कुलार्णव इत्यादि तन्त्र हैं उन सब तन्त्रों की महानिधि है महातन्त्रा। तांत्रिक, यांत्रिक, और मांत्रिक भाषा में भी मां को समझा-समझाया जाता है। माता के तंत्र को शंकराचार्य चौसठों तन्त्रों से भिन्न मानते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

स्वतंत्र तंत्र इसलिये कहा जाता है कि ये किसी पर आश्रित नहीं है। पहले समस्त तंत्रों की उत्पत्ति की गई, जो सब एक-दूसरे पर निर्भर, आश्रित थे, जिनसे भ्रम पैदा होता था, तब स्वतंत्र तंत्र की उत्पत्ति स्वयं माता ने की इसे कादिमत भी कहा है।

२२७. महामंत्रा

सबसे बड़ा मन्त्र श्रीविद्या का मंत्र है। मंत्र: जैसे बाला, बगला आदि का। मंत्र श्रीमाता के वाङ्मय शरीर का प्रतिनिधित्व करता है।

२२८. महायन्त्रा

श्रीयंत्र सर्वश्रेष्ठ यंत्र है। वैसे यह जादू की संख्या या रेखाचित्र से निर्मित होता है। यंत्र जैसे पूजाचक्र, पद्मचक्र, अमृतघट, मेरुलिंग इत्यादि हैं। आंतरिक रूप में मानव शरीर ही श्रीचक्र है, जिसके नौ द्वार और नौ आवरण हैं। इसी श्रीयंत्र के आधार पर श्रीविद्या की अर्थात् श्रीमाता की आराधना की जाती है।

२२९. महासना

छत्तीस तत्त्व और चौंसठों यंत्र तथा मंत्रों के ऊपर प्रतिष्ठित। महान आसन पर विराजमान। उसका आसन है भगवान शंकर का अंक, शेर पर आसन, ३६ तत्वों पर आसन, भक्तों के हृदय में, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, इन्द्र पर जिसका है आसन, अमृत के समुद्र के मध्य मणिदीप में चिन्तामणियों से बने राजमहल में है, जिसका रत्नसिंहासन ऐसी है महासना।

२३०. महायागक्रमाराध्या

महायज्ञ द्वारा क्रम-बद्ध तरीके से जिसकी आराधना महायाग, बड़ी पूजा से हो अर्थात् श्री महात्रिपुरसुन्दरी के जो अंग देवता हैं, वे आवरण पूजा में आते हैं, जैसे कामेश्वरी आदि १६ नित्या, गुरुमण्डल, आम्नायपूजन, पंचपंचिका पूजन, पंचलक्ष्मी, पंच-पंच कल्पलता, ५ कामदुधा, ५ पंचरत्न, ५ दर्शन, षडंगपूजा: त्रैलोक्यमोहनचक्र, सर्वाशपरिपूरकचक्र, सर्व-संक्षोभणचक्र, सर्वसौभाग्यदायक, सर्वार्थसाधक, सर्वरक्षाकर, सर्वरोगहरचक्र, सर्वसिद्धिप्रद, सर्वानन्दमय आदि। इनके अतिरिक्त भी पूजा में बहुत बड़ा विधान है। परन्तु साधक अपनी श्रद्धा और शक्ति के अनुरूप ही इस बहिर्याग पूजा को करते हैं। ६४ उपचार १६ उपचार पूजन, तर्पण, हवन, बलि आदि यज्ञ का विधान तो बहुत प्रकार के हैं, परन्तु जैसी परम्परा का क्रम और ज्ञान हो, साधक को

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

करना चाहिए। अनेक जन्मों की साधना से बाहर और भीतर (बहिर्याग और अन्तर्याग) से यह महायाग सम्पन्न हो पाता है।

२३१. महाभैरवपूजिता

महाभैरव जैसे कर्मठ और निष्ठावान् साधक ही इस साधना को कर पाये हैं सामान्य व्यक्ति क्या कर पाता है। महाभैरव भगवान शिव ही हैं। भैरव तीनों शब्द सृष्टि की उत्पत्ति, पालन तथा लय क्रमशः "भरण", "रमण" तथा "वमन" करते हैं। भगवती की उपासना माता रूप में तो संभव है परन्तु पत्नी रूप में देवी की भावना आत्मसात कर पाना भगवान भैरव (शिव) को ही संभव हुआ है, क्योंकि उनका सम्बन्ध ही ऐसा है।

२३२. महेश्वर महाकल्प महाताण्डव-साक्षिणी

कल्प के अन्त में जब कुछ नहीं रहता मात्र सदाशिव, जो अविनाशी हैं, तब ताण्डव-नृत्य करते हैं उसकी साक्षी उन्हें देखने वाली मात्र महाशक्ति भगवती ही हैं। परभैरव जब उग्रता में सर्वनाश का तांडव नृत्य कर रहे होते हैं माता उन्हें प्रसन्न-मुद्रा मंदहास से देखती है, ऐसी भीषणता में सौम्यता और सौंदर्य भगवती के लिये ही संभव है। तभी तो महाकामेश्वर की हृदयेश्वरी है।

२३३. महाकामेशमहिषी

महाकामेश्वर की पटरानी। जिसका सभी लोकपालों और देवी-देवताओं द्वारा महाअभिषेक होता है, वह राजमहिषी होती है।

२३४. महात्रिपुरसुन्दरी

श्रीमाता साधारण सुन्दरी नहीं हैं अपितु त्रिपुर सुन्दरी हैं अर्थात् तीनों पुर (वह स्थान जहां ब्रह्मा, विष्णु और महेश रहते हैं) में उसके समान कोई सुन्दरी ही नहीं है। त्रिपुर अनेक हैं यथा सत, रजस व तमस, इच्छा, ज्ञान और कर्म, जाग्रत, सुषुप्ति और स्वप्न या अकार, उकार और मकार (ओउम), ह, र, म आदि-आदि इन सब "पुरत्रयों" से महान है सौन्दर्य जिसका। अखिल ब्रह्माण्ड की सारी ज्योति उसके आलोक से ही है। यह नाम एक मंत्र भी है। शारीरिक सौंदर्य का द्योतक भी मानसिक व आध्यात्मिक सौंदर्य का भी। मुख लावण्य, मध्य में कोमल कांत कमनीयता तथा वाग्भव कूट में मंगलमय गति लता। मनोहर भावभूमिका में यह जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति स्थिति में स्थूल, सूक्ष्म व कारण शरीर धारण कर परमसत्ता से तादात्म्य करने वाली आत्मा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

का आलोक दर्शाता है। आध्यात्मिक जगत् में यह सूर्य, चन्द्र, अग्नि रूप में ज्योतिर्मय सौंदर्य है। ये ही शक्ति के तीन प्रधान स्रोत हैं इस संसार में। सूर्य: श्रीदेवी, चन्द्र: लक्ष्मी व अग्नि: शक्ति रूपा है जैसा श्रीसूक्त में भी है।

२३५. चतु:षष्ट्युपचाराढ्या

चौंसठ उपचारों से जो पूजा करने योग्य है। इन चौंसठ उपचारों का वर्णन परशुराम कल्पसूत्र में किया गया है। कुछ तंत्रों में ७२ उपचार बताए हैं। वरिवस्या रहस्य के अनुसार अन्य आठों में समर्पण के पश्चात् पुष्प धारण, दान, गुरुपूजा, शैव ग्रंथ पूजन, शिव के लिये अग्नि में बलिदान, शिव चरणामृत पान, प्राणाग्निहोत्र। यह प्रक्रिया भूतशुद्धि व प्राणप्रतिष्ठा भी कही गई है।

२३६. चतु:षष्टिकलामयी

चौंसठ कलाओं से युक्त। इन कलाओं का वर्णन वामकेश्वर तंत्र में किया गया है। जितनी कला संसार में दीखती हैं वे सब भगवती श्री माता की हैं, जैसे १६ कला चन्द्रमा की, १० अग्नि की, १२ सूर्य की इत्यादि। इनके अतिरिक्त काव्यकला, गायन कला, चित्रकला, नृत्य कला साथ ही तिलक लगाना, चौक बनाना, बेलबूटे काढ़ना, संकेत से बोलना, रत्नों को परखना, पकवान आदि बनाना लौकिक कलाएं भी हैं। चन्द्रमा की सोलह कलाएं अमृता, मानदा, पूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, घृति, शशिनी, चंद्रिका, कांति, ज्योत्स्ना, श्री, प्रीति, अंगता, पूर्णा और पूर्णामृता हैं।

श्रीधर के कठ-कोष और लक्ष्मीपीठिका के अनुसार निम्नलिखित ६४ कला हैं- १८ लिपियों का ज्ञान, २ व ३. इन १८ लिपियों के लिखने व पढ़ने, ४. विभिन्न भाषाओं का ज्ञान, ५. उनके अनुवाद सम्बन्धी क्षमता, ६. जुआ, ७. से १४. चार वेद तथा चार सहायक वेद, १५ से २६ बारह उप-विज्ञान, २७. तंत्र, २८ पुराण, २९. स्मृति, ३०. कविता, ३१. भाषण, ३२. नाटक, ३३. से ३८ जादू की विभिन्न कला, ३९. जिसमें शान्ति स्थापित करना, नियंत्रण, सम्मोहन, दुश्मनी/द्वेष, मारणकला आदि हैं ३९. से ४५. गति के विपरीत असर, जल, दृष्टि, आग, हथियार, भाषण, वीर्य, ४६ से ४९. हाथियों को प्रशिक्षण, घोडों, सारथी तथा व्यक्तियों को कौशल सिखाना, ५०-५३. मुद्रा/समुद्रिका, जिमनास्ट, पाककला, सर्प/गरूड विद्या, ५४. सुषिर, ५५. आनद्ध, ५६. घन ५७. इन्द्रजाल, ५८. नृत्य, ५९. गायन, ६० सुनार, ६१ रत्न परखना, ६२. चोरी, ६३ दाल सम्बन्धी ज्ञान व ६४. गायब होने की कला।

२३७. महाचतु:षष्टिकोटियोगिनीगणसेविता

चौंसठ करोड़ योगिनी जिन की सेवा के लिये हमेशा तत्पर रहती

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
हैं। चन्द्र मानव मन का प्रतीक है। मानव शरीर में मूलाधार से सहस्रार तक भावभूमिकाएं कलामयी के कलानिकेतन हैं। यदि मूलाधार इकाई मान लिया जाए तो स्वाधिष्ठान दुगुनी कला को आत्मसात् कर लेता है, मणिपूर उससे दुगुनी या मूलाधार की चारगुनी, अनाहत ८. विशुद्ध १६, आज्ञा ३२. तथा सर्वोपरि सहस्रार चौंसठगुनी मात्रा में आत्मकला का रूप धारण कर लेती है, जोकि कलामयी का कलानिकेतन है। इसी की आराधना शरीर के विभिन्न अंग करते रहते हैं, चाहे वे कर्मेन्द्रिय हों, ज्ञानेन्द्रिय, नाड़ियां, कोशिकाएं, धमनी, शिरा सभी अपनी प्रक्रियाओं द्वारा आत्मा के आनंद के लिये शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध के माध्यम से प्रयास कर रही हैं। आत्मा का आनंद ही ललिता का कला-विलास है, यही इस लीलाधाम का भेद है

२३८. मनुविद्या

श्रीविद्या के प्रमुख १२ उपासक हुए हैं, उनमें से मनु प्रथम थे, जिननें श्रीविद्या की उपासना की है। अन्य ११ हैं: चन्द्र नाम के ऋषि, कुबेर, लोपामुद्रा, मन्मथ या कामदेव, अगस्त्य, अग्नि, सूर्य, इन्द्र, स्कन्द, शिव और क्रोधभट्टारक या दुर्वासा। इनके अलावा नन्दिकेश्वर तथा ब्रह्म भी कहे गये हैं। मनु ने श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी की उपासना करके मन्त्र सिद्ध किये थे, ऐसा ज्ञानार्णव में उल्लेख है। परमसत्ता का तात्विक ज्ञान ही विद्या है, जो कई प्रकार की हो सकती है मानसिक, भौतिक, कर्मप्रधान या ज्ञानप्रधान, प्रवृत्तिमूलक या निवृत्ति मूलक, अन्तर्मुख या बहिर्मुख। मार्ग कोई भी हो ध्येय एक ही होता है कि संसार के सार का सही बोध। श्रीमाता के उपासक इसे श्रीविद्या कहते हैं।

२३९. चन्द्रविद्या

उपरिलिखित चन्द्र नामक ऋषि ने मनु के बाद श्रीविद्या की उपासना की तथा इसी परंपरा में कई सहायक मंत्रों का आविष्कार किया।

२४०. चन्द्रमंडल-मध्यगा

चन्द्र मंडल में जाने वाली यही महाशक्ति है, जोकि कुंडलिनी के रूप में मूलाधार से चलकर सहस्रार पहुंचकर सकल शीतरश्मि में प्रवेश कर अमृताप्लावन करती है तथा परमानंद-मग्न हो जाती है और साधक उसमें तन्मय होकर परमानन्द में मिल जाता है। श्रीचक्र को ही चन्द्रमण्डल माना गया है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२४१. चारुरूपा

सुन्दर रूप वाली की यह संचरणशीलता को दर्शाने वाला नाम है। जो सर्वत्र संचरण करती है वह सर्वांग सुंदरी। जैसा कि सौंदर्य लहरी में भी कहा है कि "त्वदीयं सौंदर्य तुहिनगिरकन्ये तुलयितुम्'' अर्थात् आपकी सुन्दरता सारे ब्रह्माण्डों में व्याप्त है, इसको प्राकृतिक सौंदर्य कहते हैं जैसे पर्वतमालाओं की सुन्दरता, समुद्र, नदी, जड़, चैतन्य, पशु-पक्षी, पुरुष-स्त्री, बालक आदि में तेरा ही सौंदर्य व्याप्त है, वह अकथनीय सौंदर्य है।

२४२. चारुहासा

सुन्दर हास्यमय है मुखारविन्द जिसका। स्मेरमुखी है, आपका हंसमुख वदनारविन्द है। आपके स्मरण मात्र से भक्त आनंदमग्न हो जाता है और प्रसन्न-चित्त रहता है। चिर-हसित-विलासिनी है जो। चारु से तात्पर्य चित्त में संचरण हास यानी विलास या प्रसन्नता। मधुर मुसकान जिसके चित्त में सदा बसती रहती है।

२४३. चारुचन्द्रकलाधरा

सुन्दर चन्द्रमा की कला को धारण करने वाली-अर्थात् आपने असंख्य चन्द्रमाओं को, सौंन्दर्य बढ़ाने के लिये १६ कला दी हैं। उनके नाम हैं-अमृता, मानदा, पूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, धृति शशिनी, चन्द्रिका, सुकान्ति, ज्योत्स्ना, श्री, प्रीति, अंगदा, पूर्णा, पूर्णामृता। ये ही १६ कलाएं तंत्रों में पात्रा-स्थापन के प्रयोग में आती है।

चन्द्रकला नाम की एक राजकुमारी थी उसको स्वप्न में देवी ने कहा कि उसका विवाह एक राजकुमार के साथ होगा जो सुदर्शन नाम का होगा, जोकि देवी की कामराजबीज स्वरूप की उपासना कर चुका था।

२४४. चराचर-जगन्नाथा

चर और अचर यानी पार्थिव और अपार्थिव जगत् उसकी नाथ अर्थात् अधीश्वरी स्वागिनी। क्योंकि आप ही इस जगत् को उत्पन्न करने वाली, पालन करने वाली और सब जगत को अपने में लीन करने वाली हैं।

सृष्टिकर्त्री ब्रह्मरूपा गोप्त्री गोविन्दरूपिणी
संहारिणी रुद्र-रूपा तिरोधानकरीश्वरी।।

२४५. चक्रराजनिकेतना

चक्रराज है निवास स्थान जिनका। श्रीचक्र में रहने वाली। नौ

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
चक्र हैं जिनके नाम हैः त्रैलोक्य-मोहन, सर्वाशापरिपूरक, सर्वसंक्षोभण, सर्वसौभाग्यदायक, सर्वार्थसाधक, सर्वरक्षाकर, सर्वरोगहर, सर्वसिद्धिप्रद, सर्वानन्दमय।

विन्दु, त्रिकोण, अष्टकोण, अन्तर्दशार, बहिर्दशार, चतुर्दशदल, अष्टदल वृत्तत्रय। इसका बृहत् वर्णन करने से बहुत बड़ा ग्रन्थ बन सकता है।

वस्तुतः जैसा आगे के कुछ नामों में वर्णित है कि चक्रराज मानव शरीर में विद्यमान है। योगशास्त्र में जिसे सहस्रार कहा है, हजार दल वाले कमल जो कि चिर प्रफुल्लित और नित्यनवीन रहता है तथा अन्य सभी चक्रों में प्रधान है, सर्वोपरि है और इसी से सभी चक्र नियंत्रित रहते हैं। शारीरिक-मानसिक प्रक्रियाओं को संचालित करने के लिये आज्ञाचक्र को यही चक्रराज आज्ञा देता है ऐसे सहस्रार में निवास करने वाली श्रीमाता।

२४६. पार्वती

पर्वतराज हिमालय की पुत्री होने से पार्वती। पर्वत का स्थान सबसे ऊँचा होता है और देवी पहाड़ पर ही रहती है अतः पार्वती। ऊंचाई के कारण पर्वत शीतल भी होते हैं, इसी तरह मनुष्य के शरीर में भी जितनी ऊंचाई बढ़ती है, वह उदार, शांत रहता है, जो पार्वती के ही लक्षणों को उद्धृत करता है।

२४७. पद्मनयना

कमल जैसे नेत्र हैं जिनके। कमल में सौंदर्य और आकर्षण होता है, मोहकता होती है, अतः भगवती अम्बुजाक्षी हैं। ऊंचे पर्वत पर विचरण करती हुई भगवती के नयन प्रफुल्ल और प्रसन्न दीख पड़ते हैं।

२४८. पद्मरागसमप्रभा

पद्मराग नाम की एक मणि होती है, वह लाल रंग की होती है, उसमें प्रकाश भी होता है। इसी प्रकार लाल और प्रकाशमान श्री अंग हैं जिनके।

पद्म शब्द मात्र कमल से तात्पर्य नहीं रहता, वरन् उससे भी अधिक अर्थपूर्ण है, जिसके अनुसार संसार में जो कुछ पाने योग्य है उस सर्वोत्तम वस्तु को कहते हैं। पद्म का तात्पर्य भगवती के पारमार्थिक से लिया गया है। जिससे वह पद्मोरू, पद्मसंभवा, पद्मप्रिया, पद्मावती, पद्मिनी, पद्माक्षी, पद्महस्ता, पद्मसंभवा पद्मानना आदि है। क्योंकि भगवती की एक कृपा मात्र से जीवन के सभी उद्देश्य पूर्ण हो जाते हैं तो उससे अधिक प्राप्य पदार्थ हो ही

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
क्या सकता है। अतः पार्वती 'पद्म नयना'' है। पद्म का एक नाम नाभि भी है, जिससे समस्त संसार का प्रजनन होता है। प्रजापति ब्रह्मा भी इसी पद्म से पैदा हुए। इस नाभि से ब्रह्म रन्ध्र के मध्य पद्मसूत्र हैं जो नाभिरंध्र से निकल कर ब्रह्मरंध्र में खुलकर पूर्ण विकसित होकर खिलता है, उसकी लालिमा से शरीर चमकता है। संसार में यही पद्मराग सूर्योदय से तात्पर्य रखता है, जिसकी शोभा पद्मराग है, संसार में जिससे स्फुरण आता है। पद्मराग एक रत्न भी है, जिसे माणिक कहा जाता है। श्रीमाता की शोभा-प्रभा पद्मराग की तरह ही लाल है। जिससे ब्रह्माण्ड लाल हो जाता है।

२४९. पंचप्रेतासनासीना

ब्रह्माविष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिव-इनको महाप्रेत कहते हैं। महाप्रेत और प्रेत में उसी प्रकार अंतर है, जैसे जीवात्मा और परमात्मा में। सब देव हैं, जिनपर महाशक्ति आसन बनाकर विराजमान है। इन देवताओं के हृदय में यह शक्ति बैठी है। यदि वह शक्ति इनमें आसन्न बिछा के न बैठे तो सृष्टि, स्थिति व संहार कैसे हो। जैसा कि श्री शंकराचार्य जी महाराज ने सौंदर्यलहरी में कहा है-"शिव:शक्त्यायुक्तो यदिभवतिशक्तः प्रभवितुं, नचेदेवं देवो नखलु कुशल:स्पन्दितुमपि'' अर्थात् शिव में शक्ति का निवास न हो तो वे कुछ भी कार्य निष्पादित करने में भला कैसे समर्थ हों। वही सबमें आसीन है, जिससे जीवन संचारित है। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर व सदाशिव पंच प्रेत हैं अर्थात् वे श्रीमाता की शक्ति से ही अपना कार्य-निष्पादित कर रहे हैं, बिना उसके वे निष्प्राण हैं, कुछ भी करने में असमर्थ हैं।

२५०. पंचब्रह्मस्वरूपिणी

उपर्युक्त पांच ब्रह्म का कार्य उत्पत्ति, रक्षण, संहार, तिरोधान और अनुग्रह है। श्रीमां की प्रेरणा से ही ये सक्रिय हैं और वही उनको उपर्युक्त अधिकार प्रदान करने वाली हैं अत: वही पंचब्रह्मस्वरूपिणी है। ब्रह्म या ईश्वर की उपासना पांच रूपों में होती है, हमारे शास्त्रों के अनुसार गणेश, शिव, सूर्य, विष्णु व दुर्गा पांचो ब्रह्म रूप में पूजे जाते हैं। इनके उपासकों को क्रमशः गाणपत्य, शैव, सौर, वैष्णव तथा शक्ति कहा जाता है। पंच ब्रह्म से शिव के ५ रूप : ईशान, तत्पुरुष, अघोर, वामदेव, सद्योजात है। लिंग पुराण के अनुसार जीव-प्रकृति पांच हैं बुद्धि, अहंकार, मानस आदि इनसे बुद्धि के पांच द्वार हैं: कान, त्वचा, आंख, जीभ तथा नासिका यह पंचब्रह्म रूप है। गरुड पुराण के अनुसार विष्णु संसार का पालन करता है, पांच रूप में वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध तथा नारायण है। शंकराचार्य कहते है कि माता जब खेलती है तब

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
वह उक्त पांच रूप धारणकर पंच ब्रह्म या पंच पुरुष बन जाती है। जब वह अपने नेत्र की ज्योति प्रकट करती है तो सूर्य तथा जब वह मुस्कराती है तब चन्द्र पैदा होता है।

२५१. चिन्मयी

जैसा कि आगे स्पष्ट किया है जब तक वह चिन्मयी शरीर में रहती है, तब तक प्राणी चलायमान रहता है तथा इस चिन्मयी के चले जाने पर मनुष्य तो क्या ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि भी तब तक हैं जब तक चिन्मयी अंदर है। परन्तु जब जीव सो जाता है तब सारे शारीरिक व्यापार तो बन्द हो जाते हैं। परंन्तु चिन्मयी अंदर होती है। अतः श्वास चलती रहती है और एक ज्योति निर्विराम जाज्वल्यमान रहती है, यही परंज्योति परमेश्वरी और "चिन्मयी'' है।

२५२. परमानन्दा

यही चिदाकर है। पांच कर्मेन्द्रिय, पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच तत्व और पांच तन्मात्रा जब चिदाकाश में लीन हो जाते हैं, तब प्रगाढ़ निद्रा का परमानंद मिलता है। यह बिना प्रयास, सहज ही मिलने वाला आनंद है, जो परब्रह्म की पावन भावना में लीन होने से मिलने वाले आनंद का आभासमात्र है। श्रुति के अनुसार जो अनन्त है वह "आनन्द'' ही है। जीवमात्र सुख की तलाश में रहता है, इसीलिये वह भटकता रहता है किन्तु फिर भी उसे शाश्वत सुख नहीं मिलता। मृगतृष्णा में लीन उस मनुष्य को आनंद मिलता भी है तो क्षणिक। भगवती ही आनंदमयी है, जो शाश्वत आनंद देती है, वह इन्द्रियों का सुख नहीं, बुद्धि का विषय है। जैसा कि गीता में कहा है- "सुखमात्यन्तिकंयत्तद् बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्''

२५३. विज्ञानघनरूपिणी

जो विज्ञान की निचोड़ है। घनीभूत ज्ञान या विज्ञान परमेश्वरी के स्वरूप को निरूपित करता है। क्योंकि वह सच्चिदानन्दरूपिणी है, यहां विज्ञान से तात्पर्य चैतन्य से भी है। ईश्वर वह "सत्'' है जो ज्ञानी को उसके "चित्'' (चिद्) अवस्था में अखण्ड "आनन्द'' प्राप्त कराता है। इस मनोभूमिका में ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय एकाकार हो जाते हैं, ज्ञान ही ज्ञान रह जाता है। ज़ानने वाले को कुछ जानने योग्य नहीं रह जाता, वह अनजान में एकाकार हो जाता है "या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते कहा है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

२५४. ध्यानध्यातृध्येयरूपा

जैसा कि पूर्वोक्त नाम में स्पष्ट हुआ है कि वैज्ञानिक, विज्ञान और जानने योग्य का अर्थात् ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय का अन्तर मिट जाता है, वहां ज्ञान ही ज्ञान रह जाता है, यहां उसी प्रकार ध्याता, ध्यान और ध्येय का अन्तर मिट जाता है, और मात्र ध्यान ही ध्यान रह हाता है। वही राजराजेश्वरी ध्यान-रूपा होकर उपासक के अन्तःकरण में है। अतः वहीं ध्यान ध्यातृ और ध्येय है।

२५५. धर्माधर्म-विवर्जिता

अधर्म या धर्म दोनों से रहित। उसको पाप स्पर्श कर ही नहीं सकता, न धर्म या अधर्म। वह सबसे रहित है। वह निर्लिप्त है। वह तो अग्निपुंज है, जिसमें सब कुछ भस्म हो जाता है, भला पाप और अधर्म उसके निकट आ ही कैसे सकते हैं। जब किसी बातचीत या क्रिया या ध्यान क्रिया का लक्ष्य या विषय भगवती हो तो वह कार्य तो धर्म सम्मत हो जाता है, वहां यह चर्चा करना कि वह कर्म धर्म सम्मत है या अधर्म सर्वथा व्यर्थ है। धर्म और अधर्म सदाचार और बुराई है। मत्स्य-पुराण के अनुसार धर्म धारणा से पैदा होता है। एक जो वांछित फल को देने का काम करता है, दूसरा उसके विपरीत है। याज्ञवल्क्य-स्मृति अनुसार त्याग, सच्चरित्र, संयम, अहिंसा, पवित्र ग्रन्थों का अध्ययन ही धर्म है। त्रिपुरा-उपनिषद् के अनुसार न जिसका कोई अन्त है, न आदि, न बंधन, न उच्चाकांक्षा, न इच्छाएं और न ही स्वतंत्रता की इच्छा वही सत्य है''।

२५६. विश्वरूपा

सारा विश्व ही जिसका रूप है जैसा कि श्रीमद्भागवत में कहा है कि "खं वायुमग्निं सलिलं महींश्च ज्योतींषिसर्वाणि दिशो द्रुमादीन्, सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरम् यत्किंचभूतं प्रणमेदनन्यः। अर्थात् आकाश, हवा, अग्नि, जल, पृथ्वी, नक्षत्र (तारे) चन्द्र, सूर्य, दिशा, वृक्ष, नदी, समुद्र सब कुछ ईश्वर है। यही विश्व है जो भगवती का रूप है।

विश्वरूपा कृष्ण पक्ष के १५ दिनों के पांचवे दिन का नाम भी है।

(तै० ब्रा० ३.१०.१० के अनुसार) १. दर्श, २. दृष्टा, ३. दर्शना, ४. विश्वरूपा, ५. सुदर्शना, ६. प्यायमाना, ७. आत्यायमाना, ८. प्याया, ९. सूनृता, १०. इरा तथा अपूर्यमाणा, १२. पूर्यमाणा, १३. पूरयन्ती, १४, पूर्णा, १५.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पूर्णमासी

शुक्लपक्ष के दिनों के नाम हैं:-१. संज्ञान, २. विज्ञान, ३. प्रज्ञान, ४: ज्ञानद, ५. अभिज्ञानद, ६. संकल्पमान, ७. प्रकल्पमान, ८. उपकल्पमान, ९. उपक्लृप्त तथा तीसरे खण्ड में १०. क्लृप्त, ११. श्रेयस, १२. वसीय, १३. आयत , १४. संभूत, १५. भूत

श्रुति अनुसार दिन और रात के दो भाग (शुक्लपक्ष के) हैं: संज्ञान, विज्ञान तथा दृष्टा व दर्श। दशमी भेदा एकादशी होने पर अगले दिन को एकादशी मानते हैं। पंचदशी मंत्र के तीन कूट अग्नि खण्ड, सूर्यखण्ड तथा चन्द्रखण्ड हैं।

अत: शुक्लपक्ष की चौथी रात्रि "विश्व" है इसके अलावा पंचदशी का चतुर्थ शब्दखण्ड भी वही है अत: भगवती विश्वरूपा है, क्योंकि वह इन तीनों से अलग नहीं है।

कृष्ण पक्ष का पांचवा दिन भी विश्वरूपा है ये १५ दिन हैं-

१. प्रस्तुत, २. विष्टुत, ३. संस्तुत, ४. कल्याण प्रामि खण्ड, ५. विश्वरूप, ६. शुक्र, ७. अमृत, ८. तेजस्विन, ९. तेजस, १० समिद्ध तृतीय खण्ड में ११. अरुण, १२. व १३. मरीचमत्, १४. अभितपत, १५. तपस्वत्

इसी प्रकार रात्रि (कृष्णपक्ष) हैं:

१. सुता, २. सुन्वती, ३. प्रसूत, ४. सूयमाणा, ५. अभिसूयामाणा, ६. प्रीति, ७. प्रपा, ८. संपा, ९. त्रिप्ति, १०. तर्पयन्ती, ११. कान्ता, १२. काम्या, १३. कामाजाता, १४. आयुष्मती, १५. कामदुधा

२५७. जागरिणी

हमेशा जागृत रहने वाली। जैसा पहले पूर्व नाम में स्पष्ट हुआ है कि जीव ही जागृति है तथा उससे सम्बन्धित शारीरिक अवयव ही "विश्व" है। जागृतावस्था में मानव कार्यरत रहता है तब हमारा वैश्वानर या व्यापक रूप हमारे सामने आता है। और जब मानव सोता है तो उसका भीतरी प्रकाश अपना काम तब भी जारी रखता है हालांकि बाहरी क्रियाकलाप बन्द हो जाते हैं, अत: जागरिणी है।

२५८. स्वपन्ती

सुप्तावस्था में स्वप्न आदि दीखते हैं इस अवस्था में जीव अपने तेजस रूप में होता है और मस्तिष्क की विकृति ही उसे स्वप्न दिखाने में सहायक होती है।

सोती हुई अथवा स्वप्नावस्था में तेजस रूप वाली जाग्रत अवस्था में सृष्टि का होना, स्वप्नावस्था में पालन और सुषुप्ति अवस्था में संहार।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

स्वपन्ती सोने की अवस्था में स्वप्न यही है कि अनेकों ब्रह्माण्डों की रचना करके फिर उस नाटक (खेल) या लीला को देखती है। तेजस (ज्ञान) या बोध कभी नहीं सोता। तेजस शक्ति तो नित्य बनी ही रहती है।

२५९. तैजसात्मिका

कोटितडिल्लता:। बिजली का प्रकाश ही भगवती का ज्ञानरूप है। हिरण्यगर्भ जोकि जीव को उसके सम्यक् रूप में प्रस्तुत करता है। इस सुप्तावस्था में मन का राज्य रहता है। जब गहरी नींद सोता है, तब वह शारीरिक या मानसिक अनुभवों से परे हो जाता है ऐसी अवस्था में।

२६०. सुप्ता

सुषुप्त अवस्था में अविद्या के तीन रूप सामने आते हैं। अचेतन या अज्ञान, अहं तथा सुख या प्रसन्नता तब प्रज्ञान ही शेष रहता है। जो नींद खुलने पर तन और मन के द्वार पुन: खोल देता है।

२६१. प्राज्ञात्मिका

प्रज्ञा युक्त, जो कभी सोती नहीं, आत्मा की वह एक लौ है। वह सर्व-समर्थता दिखाने, सामान्य जीवों का जीवन वृत्त दिखाने को सोना जागना स्वप्नावस्था दर्शाती है। यह ईश्वर का वह रूप है, जिसमें जीव का सम्यक् रूप है। यह जागृति, स्वप्न, सुषुप्ति से परे चौथी अवस्था है।

२६२. तुर्या

इस चौथी अवस्था में प्रज्ञा भी आत्मा में लीन हो जाती है। आत्मा को छोड़ किसी और की अनुभूति नहीं रहती, इस अवस्था में शुद्धविद्या को प्राप्त किया जा सकता है। मनीषियों ने इस पर बहुत कुछ अनुभव किया और लिखा है।

२६३. सर्वावस्थाविवर्जिता

उपर्युक्त वर्णित चारों अवस्थाओं से रहित जब प्रज्ञा आत्मा में लीन हो जाती है ओर आत्मा की ही आनंद-लीला चलती है, इस अवस्था में देवी शक्ति विराजमान रहती है, जिसे सर्वावस्था-विवर्जिता कहा गया है।

इस प्रकार चार अवस्थाओं में परमेश्वरी के चार रूप, जागृत में विश्वरूप, स्वप्न में तेजस और सुषुप्ति में प्राज्ञ तथा तुरीय अवस्था में परमानन्द रूप होता है, सबमें वही एक शक्ति कार्यरत है और व्यक्ति इस शक्ति

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

का साक्षात्कार पा रहा होता है, जिसे अनुभव कर कोई समझता है तथा कोई नहीं समझ पाता।

वस्तुत: यह जीव की पांचवीं अवस्था है। यह तुरीय से परे है।

२६४. सृष्टिकर्त्री

जीव की पांच अवस्थाओं के बाद क्रियाओं का उल्लेख है। जागृतावस्था में सृष्टि पैदा करती है। भगवती ब्रह्मा रूप धारण कर सृष्टि कार्य निष्पादित करती है।

२६५. ब्रह्मरूपा

ब्रह्मा के रूप में वही है जो उसको प्रेरित करती है। और मूलाधार में विराजित इस ब्रह्मा की शक्ति से सृष्टि होती है। रजोगुण स्वरूपा।

२६६. गोप्त्री

वह संसार की रक्षक है। ईश्वर अपने सत्त्व गुण से सबकी रक्षा करता है।

२६७. गोविन्दरूपिणी

गोविन्द के रूप में भी वही सबका पालन-पोषण करने वाली है। पालन करने वाले विष्णु, देवों के राजा इन्द्र, भारत, बृहस्पति रूप भी गोविन्द के ही हैं।

२६८. संहारिणी

तामस गुण के द्वारा वह संसार को पुन: संहार करके तिरोहित कर अणु में परिवर्तित कर देती हैं।

२६९. रुद्ररूपा

-उपर्युक्त वर्णित संहार कार्य के लिये वह रुद्र की शक्ति बनती है।

अति सौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमोनम:। वह अति सौम्य भी है। आनंदवर्षा करने वाली है और अति रुद्र है। वह भक्तों के कष्टों को नाश करने के लिए भी अतिरुद्र रूप है, छ: काम, क्रोध, लोभ मोह, अभिमान, तृष्णा को बलात् निकालने वाली है। भगवती अपने तीसरे नेत्र जो कि उसके मस्तक

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

के मध्य में है, खोलती है, उससे आंसू निकलने पर सृष्टि का लय हो जाता है।

२७० तिरोधानकरी

तिरोधान अर्थात् लुप्त करना या अदृश्य हो जाना। भक्त को अपने में लीन करना या छुपा लेना। स्वयं भी तिरोहित हो जाना। संहार में ब्रह्माण्ड में अणु का भी संहार नहीं है, परन्तु तिरोधान में समस्त तत्त्व को प्रकृति में समाहित करने लेने से तात्पर्य है। जैसा पहले भी स्पष्ट किया गया ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव जो पांच कृत्य करते हैं, वे हैं उत्पत्ति, रक्षण, संहार, तिरोधान व अनुग्रह ये ही पांच सृष्टि के रूप हैं। और इसीलिए वह पंच प्रेतासनासीना या पंच ब्रह्मस्वरूपिणी है। तो तिरोधान इसका चौथा रूप है।

२७१. ईश्वरी

वही एकमात्र सबकी ईश्वरी है। वही एक स्वतंत्र है। सबकी स्वामिनी हैं।

२७२. सदाशिवा

सत्व गुणों पर उसका ही सर्वोच्च अधिकार है। वही ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सूर्य, गणपति इत्यादि की पूज्या सदाशिवा है। सदा स्थिर रहने वाली है।

२७३. अनुग्रहदा

सृष्टि का पांचवा रूप है अनुग्रह। समस्त सृष्टि को तिरोहित कर वह सदाशिव की सदाशिवा बनकर सबको अनुगृहीत करती रहती है। पुन: पैदा करती है

जो उसकी शरणागत हो जाता है उसको वह कृपा प्रदान करती है।

२७४. पंचकृत्यपरायणा

सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोधान व अनुग्रह इन पांच कृत्यों का विधिवत् निर्वाह करनेवाली इससे स्वयं को और दूसरों को भी कृतकृत्य करने वाली। यही पंचभौतिक लीला कही गयी है। भौतिक जगत में ये रोशनी या

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
प्रकाश, आकर्षण, असंतुष्टि, विलाप तथा बीजारोपण है।

२७५. भानुमण्डलमध्यस्था

सूर्य के मण्डल में विराजमान रहकर जो सूरज को प्रकाशित करती है। प्रातः संध्या में आदित्य के बीच में भगवती का ध्यान किया जाता है-बालाम्बालादित्य मण्डल मध्यस्थां रक्तवर्णां..'' इत्यादि।

द्वितीय कूट का बालसूर्य के प्रकाश का ध्यान किया जाता है।

तीसरा तात्पर्य यह हो सकता है कि मार्तण्ड भैरव (सूर्य) ने महातेज श्रीजी की उपासना की है, तो उपासक में उपास्य (इष्टदेव) निवास करता है, इसलिये भानु में निवास करने वाली भानुमण्डल-मध्यस्था।

सूर्य से नेत्रों को ज्योति मिलती है व नेत्र हृदय में विश्राम करते हैं, अतः हृदय में सूर्य मण्डल का प्रतिरूप है। यहां अनाहत चक्र भी है। हृदय से निकलने वाली सौ नाड़ियों में प्रमुख तीन इडा, पिंगला व सुषुम्ना है, जो सूर्य, चन्द्र व अग्नि का संचार मार्ग कही जाती है। सुषुम्ना सूर्य व चन्द्र नाडियों को संतुलित करतीं रहती है।

२७६. भैरवी

भैरव की शक्ति भैरवी। भय से त्रस्त लोगों की भय से रक्षा करने वाली भैरवी। स्त्रियों को भीरु भी कहा जाता है, अतः यह नाम स्त्री-वाचक है। लिंग-पुराण के अनुसार शिव दिन और देवी रात्रि है। त्रिपुराचक्रेश्वरी मंत्र के मध्य में भैरवी मंत्र आता है। धौम्य के अनुसार बारह वर्षीय कन्या को भैरवी कहा जाता है। भौतिक जगत में आंखों को ज्योति सूर्य से मिलती है, जीभ से बोलने की शक्ति, शरीर में स्थित ज्वाला से तथा मन द्वारा सोचने की शक्ति चन्द्रमंडल से मिलती है। अतः ये तेज "अंडे तद्ब्रह्माण्डे'' के रहस्य को समझाते हैं। सूर्यमंडल की किरण ज्योति और प्राणदायक होती है। यह दंड भी धारण करती है। जो शरीर के खराब तत्वों को नष्ट करने के काम आता है। दंड से भय को दूर भी किया जा सकता है और भैरवी अपनी भयंकर मुखमुद्रा से भय दिखाने वालों और दुष्टों को भयभीत भी करती रहती है तथा स्वजनों और अपने शरणागतों को अभय भी करती है।

२७७. भगमालिनी

छः प्रकार के ऐश्वर्य को धारण करने वाली। भग का तात्पर्य-ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रिय। ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीरितः।। इन छः वस्तुओं को भग कहा जाता है। वैसे संसार का समस्त

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

ऐश्वर्य उसकी ही देन है। बारह आदित्यों में एक "भग" भी है। भग का अर्थ प्रकाश, सौभाग्य और सौंदर्य भी है। पंद्रह नित्याओं में एक नित्या "भगमालिनी" भी है।

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२७८. पद्मासना

कमल पर बैठी हुई। कमल है आसन जिनका अथवा लक्ष्मी को कमला कहते हैं। पद्मासन एक आसन भी है, जिसमें यह आसन लगाकर बैठने वालों का मेरूदण्ड सीधा रहता है। जिससे तीन प्रमुख नाडियां शुद्ध स्थिति में आ जाती हैं। योगियों के लिये यह प्राथमिक पाठ है। "जिससे सब कुछ पाया जा सके वही पद्म है"।

२७९. भगवती

जैसा कि भगमालिनी में सुस्पष्ट हुआ है भग धारण करने वाली भगवती। जिसमें छः गुण हैं वही भगवती। देवी भागवत में आता है-

"उत्पत्तिं प्रलयंचैव भूतानां गतिमागतिम्, अविद्या विद्ययोस्तत्वं वेत्तीत्ति भगवत्यसौ। शक्ति-रहस्य के अनुसार भग शब्द "भज्" धातु से बना है अब चूंकि सभी देवी-देवताओं ने देवी की उपासना की तथा उनसे वरदान पाये, अतः वह भगवती है।

२८०. पद्मनाभ-सहोदरी

पद्मनाभ अर्थात् पद्म यानी कमल जिनकी नाभि से निकला, वे हैं विष्णु। विष्णु की सहोदरी अर्थात् बहिन। कृष्णावतार में सुभद्रा कृष्ण दोनों का जन्म देवकी के पेट से ही हुआ, अतः सुभद्रा का अवतार श्रीकृष्ण का अवतार एक ही उदर से होने के कारण वह उनकी सहोदरी है। एक गुप्त अर्थ यह भी बताया गया है कि यह कादिविद्या के वाग्भव कूट को इंगित करता है। इसका पूर्व नाम पद्मासना "क" शब्द की ओर, भग "ए" तथा वती कामकला यानी ए व ई, पद्मानाभ से "स" होद से ह व म तथा री से मिलकर बीजमन्त्र पूर्ण बन जाता है।

२८१. उन्मेष-निमिषोत्पन्न-विपन्न-भुवनावलिः

पलक उठने से सृष्टि की उत्पत्ति तथा पलक बन्द करना ही सृष्टि के संहार की ओर इंगित करता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

तवोन्मेषाज्जातं जगदिदमशेषम्प्रलयतः।

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

परित्रातुं शक्यः परिहृत निमेषास्तवदृशः।।

निमेषोन्मेषाभ्यां प्रलयमुदयं याति जगती।

क्योंकि भगवती के पलकों के खुलने और बन्द होने से सृष्टि की उत्पत्ति और संहार का क्रम चलता है, भगवती अपने पलकों को कभी बन्द ही नहीं करती। मनुष्य की ही लौकिक आंखों को ही देखा जाये तो वह कितनी आश्चर्यजनक वस्तु है, इसके खुलते ही संसार का नश्वर सौंदर्य खुल जाता है, जबंकि बन्द होने पर अन्तर्मुख आंख खुल जाती है। यह एकाग्रता के समय भौंह के मध्य मिलती है और एक हो जाती है तथा विश्राम के समय हृदय में। यही द्वैत और अद्वैत का अन्तर प्रकट करने का साधन है। यहां जब लौकिक नेत्रों के उन्मेष और निमेष में सृष्टि का और प्रलय का पलक झपकने से ही अन्तर स्पष्ट हो जाता है, तो भगवती के अलौकिक नेत्रों के उन्मेष और निमेष में सृष्टि और प्रलय के घटित होने में कोई आश्चर्य नहीं है। उनका नेत्रोन्मीलन ही सृष्टि और निमीलन ही प्रलय है।

२८२. सहस्रशीर्षवदना

भगवती "प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत्" रूप से सहस्रशीर्षवदना है। वह मात्र अपने अलौकिक शरीर ही धारण नहीं करती अपितु सब संसार के सभी मनुष्यों, जीवों के शरीर में हैं। अनेकानेक रूप के मानव सब उसके ही रूप हैं। सहस्र यानी हजारों या असंख्य। वेद में यही संख्या विष्णु की है-सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्ष सहस्रपात्। जिसके हजारों सिर हैं, चेहरे दिल और दिमाग हाथ-पैर आदि हैं।

२८३. सहस्राक्षी

हजारों या असंख्य हैं नेत्र जिसके। मात्र अलौकिक या सूर्य, चन्द्र और अग्नि के रूप में ही नहीं अपितु वह सबकी नजरों से देवी है। या कहें हम सब उसके नेत्र से ही देखते हैं।

२८४. सहस्रपात्

हजारों पैर हैं जिसके। पात् किरण को भी कहते हैं। जैसे सूर्य की किरण।

सहस्रनयनारामा सहस्रकर संयुता, सहस्रशीर्ष चरणा भाति दूरादसंशयम्

वह सबके पैरों से चलती है। गुप्त अर्थ यह भी बताया गया है

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
कि उपर्युक्त चार नामों से पंचदशी विद्या के वाग्भव कूट को इंगित करता है। भुवनावलि से भुवनेश्वरी के दो बीजाक्षर, सहस्राक्षी से "ल" तथा सहस्राक्ष से ह व स इंगित होते हैं।

श्री विष्णु सहस्रनाम में "सहस्रमूर्द्धा विश्वात्मा सहस्राक्ष:, सहस्रपात् हैं।

२८५. आब्रह्मकीटजननी

ब्रह्मा से लेकर कीड़े पर्यन्त सबकी जननी, सबकी माता। समस्त ब्रह्माण्ड की रचयिता।

२८६. वर्णाश्रम-विधायिनी

वर्ण और आश्रम का विधान बनाने वाली। भगवती ने न केवल सृष्टि को उत्पन्न किया, अपितु उसका नियमन, व विधान भी अपने संकेत मात्र से किया। उसने इस हेतु वेद की रचना की, जिनको दो भागों में बांटा जाता है। कर्मकाण्ड तथा ब्रह्मकाण्ड। देवताओं और पशुओं का कर्मकाण्ड में कोई भाग नहीं। कर्मकाण्ड से मनुष्य के लिये धर्म संस्थापित किया ताकि मनुष्य के लौकिक सुख की ही नहीं अपितु उसके पारलौकिक कल्याण का विधान हो सके। अत: उसने निश्चित व्यवस्था के अन्तर्गत मनुष्य की वर्ण-व्यवस्था और तदनुसार कर्म भी निर्धारित किये। गीता में भी कहा है-

चातुवर्णं मया सृष्टं-गुणकर्म विभागश:। वर्ण क्रम है- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र तथा आश्रम हैं-ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वाणप्रस्थ व संन्यास।

योग कर्म में-ज्ञानयोग, कर्मयोग तथा भक्तियोग। धर्म की स्थापना माता ने वेदों के द्वारा ही की है। इन वेदों की रक्षा के लिये ब्राह्मणों की व्यवस्था की उन्हें कर्म प्रदान किया। वह सबकी माता है सबका हित सोचने वाली है, सबको प्रेम करती है, अत: वर्ण-व्यवस्था सामाजिक ऊंच-नीच के लिये नहीं बल्कि सबके समन्वित और क्रमबद्ध-विकास के लिये की है, ताकि मनुष्य अंधकार से प्रकाश तथा असत्य से सत्य, अज्ञान से ज्ञान ले जा सके।

२८७. निजाज्ञारूपनिगमा

जिनकी आज्ञा ही वेद है। वेद से तात्पर्य है ज्ञान से। जिसके द्वारा सब कुछ जाना जाये, वह वेद है। इतिहास-पुराणपांचवे वेद हैं। तात्पर्य यह है कि वेद लोक की मर्यादा व्यवहार आचार-विचार का मूल कारण है, इसको पुराणों और इतिहासों में उपनिषदों में वेद का अर्थ रूपान्तर से वर्णन किया है। भगवती वेदमय है, वेद जिनकी वाणी है वेद ही जिनकी आज्ञा है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

प्रकृति की प्रत्येक घटना भगवती की ही आज्ञा है यथा पृथ्वी की ऊपरी सतह पर उर्वरता, ऋतुएं। मानव शरीर की विभिन्न अवस्थाओं के अनुसार उसमें बचपन का भोलापन, यौवन काल की मादकता आदि। अवस्थाओं के अनुसार ही नियम जैसे कि ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ आदि ही उसके नियम हैं।

अट्ठाईस शैव तंत्र हैं, जिनके प्रारंभ में कामिका है। जो वेद का अनुसरण करते हैं, वे ही निगम हैं ये परमेश्वर के मुख से निकले हैं। "शिव के सद्योजात मुख से कामिका आदि पंचतंत्र निकले हैं। दीप्त आदि उनके वामदेव मुख से। विजय आदि पाँच अघोर मुख से, वैरोचन आदि पांच तत्पुरुष के तथा प्रोद्गित आदि आठ तंत्र इत्यादि उनके ईषानमुख से निकले हैं- ऐसा देवी भागवत तथा स्कन्दपुराण में है।

२८८. पुण्यापुण्य-फलप्रदा

पुण्य और पाप का फल देने वाली। स्वर्ग और नरक का फल देने वाली। 'ये न कुर्वन्ति त्द्धर्मं तदर्थं ब्रम्हणा कृता:,

निरयास्तेषु शमन: पातर्येतान्मदाज्ञया।

धर्मं कुर्वंति वेदोक्तं ये मद्भक्ति परायणा: स्वर्गादिषुशचीशाद्या-स्तान्नयन्तिमदाज्ञया।।

दण्ड के बिना शासन नहीं हो सकता। अत: भगवती ने शासन के लिये कर्म के अनुसार फल देने की शक्ति स्वयं पर रखी है। जो अच्छा काम करता है उसे अच्छा फल तथा बुरे के लिये बुरा फल देती है। जो काम स्वयं को आनंद देने वाला और दूसरों को दुख या उत्तेजना पहुंचाए वही पाप है, उसका फल स्वर्ग-नरक रूप में अर्थात् "अत्रैव स्वर्ग:नरक" के अनुसार संसार में ही उसके कर्मों का फल भोगना पड़ता है। पाप और पुण्य का अन्तर हमें अन्त:करण से मालूम पड़ता है, अत: हमारा संकल्प और आचरण शुद्ध होने चाहिए।

२८९. श्रुतिसीमन्तसिंदूरीकृतपादाब्जधूलिका

वेदों के जो सीमन्त उपनिषद उनकी सिंदूरी भगवती पदरज-धूल के समान हैं, अत: साधक को उनके चरणों का ही आश्रय लेना चाहिए। श्रुति के नाम से प्रसिद्ध वैदिक वाङ्मय परमेश्वरी के पद-रज से पावन बन जाता है। भगवती के चरण कमलों की सिंदूरी धूल का ही प्रताप है कि वह श्रुति की मांग को सिंदूर से अलंकृत कर उन्हें सजीव और अर्थपूर्ण बनाता है। अर्थात् निगम (विद के मंत्र भाग ब्रह्मकांड) आंतरिक और आगम बाहरी ज्ञान भगवती के चरणरज के समान ही हैं।

CC0. In Public Domain Kirtiman Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२९०. सकलागमसन्दोहशुक्तिसंपुटमौक्तिका

समस्त निगम और आगम एक सीप के समान भगवती के मुखारविंद से निकले मोती हैं जैसे रुद्रयामल में भी कहा है-यद्वेदैर्गम्यते स्थानं तत्तंत्रैरपि गम्यते। दूसरा अर्थ यह कि समस्त वेद, तंत्र, मंत्र, यंत्र, वेदान्त-शास्त्र, विज्ञान आदि सीप के समान ही हैं तथा भगवती की भावना ही उनमें मोती है, बिना मोती सीप का कोई महत्त्व नहीं, और बिना भावना के इन सब ज्ञान का कोई महत्व नहीं अत: ज्ञान को भावना का संबल आलोक से मिलता है, लोक से नहीं। ज्ञानी उद्धव भी गोपियों की भक्ति के सन्मुख नतमस्तक हो गये थे, क्योंकि उद्धव के पास सीप तो था मोती नहीं, जबकि कृष्ण के आलोक से आलोकित गोपियों के पास मोती तो था सीप तो गौण रह गयी। उसके न होने से उन्हें कुछ अन्तर नहीं पड़ा।

२९१. पुरुषार्थप्रदा

चार पुरुषार्थों को देने वाली वे हैं धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।

एक अर्थ कि पुरुष और अर्थ की संधि से बना है यह शब्द। पुरुष शिव हैं तथा अर्थस्वातंत्र्य है। यह पार्थिव जीवन परमार्थिक बनने पर ही सार्थक होता है तथा ऐसा बनने के लिये उपर्युक्त चार सोपानों की पहले आवश्यकता है। अर्थ से तात्पर्य मात्र धन आदि नहीं, यह तो जीवन सुगम बनाने का साधन मात्र है। इसके प्राप्त होने से जीवन चरितार्थ तो नहीं हो जाता। "अर्थ'' के स्वातंत्र्य से तात्पर्य "आत्मा'' से भी है जो मात्र स्वतंत्र है। उसे कोई बांध नहीं सकता। और आत्मा द्वारा ही भगवती की आराधना या पूजा की जा सकती है। पूजा भौतिक पदार्थों से नहीं की जा सकती, इसके लिये आत्मा का समर्पण आवश्यक है। धर्म ही अर्थ को सार्थक बनाता है वरना यह स्वार्थभर बन जाता है। काम भी धर्म के कारण प्रेम का रूप धारण कर लेता है वरना यह वासना हो जाता है। मोक्ष जो जीवन का चरम लक्ष्य है चारों भगवती की ही कृपा से प्राप्त होते हैं।

२९२. पूर्णा

पूर्ण ब्रह्म या परब्रह्म। पूर्णा पंचदशी विद्या को भी कहते हैं। पूर्णमद: पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदुच्यते, पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवाऽवशिष्यते। वह समय, स्थान या स्थितियों की सीमाओं से पर है, अत: पूर्ण है। पूर्णा पांचवी, दसवीं, पंद्रहवीं नित्या, शुक्लपक्ष की चौदहवीं रात्रि तथा एक नदी का भी नाम है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
पुरुषार्थ को प्रदान करने वाली पूर्णा ही हो सकती है। क्योंकि जीवन में जब अर्थ और काम तो मनुष्य को स्वार्थी, अनर्थी और पशु या भोगी ही बना सकता है परन्तु धर्म के अनुसार होने से यह समुचित होता है और अर्थ और काम के बिना धर्म भी कोरा वाक्य-ज्ञान बनकर रह जाता है। ये तीनों समुचित न हों तो मोक्ष भी कल्पना मात्र रह जाता है। इन चारों को संतुलित रूप में प्राप्त करने पर मनुष्य पूर्ण हो जाता है। भगवती पूर्णा है, वह ही सब कुछ प्रदान करती है।

२९३. भोगिनी

भुक्ति में मुक्ति और मुक्ति में भुक्ति। भोग में त्याग की भावना होने से बनती है। अत: भगवती ही त्याग भावना से पुष्ट भोग की अधिकारी है, अत: भोगिनी कहा गया है। भोगों को भोगने के लिये वही आत्मा जीव रूप होकर भोगती है। सुखों को साक्षात्कार करती है, इसीलिये वह भोगिनी है। नाग कन्या होने से भी भगवती का नाम भोगिनी पड़ा।

२९४. भुवनेश्वरी

चौदहों भुवनों की ईश्वरी। हल्लेखाभिमानी भुवना, भुवनानिविश्वा। भुवनानन्द नाथश्च प्रसन्नत्वान्महेश्वरिः। भुवनेष्वतिविख्याता शांभवी-भुवनेश्वरी।। "कुंडलिनी शक्ति भगवती भुवनेश्वरी" इस समस्त ब्रह्माण्डमंडल की एकमात्र अधिष्ठात्री भगवती भुवनेश्वरी ही हैं। मानवौघ गुरु भुवनानन्दनाथ ने भुवनेश्वरी की कृपा से उनके मंत्र विनियोग आदि की रचना की। एकाक्षरी मंत्र स्वरूपा। आदिशक्ति भुवनेश्वरी शिव के लीला-विलास की सहचरी तथा निखिल प्रपंचों का आदि कारण है। सौम्य रूप, अरुण कांति वाली माता भक्तों को अभय और समस्त सिद्धि देने वाली है तथा सबका पालन-पोषण करने वाली है।

२९५. अंबिका

सबकी माता। माता जो जन्म देने वाली है, प्रसव द्वारा प्रजा को उत्पन्न करने वाली। रात्रि का नाम भी अंबा है। माता की गोद में जो सुख-चैन बालक को मिलता है, तो ही रात्रि में नींद के समय भी चैन से सोता है। निद्रा को भी अंबा कहा है। रात्रि रूपा महादेवि दिवारूपो महेश्वर, निद्रा भगवती -रात्रिसूक्त में कहा है।.....माता, जन्मदाता, भारती, पृथ्वी, आत्मा, इच्छा, ज्ञान, क्रिया, शक्ति की जो समष्टि है, उसे अम्बिका कहा जाता है। रात्रि अंबा, दिन शिव है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

२९६. अनादिनिधना

जिनका आदि (जन्म) नहीं, जिनका निधन (मरण) नहीं, जो नित्य है और जन्म-मृत्यु से रहित है।

२९७. हरिब्रह्मेन्द्रसेविता

जो कि ब्रह्म, विष्णु, इन्द्र आदि देवताओं से सेवित-पूजित है। पालनशक्ति विष्णु को दी, सृष्टि की ब्रह्मा और संहार-शक्ति रुद्र को, अतः सबकी वही मात्र आराध्या और अधिष्ठात्री देवी है। देवी भागवत पुराण के अनुसार श्रीचक्र में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, वरुण, यम, वायु, अग्नि, कुबेर, त्वष्ट्रा, पूषन, अश्विद्वय, भग, आदित्य, रुद्र, विश्वेदेव, मरूद्गण आदि सभी अपने-अपनी स्थानों में देवी ध्यान में स्थित है।

२९८. नारायणी

नार जल का भी नाम है अयन का अर्थ है घर। अर्थात् जल है घर जिनका। वे नारायण और उनकी शक्ति नारायणी। इसलिये नारायिणी नमोऽस्तुते। ब्रह्म-वैवर्त पुराण के अनुसार नराणामयन यस्मात्तस्यन्नारायणः स्मृतः।

२९९. नादरूपा

अनाहत नाद जो हमेशा शाश्वत है, उसे नाद कहते हैं। भगवती नाद-रूपा है। स्तुति प्रार्थना पाठ आदि सब शब्द से ही होते है अतः शब्द-रूपा भगवती को नादरूपा भी कहा है। नादयोगियों के अनुसार नाद केवल सुनाई ही नहीं देता बल्कि दिखाई भी देता है। नाद से ही वर्ण, अर्थ,रस,छंद पैदा हुए हैं। एकाक्षरी मंत्र के विंदु के आठ वर्ण है, जो अर्द्धचंद्र, रोधिनि, नाद, नादांत, शक्ति,व्यापिका, समनी व उन्मनी है।

३००. नामरूप-विवर्जिता

जिसके नाम रूप नहीं है। किसने उसका रूप देखा है। किसने उसका नाम रखा है। जितने भी नाम हैं, सब उसके ही हैं या जो कुछ दीख रहा है, सब उसका ही रूप है। सब में रहते हुए वह सबसे अलग है। यहां चतुर्थ मरीचि कला और ३०० नाम पूरे होते हैं।

३०१. ह्रींकारी

ह्रीं लज्जा को कहते हैं। अर्थात् लज्जा करने वाली या भक्तों

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
की लज्जा रखने वाली। ह्रींकार उभयात्मक: अर्थात् शिव शक्ति दोनों का ही बीज मंत्र है। ये ही ह्रींकार आगम में प्रणव है। जैसे वेदों में ॐ ऐसे ही तंत्र में ह्रीं है। जो संसार में है परन्तु प्रकट होती नहीं, वह है लज्जा-माता, कोमल हृदय वाली, लज्जावती स्त्री को ह्रीमती भी कहा जाता है।

३०२. ह्रीमती

लज्जामती। श्रुति कहती है-लज्जामती तुष्टरिष्टा।

या देवी सर्व भतेषु लज्जारूपेण संस्थिता, नमस्तस्यै-नमस्तस्यै-नमस्तस्यै नमोनम:।

३०३. हृद्या

हृदय को अच्छे लगने वाली रमणीय त्रिपुरसुंदरी हृदय में निवास करने वाली। ह्रीमती होने के कारण लज्जा के कारण, ह्रदय में मधुर अवरोध होता है, इसे हृदय ही पहचान सकता है यही अवरोध को तोड़कर हृदयों का संगम कराती है।

३०४. हेयोपादेय-वर्जिता

प्रवृत्ति एवं निवृत्ति के बताने वाले शास्त्रों से अलग, त्यागने और लेने योग्य भावों से परे, वह महाशक्ति प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों मार्गों से परे। जैसे नाद-उपासना में प्रत्येक स्वर उपास्य बन जाता है। सांसारिक मनुष्य की भाषा में कुछ सार्थक शब्द होते हैं, उपयोगी होते हैं या इसके विपरीत कुछ अनुपयोगी, अमंगलकारी शब्द होते हैं, परन्तु भगवती के लिये कोई शब्द न उपयोगी है न ही अनुपयोगी। अत: नादरूपिणी भगवती की उपासना करने वालों के लिये वह हेयोपादेय वर्जिता है।

पार्थिव दृश्यमान जगत के पीछे जो अस्तित्व, प्रकाश और प्रेम नाम के तीन अपार्थिव तत्व हैं उन्ही में दिव्यता है इन्हें अस्ति, भाति व प्रियम् भी कहते हैं, इन्हें को सत्, चित् और आंनद भी कहते हैं।

३०५. राजराजार्चिता

राजाओं के राजा द्वारा अर्चित या पूजित। राजाओं के राजा मनु द्वारा पूजित। राज का अर्थ धन भी है तथा धन का राजा कुबेर, कुबेर द्वारा भी पूजित। २३८वें नाम में कुबेर की विद्या भी स्पष्ट किया है। ३०५ पर इस नाम से ३२० तक १६ नाम "र" से प्रारंभ होने वाले है। यह वर्ण एकाक्षरी मंत्र का हृदय है। इससे षोडशी की सोलह कलाओं का भी वर्णन होता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

कुबेर के अलावा भगवान् शंकर जो मस्तक पर चन्द्रमा धरे हुए हैं को भी राज-राज कहा जाता है, की भी पूजित या अर्चित है माता ललिता।

३०६. राज्ञी

राजशेखर द्वारा पूजित या उनकी रानी। राज-राजेश्वर की पट्ट-महिषी-कामेश्वर की कामेश्वरी। त्रिपुरेश्वर की त्रिपुरेश्वरी।

३०७. रम्या

रमणीय सुन्दर। संसार के समस्त सौंदर्य को अपने में समाहित करने के कारण वह रम्या है। यह रहस्यात्मक नाम सरस, सारगर्भित है क्योंकि आनंद ही रस है और आंनद इसी में समाहित है।

३०८. राजीवलोचना

सुंदर नयन वाली। राजीव का तात्पर्य कमल जैसे नेत्र या भक्तों को प्रेम एवं दया की दृष्टि से देखने वाली आंखें। जो मनुष्य उसकी कृपा कोर पर ही आधारित है, उसके लिये भगवती के नेत्र राजीवलोचना ही हैं। संसार में रमणीयता भरी पड़ी है, प्रातः सूर्योदय, पुष्प, पवन झकोरें, समुद्र, संध्या, इंद्रधनुष या चंद्रमा। जैसें कमल प्रकाश की किरणों से खिल जाता है, भगवती के कमल-नयन का प्रकाश से स्वाभाविक प्रेम है। फूल की तरह खिलना और प्रकाश की तरह फैलना प्रसन्नता और प्रफुल्लता का ही द्योतक है।

३०९. रंजनी

भक्तों का मनोरंजन करने वाली। आमोद करने वाली। विनोद करने वाली या आनंदित करने वाली। माता का सांसारिक और असांसारिक सौंदर्य सबका मन बहलाता रहता है। जैसे सूर्य की प्रातःकालीन लाली सबको लाल रंग में डुबो देती है, वह आंनद की सागर सबको आंनद से परिपूर्ण रखती हुई सबका रंजन करती है। अतः वह रंजनी है।

३१०. रमणी

रमण करने वाली। यह जीव मात्र में रमण करती है। जीव शिव है, शक्ति प्राण रूप है रमण करती है। राम से परब्रह्म का बोध होता है। रमणात् रामः-रमन्ते योगिनो यस्मिन् चासौ रामः अर्थात् योगी लोग जिसमें रमण करते हैं। वह राम है संसार के कण-कण में भगवती की दिव्यता व्याप्त

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
है। अणु-परमाणु में भी। सबमें उसकी ही लीला दिखाई देती है, अतः सब में रमनें वाली रमणी है।

३११. रस्या

रसमयी। रस की प्रतिमा आस्वादन करने योग्य, चखने योग्य। वह अमर आनंद रस है-नित्य रस है-रसोवै सः-अनिर्वचनीय रस है, मूकास्वादनवत्। वही रस सागर है। जैसे बादल से पानी बरसता है। रस का स्रोत ब्रादल है, जो एक सीमित अर्थ के लिये ही है परन्तु रस्या समस्त सांसारिक और नैसर्गिक आनंद की अखण्ड स्रोत है। रस चाहे कवि की कविता में उसकी कल्पना में हो, कथा में, कंठ में, या तार में तमूरे में, सभी रसों का एक छोर हृदय है, जिसमें वह विराजित है। सरोद का तार बजा और हृदय में लगा, मुरली बजी कि हृदय में बिंध गयी क्योंकि हृदय को वह अति सुंदर लगी तो वह रस-संसार में कहीं और न होकर मात्र हृदय में ही है। मुरली तो कहीं और भी बज रही होगी परन्तु न सुनने वाले के हृदय में वह रस तो नहीं बरसा रही होगी क्योंकि उसके हृदय में रस्या किसी और रूप में है।

३१२. रणत्किंकिणिमेखला

भगवती की मेखला कन्धिनी, जोकि स्त्रियां कमर में धारण करती हैं, उस मेखला में क्षुद्र घण्टिका लटक रही है। उनका शब्द प्रणव नाद है, शब्द की उत्पत्ति स्थान है, अनेकों ब्रह्माण्ड उस शब्द से गूंज रहे हैं।

पहले भी भगवती के सौंदर्य का वर्णन करते हुए "रणत्किंकिणिमेखला की तरह रत्नकिंकिणिका बताया है।

३१३. रमा

लक्ष्मी स्वरूपा रमण करने वाली। लक्ष्मी अनेक रूपों में रमण करती है। लक्ष्मी या सरस्वती (वाक्) रूप में नृत्य करने वाली।

३१४. राकेन्दुवदना

जिसका मुखारविंद पूर्ण चन्द्रमा के समान है। सोलह कला पूर्ण चंद्र का सा बदन है जिनका।

चन्द्रमा में जिस तरह छोटा सा क़लंक भी है, देव्यर्थवशीर्ष जोकि वेदों का एक हिस्सा है, में भगवती की अशुद्धि मिश्रित शुद्ध रूप की आराधना है, इसी प्रकार पूर्ण चंद्र के इस मुखमंडल में जो आसुरी प्रवृत्ति हैं, उन्हें भी भगवती कमोवेश धारण करती है, उनका हनन भी करती रहती है, अतः वह राक्षसघ्नी आदि कहलाती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३१५. रतिरूपा

रति यानी मन्मथ या कामदेव की पत्नी। कामेश्वर की पत्नी। अत्यन्त प्रेम या लगन। जिसकी रति हो उसको ही प्राप्य है, वह स्वयं रतिरूपा है। कामकलामंत्र की ओर इंगित है यह नाम।

३१६. रतिप्रिया

साधारण सांसारिक सुंदर नारी के रूप लावण्य की सौंदर्य-भावना या प्रेम भावना मनुष्य मात्र में बसी हुई है यह भगवती का ही प्रसार है। वासना रहित प्रेम ही सच्ची रति कही गई है। इसी को देवी चाहती है। इससे दो हृदय जुड़ते है। रति सामरस्य है। रति के पति कामदेव के भस्म होने पर रति के अनुरोध पर काम को जिलाने वाली माता, रति की प्रिया है।

३१७. रक्षाकरी

भक्तों की रक्षा करने वाली। संसार की रक्षक या पालक। संसार में उससे कुछ भी अलग नहीं है, अवेद और अविद्या भी वही है, इन सब से भक्तों की रक्षा करने वाली भी वही भगवती है।

३१८. राक्षसघ्नी

राक्षसों को मारने वाली। दैत्यों और दुष्टों, असुरों का संहार करने वाली। सज्जनों और शांतिप्रिय लोगों को आश्रय प्रदान करने वाली। हिंसक तत्वों से निरपराधियों की रक्षा करने वाली।

३१९. रामा

रामा स्त्री को भी कहते हैं। रमण कराती है वो रामा। पुरुष रूप में, वही राम और स्त्री रूप में रामा वही है। योगी जिसमें रमण करते हैं। लिंग-पुराण में भी सभी पुल्लिंग वाची जीव को शंकर का और स्त्रीलिंग जीवों को देवी का स्वरूप कहा गया है। इसी प्रकार विष्णुपुराण में विष्णु और लक्ष्मी मय माना गया है। ब्रह्म-वैवर्तपुराण के अनुसार तीनों लोकों में जो कुछ स्त्री वाचक है, वह है देवी तुम ही हो, पाराशर-स्मृति में स्त्री के प्रसन्न रहने या न रहने पर ही परिवार की वृद्धि या अवरोध होने की बात कही गयी है।

३२०. रमण-लम्पटा

क्रीड़ा करने में ही जिसकी इच्छा रहती हो। क्रीड़ा संसार को बनाना-रचना, फिर उसमें स्थिति, पालन, रक्षा करना फिर संहार करना।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यही उसकी क्रीड़ा या रमण है।

रमण यानी आनंद लम्पट यानी समर्पित, आनंद के लिये समर्पिता। अपने पति के आनंद के लिये, पति के प्रति समर्पित। उसको संसार की समस्त स्त्रियों की समग्र शक्ति के रूप में समझना चाहिए, वह अपने पति के प्रेम के लिये समर्पित है या कहें कि संसार की समस्त स्त्रियों को वह कहती है कि वे अपने-अपने पतियों के प्रेम के लिये समर्पित रहें। क्योंकि नश्वर शरीर में यही मात्र निरंतर सुनाई देने वाला अनाहत नाद है, जिसे प्रेम की मधुर रागिनी कहते हैं। यह वासना से उपासना की ओर ले जाता है।

३२१. काम्या

कामनाओं को देने वाली। देवी-कवच में भी सर्वकाम-प्रदायिनी कहा है। इच्छित वस्तुएं तो और भी देवता देते हैं। परन्तु कहते हैं कलियुग में "कलौ चण्डी-विनायकौ'' भगवान् गणेश और भगवती इच्छित फल तुरंत देते हैं। भगवती "यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्'' भक्तों की कामनाएं पूर्ण करती हैं।

तंत्र में कृष्ण पक्ष की बारहवीं रात्रि को काम्या कहा है। जिस प्रकार इसके पूर्व दो श्लोकों के १६ नाम "र'' से प्रारंभ होते थे, अब दो श्लोकों के १० नाम "क'' से प्रारंभ हैं। वहां र से रमणीयता व्यक्त होती थी, यहां वही कमनीयता के रूप में है। जीव मात्र में ये दो लक्षण प्रेम और करुणा जीवन को जीने योग्य बनाते हैं। संसार की समस्त चेतना के मूल में कामकला ही काम करती है, जिसकी अधिष्ठात्रीदेवी को काम्या कहा है। काम से प्रेम पैदा होता है।

कामना किसी भी वस्तु की हो सकती है। उदात्त कामना ऊंचा उठाती है, निकृष्ट गिराती है। सांसारिक क्षणभंगुर कामनाएं छद्मवेश धारी दुख ही हैं जो सुख के रूप में आता है और उसके शाश्वत आनंद को छीन ले जाता है। भगवती "काम्या'' की कृपा से ही मनुष्य को सच्चिदानंद प्राप्त करने की कामना की प्रेरणा मिलती है।

३२२. कामकला रूपा

काम अर्थात् कामेश्वर की कलाशक्ति।

तस्य कामेश्वराख्यस्य, कामेश्वर्याश्च पार्वती।

कलाख्या सविलासा च ख्याता कामकलेतिसा।। त्रिपुरासिद्धान्त

यह माधुर्योपासना या कामोपासना है। कामकलाविलास के अनुसार शिव और शक्ति के संबंध से प्रस्फुटित अंकुर है पराशक्ति। इच्छा होने या प्राप्त करने

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

की कला। मध्य के दो बिन्दु, जिन्हें सूर्य व चंद्र कहते हैं। कालिकापुराण में काम को ही देवी कहा है, क्योंकि वही कैलाश पर्वत की नीली शिखरों के गुप्त स्थानों से मेरे (शिव के) साथ अपनी इच्छा (काम) के लिये आयी है। वही इच्छा है, वही इच्छित है और वही इच्छा पूर्ण करने वाली "कामकला" है। व्यक्तिगत सुख संतोष तक सीमित मानवीय काम-वासना इतनी भव्य हो सकती है, तो इसके समग्र या विराट रूप की परिकल्पना से इसकी दिव्यता का बोध होता है। सौंदर्य, प्रेम और आनंद सीमित रूप में क्षणभंगुर और असीम होते ही अखंड आनंद के स्रोत बन जाते हैं। सांसारिक कामियों और कामनियों में जो कामकला पाई जाती है, उसके विराट रूप की कल्पना कामेश्वरी का रूपबोध कराती है।

३२३. कदम्बकुसुमप्रिया

कदम्ब का पुष्प जिनको अधिक प्रिय है। यह पुष्प मथुरा जनपद के अन्तर्गत व्रज में अधिकता से होता है। गम्भीर और मधुर सुगन्धि वाले श्वेत पुष्प भगवती को अधिक प्रिय हैं। बरसात के बादलों के गरजते ही इसकी कलियां ऊपर उठ जाती हैं और यह खिल उठता है, उसकी आवाज से जैसे इसमें चेतना आ जाती हो। इसके फूलों से बहती हवा वातावरण को मादक और मोहक बना देती हैं। वह कदम्ब वनवसिनी है।

३२४. कल्याणी

कल्याण करने वाली। मंगल करने वाली। कल्याणमयी भगवती की मूर्ति मलयाचल पर्वत पर है। ऐसा पद्मपुराण में कहा है। कल्याणी मलयाचले। कल्याणी की एकमात्र कामना लोक कल्याण की ही है। कल्य के अर्थ प्रातः से भी है, कल आने वाला, अनंत काल तक चलने वाला कालचक्र के साथ चलने वाली कल्याणी। कलाओं की कला को भी कल्य कहा है। कलाओं की प्राण कल्य इसको धारण करने वाली कल्याणी।

३२५. जगतीकन्दा

जगत की मूल कारण। संसार के संचालन में इस मूल प्राणशक्ति को, इसकी जड़ को जगतीकन्दा कहा है।

३२६. करुणारससागरा

संसार को संवेदनशील बनाने वाली भगवती करुणा की अक्षय

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
निधि है, अतः उसे करुणा रस की सागर कहा है। क्योंकि इस संसार में प्रत्येक प्राणी को कल्याण की हर पल आवश्यकता रहती है, देने वाली मात्र वह एक भगवती है, अतः उसके पास इसका अक्षय कोष है। वह सबकी जननी है, उसका हृदय कोमल है। किसी जीव की पीड़ा को वह अपना समझती है, उसके लिये उसका करुण हृदय उमड़ पड़ता है। संसार में माता से दयालु कौन हो सकता है ! माता के गर्भ में बालक चंचलता करता है या पैदा होने पर अपने दया पय (दूध) से क्षुधा शांत करती है। दुर्गा सप्तशती में "वैरिष्विपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम्'' कहा है यानी शत्रु पर भी दया करने वाली।

३२७. कलावती

वैसे तो कला बहुत सी हैं, जिनकी गणना नहीं हो सकती, किन्तु चौंसठ कलाओं से अर्थ है, भगवती ६४ कला परिपूर्ण है सभी कलाओं का जो उद्गम है, वह कलावती है। कला समय व स्थान से अतीत है, सभी समय व स्थान में व्याप्त है। देश काल से बंधी नहीं है। कला में ही सृष्टि, स्थिति व लय है। भगवती कामकला से परिपूर्ण है, काम का एक और अर्थ क, अ, म तीन अक्षरों से ब्रह्म, विष्णु, वह महेश की कला सृष्टि, स्थिति तथा लय से समाविष्ट है। यह इसका आध्यात्मिक अर्थ है।

३२८. कलालापा

मधुर ध्वनि करने वाली। मंजुल भाषिणी। जो कुछ कहती है वह सब कलात्मक होता है, क्योंकि उनकी वाणी में माधुर्य होता है। उसका आलाप, उसकी बातें मन को चुराने वाली होती हैं। श्रीमद्भागवत में कहा है भगवान ने जब बंशी से मधुर स्वर किया, तब गोपियों का मन मोहित हो गया। भगवती मधुर गान के रागों का आलाप भरने वाली हैं।

३२९. कान्ता

जिसमें सौंदर्य हो, उसे कान्ता कहते हैं। जिसकी पूजा करने का सिद्धान्त ही ब्रह्मवाद का अंतर्भाव है। कृष्णपक्ष की ग्यारहवीं रात्रि। कान्ता और कान्त किसी भी स्त्री व पुरुष के पर्यायवाची भी हैं। जिसे प्राप्त करने पर मनोकामना पूरी होती हो वही कांत व कांता है। उपदेश भी तीन होते हैं, प्रभुसंमत जैसे वेद, शास्त्रादि, मित्रसंमत जैसे पुराणदि तथा कांता-संमत अर्थात् मधुरता से बताई गई या काव्य द्वारा बताई गई बात। इसका अर्थ प्रकाश भी है। भगवती के पवित्र मंत्रों के उच्चारण से आंतरिक आलोक प्राप्त होता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३३०. कादम्बरी प्रिया

तत्व ज्ञानी, आसव को कादंबरी कहते हैं। मधुर कंठ की कोयल उसे प्रिय है, जितेन्द्रिय तत्त्व ज्ञानी उसे प्रिय है। कदंब से निकलने वाली कोटर भी उसे प्रिय है जिसे कादंबरी कहते हैं। कादंबरी के सेवन से मनुष्य अपने शरीर की सुध खोकर अभीष्ट-भावना में तल्लीन रहता है।

३३१. वरदा

वर प्रदान करने वाली। जिसकी शरण मात्र से सभी इच्छित वर प्राप्त होते हैं। अन्य देव तो हाथ से वर प्रदान करते हैं, किंतु मां चरणों से ही सब कुछ दे देती है। सौंदर्य लहरी में

"त्वदन्य:पाणिभ्यामभय वरदो दैवतगण:
त्वमेकानैवासि प्रकटित वराभीत्यभिनया
भयात्त्रातुंदातुं फलमपि च वांछासमधिकं
शरण्ये लोकानां तव हि चरणावेव निपुणौ।

अर्थात् हे मां, और देवताओं ने जैसे हाथों से वर अभय मुद्रा धारण की है, वैसे तो तैने अभिनय(नाटक) नहीं बनाया, अपितु तेरे तो चरण ही अभय और कामना से भी ज्यादा देने को निपुण हैं।

३३२. वामनयना

सुंदर हैं जिसके नेत्र। वामनयना से शक्ति का उद्‌भव होता है। वामदृषां मनोहरम-भा० स्क० १०। वामनयना स्त्री वाचक शब्द है। इसके बिना शिव जिसमें इ की मात्रा हटा दी जाये, तो होता है शव अर्थात् इ स्त्रीवाचक शब्द है यह गुरुपदिष्ट अक्षर है। गुरुमुखादवगन्तव्यम्- बहुत से ऐसे शब्द हैं, मन्त्र के अक्षर हैं, जो कि गुरु से ही जाने जा सकते हैं। अथवा वाममार्ग को बताने वाली कहावत है-फलां कार्य तो बड़ी बांई लकीर है। भगवती शिव के बांए अंग में विराजती है, उसका रहस्य तो वह ही जाने। उन्होंने शंकर को वाममार्ग नयनों के इशारे मात्र से बताया, जो लोक विदित है। दाहिना अंग पौरुष और वाम स्त्रीत्व का प्रतीक है। भगवती के दाहिने नेत्र में बसे हैं भगवान शिव तथा बांयें से विश्व विधाता के बने संसार को देख कर संसार के समस्त प्राणियों को तृप्त करती रहती है।

३३३. वारुणीमदविह्वला

वरुण देवता जल का नाम है। वह सामान्य जल नहीं, अमृत

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
वारुणी आसव को उसके पान से मद में विह्वल। योगीलोग वारुणी का सेवन तल्लीनता के लिये करते हैं। वारुणी एक नाड़ी जो सहस्रार चक्र तक ले जाती है।

३३४. विश्वाधिका

विश्व से अधिक अर्थात् ब्रह्म, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव से भी परे। विश्व में पृथ्वी, जल, पावक, पवन तथा व्योम जो कुछ दीख पड़ता है, जिसके लक्षण शब्द, स्पर्श रूप, रस, गंध है, वह किसी में नहीं समाती। वह सर्वत्र सर्वदा, सर्वस्व व सर्वोपरि है, अतः विश्वाधिका है।

३३५. वेदवेद्या

वेदों के द्वारा जिसे जाना जा सकता है। वह स्वयं वेद है ऐसा श्रुति कहती है। वेदैश्च सर्वै रहमेव वेद्यः। चिन्तामणि का जो आपका भवन है, उसके ४ दरवाजे हैं-ऋग्वेद (पूर्व), यजुर्वेद (दक्षिण), सामवेद (उत्तर) व अथर्ववेद (पश्चिम), इन्हीं द्वारों से उपासक उसके स्वरूप को समझ सकता है। वस्तुतः वह किसी परिभाषा से बंधी नहीं है। वेद भी नेति-नेति कहते हैं। परन्तु उसे जितना अधिक जानने का प्रयास किया जाये, उतनी ही वह हृदयंगम होती जाती है।

३३६. विंध्याचलनिवासिनी

विन्ध्य पर्वत पर निवास करने वाली, जैसा कि मार्कण्डेय पुराण में लिखा है-नन्दगोप गृहे जाता यशोदा गर्भ सम्भवा, ततस्तो नाशयिष्यामि विन्ध्याचल निवासिनी। नन्द के घर यशोदा के गर्भ से जन्म लेकर दुष्टों का नाश करने वाली।

इस विंध्याचल का एक सांकेतिक अर्थ भी है । भौगोलिक दृष्टि से यह मलयाचल और हिमाचल के मध्य है। हिमाचल बर्फ का तथा मलयाचल मादक मधुर पवन वाला पर्वत है, इनके मध्य विंध्य पारमार्थिक साधना के लिये उपयुक्त स्थान है। शरीर के अंदर भी इसी प्रकार तीन पर्वत हैं। बाहर रहने वाला ध्यान यदि अंदर रहने लगे और एकाग्र हो तो ज्ञान मिलता है, ज्ञान से भगवती के स्वरूप का भान।

३३७. विधात्री

जो कार्य कोई नहीं कर सकता, उसे करने वाली। कर्तुमकर्तुमन्यथा कर्तुंसमर्थ- यही ईश्वर की ईश्वरता है। विधात्री विधाता की

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

शक्ति। या धात्री यानी धाय-माता पोषण करने वाली अर्थात् विशिष्ट माता। या अखिलब्रह्माण्ड भरण -पोषण-पुष्ट करने वाली माता। विधात्री यानी ब्रह्म की विधात्री यानी ब्रह्मणी। विधात्र आंवले को कहते हैं, उसे पसंद करने वाली। पाप-पुण्य, सत-असत, धमाधर्म, ज्ञान कर्म आदि का विधायन करने वाली विधात्री। वेद जो ज्ञान-विज्ञान का साग्रह है उसकी माता विधात्री। गायत्री।

३३८. वेदजननी

वेदों की माता, जिससे वेद उत्पन्न हुए। ऋचः सामानि जज्ञिरे अथवा वेद जिसके निश्वास हैं, जिसकी श्वास हैं। वेद ज्ञान है। ज्ञान से ही ब्रह्म को पहिचाना जाता है। वेद ज्ञान-विज्ञान का भंडार तो है, परन्तु वह अक्षरमय है, ये अक्षर ही जिसकी कृपा से अक्षयनिधि के आग बन जाते हैं, वह है वेद जननी गायत्री। गायत्री साधक का सहारा बनती है।

३३९. विष्णुमाया

व्यापनशील। देशकालादि से अविच्छिन्न। जैसा गीता में कहा है-देवीह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया। पालनी शक्ति विष्णुरूपा। माया का अर्थ सीमा भी है, वह विष्णु की सीमा है। जहां तक माया की सत्ता है, वहीं तक विष्णु की सत्ता है, जहां माया का प्रभाव नहीं, वहां विष्णु के प्रभाव क्षेत्र से परे स्थान है। माया माता की देन है। जिसके कारण स्वयं परमात्मा बार-बार पृथ्वी पर जन्म लेकर यहां की माया-ममता सुख-दुख का अनुभव करता है। ममता और माया पर ही यह संसार चल रहा है। सत्, रजस् व तमस् गुणों से परिपूर्ण माया संसार में व्याप्त है।

३४०. विलासिनी

यह संसार माया-ममता, श्रद्धा, विश्वास, प्रेम आदि दैवी भावनाओं की लीलास्थली है। भगवती ललिता अनेक प्रकार की लीला करती रहती हैं। संसार का समस्त घटनाचक्र भगवती का लीला-विलास ही है। भगवती विलास-रूपा आनंदमय भोग करने वाली है। ब्रह्मरन्ध्र में रहनेवाली, मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र में षटचक्रों में विहार करनेवाली कुंडलिनी रूपा। पीठशक्ति जो विशिष्ट शक्ति है, या विक्षेपशक्ति अर्थात् पैदा करने वाली शक्ति भी विलासिनी है।

३४१. क्षेत्रस्वरूपा

२४ तत्वों से उत्पन्न होने वाला शरीर। शरीर ही क्षेत्र है, इसमें

CC0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पाप और पुण्य दोनों ही बीज बोए जाते हैं। गीता में इदं शरीरं कौन्तेय, क्षेत्रमित्यभिधीयते। शरीर में पृथ्वीतत्व से शिवतत्व तक ३६ कोटि बताई हैं वैसे तो शरीर नश्वर है। परन्तु उसमें अमर आत्मा ही परमेश्वरी का स्वरूप है, जिसके आवरण के लिये यह शरीर विभिन्न दिव्य तेजों से विद्यमान रहता है, अत: यह शरीर ही उसका क्षेत्र है। पूर्वोल्लिखित अंडे तद्ब्रह्माण्डे के सूत्रानुसार ब्रह्माण्ड भी उसका क्षेत्र है ब्रह्माण्ड में वह व्याप्त है। सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी वायु, जल, पावक, आकाशादि सभी नक्षत्र, तारे आदि सभी उसकी ही दिव्य शक्ति से आलोकित हैं, अत: समस्त ब्रह्माण्ड उसका क्षेत्र है।

३४२. क्षेत्रेशी

शरीर रूपी क्षेत्र की स्वामिनी। क्षेत्र या खेत भूमि में जो बीज बोते हैं वही पैदा होता है। किसान उसमें हल चलाता है। क्षेत्रेशी इस शरीर में पृथ्वी तत्व में है फिर जल तत्व, वायुरूप,सूर्य-ताप रूप, ये दैवी वस्तु न हों तो खेत कुछ नहीं कर सकता। अत: शरीर रूपी क्षेत्र का पालन-पोषण आदि सब कुछ वही करती है, वही इसकी स्वामिनी है।

३४३. क्षेत्रक्षेत्रज्ञपालिनी

क्षेत्र शरीर और क्षेत्रज्ञ जीव दोनों का पालन करने वाली। गीता में कहा है-इंदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते। जीव तथा शरीर की माता उसकी जननि। शरीर के रहस्यों को पहचानने वाले को क्षेत्रज्ञ कहते हैं।

३४४. क्षयवृद्धिविनिर्मुक्ता

न कभी इस महाशक्ति का क्षय होता है और न वृद्धि अर्थात् न घटती है न बढ़ती है। ह्रास-वृद्धि दोनों से रहित । सदा एकरस, समरूप। गीता में कहा है- नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक:। हमेशा शाश्वत रहने वाली। केवल क्षेत्र ही वृद्धि को प्राप्त होता या क्षीण होता है, उसका क्षेत्रज्ञ या क्षेत्रपाल नहीं। आत्मा-परमात्मा सदा एक से रहते हैं। अमर है।

३४५. क्षेत्रपालसमर्चिता

इस शरीर के अन्दर सूक्ष्म तत्त्व मन, बुद्धि, चित्त, अंहकार हैं, इन तत्वों से मिश्रित जीवात्मा। जीवात्मा का सूक्ष्म तत्व परमात्मा और परमात्मा की लीलामयी शक्ति परमेश्वरी। अत: परमेश्वरी ही परमेश्वर, आत्मा,तत्व, और इस शरीर की पूजनीय है अर्थात् क्षेत्र और उसका पालन-पोषण करनेवाले परमात्मा दोनों को समान रूप में पूजनीय भगवती।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

क्षेत्रपाल बटुक भैरव भी हैं। शिव द्वारा पूजित भैरव, शिव-शक्ति, शक्तिमान् का अर्थ शक्ति स्त्री-रूपा और शक्तिमान् पुरुष रूप शिव। शिवा-शिव ही श्री दुर्गापुत्र बन गये, इसकी कथा लिंग पुराण में इस प्रकार हैं।

शिव के द्वारा प्रकट होकर जब काली ने दारूकासुर को मारा तो उस क्रोध से लोक भस्म होने लगे तब भगवान को एक युक्ति सूझी, क्योंकि क्रोध शान्त नहीं हो रहा था। अत: स्वयं शिव तत्काल एक बालक बन गये और जब काली ने उसे देखा कि इस बालक का पोषण करने वाला मेरे अतिरिक्त और कोई नहीं है, तब मां अत्यंत दयार्द्र हो गई और स्तन पान कराने लगी। उस वात्सल्य प्रेम से देवी का क्रोध शान्त हो गया, जिससे विश्व की रक्षा हो सकी। सारा विश्व रूपी क्षेत्र की रक्षा करने को आप बटुक भैरव क्षेत्रपाल कहलाये और विष्णु भी क्षेत्रपाल हैं, क्योंकि वे सर्वत्र व्यापक हैं, सभी की रक्षा करते हैं। क्षेत्रपालन का उन्हीं पर दायित्व है। हरेक नगर में क्षेत्रपाल भगवान शिव हैं, हर नगर के प्रत्येक मुहल्ले में उस क्षेत्र का पालन करने से भूमि रक्षा करने से भूमियां कहलाते हैं। हरेक गांव में शिव का मंदिर होता है। खेतों में छोटी-मोटी मढ़ी रूप में क्षेत्रपाल निवास करते हैं। कोई भी प्रान्त या नगर या गांव नहीं होता इस भारत भूमि में। चारों धाम में शिव की ही प्रधानता है। द्वारिका में नागेश्वर, बद्रीनाथ, केदारनाथ, रामेश्वर, जगन्नाथ जी में भुवनेश्वर। बम्बई में भूलेश्वर, कलकत्ते में दक्षिणेश्वर दिल्ली में गौरी शंकर, मथुरा में भूतेश्वर, हरिद्वार में विल्वकेश्वर, कनखल में दक्षेश्वर, काशी में विश्वनाथ, उज्जैन में महाकालेश्वर। आदि सभी क्षेत्रपालों द्वारा पूजित भगवती ललिता परमेश्वरी क्षेत्रपाल समर्चिता है।

३४६. विजया

जिसकी सब जगह विजय हो वह विजया । सर्वत्र जय-जयकार हो, जिसकी वह विजया। एक पौराणिक कथा के अनुसार पद्म नाम के दैत्य को मार कर विजय प्राप्त की, जिससे विजया नाम पड़ा। आश्विन शुक्ल पक्ष की दशमी को विजया तिथि कहते हैं। कश्मीर देश को विजय देश कहते हैं- विजयंचैव काश्मीरे।

कश्मीर में भगवती के ६८ पवित्र स्थान बताए जाते हैं। ऐसा देवी पुराण में है। इसी पुस्तक के अनुसार एक शक्तिशाली दैत्य पद्म का संहार कर विजय पाने वाली को अपराजिता कहा गया। विश्वकर्मा शास्त्र में एक भवन का नाम विजय है। चिन्तामणि मुहूर्त के अनुसार कुछ खास समय विजय मुहूर्त होते हैं जिसमें संध्या के बाद जब तारे चमकें या मध्यान्ह के तुरन्त बाद ४८ मिनट इत्यादि। CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

विजया इसलिये भी कहा जा सकता है कि क्षेत्रधारी को अनेक विजय लक्ष्य करने पड़ते हैं, क्योंकि इस जीवन में बाहरी और आन्तरिक अनेक आक्रमणों का सामना करना पड़ता है। बाहरी शत्रु जिस प्रकार पग-पग पर होते हैं, इसी प्रकार आंतरिक शत्रु भी बहुत हैं-काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, मनोविकार, व्याधि आदि सभी पर विजय पाने के लिये विजया की कृपा की आवश्यकता होती है। अत: भगवती विजया हैं।

३४७. विमला

मल से रहित सो निर्मल वही विमला है। अविद्या ही मल है, जो अविद्या रहित है, वही विमला है। जिसने मन जीत लिया उसने जग जीत लिया, तन-मन को वश में करने से मन निर्मल बनता है। इससे आत्मा का आलोक फैलता है। यह साधना की दो सीढ़ियां हैं कि आत्म विजय तथा विमलता ज्ञान के प्रकाश से है।

३४८. वंद्या

वन्दना करने योग्य। अथवा ब्रह्मा, विष्णु, शिव से लेकर सभी देव, मानवादिक की वन्दनीय। मन के निर्मल होने के बाद लक्षण जो पैदा होता है वह है विनम्रता का, जिससे श्रद्धा उत्पन्न होती है। नम्रता से ही नमस्कार करता है मनुष्य अर्थात् भक्त को नम्र होना चाहिए तभी भगवती की वह वन्दना कर सकता है।

३४९. वंदारुजनवत्सला

देवताओं की माता अथवा वन्दन करने वालों पर दया करने वाली। बाल्मीकि सीता माता को "प्रणिपात प्रसन्ना" कहते हैं। एकबार श्रद्धा भक्ति से नमस्कार मात्र से प्रसन्न हो जाने वाली।

३५०. वाग्वादिनी

आत्मसंयम, निर्मल मन, विनम्र आचरण के साथ मृदु वाणी का यदि और मधुर संयोग हो जाये तो आत्मा का प्रकाश और बढ़ता है। भगवती भक्तों को वाणी में शक्ति प्रदान करने वाली है। शब्दानां जननी त्वमत्र भुवने वाग्वादिनीत्युच्यसे ललितस्तवे, मूक को भी वाचाल करने वाली मूकं करोति वाचालं। श्वपाको जल्पाको भवतु मधुपाकोपमगिरा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३५१. वामकेशी

सुंदर है केश जिनके। अथवा वामकेश्वर की ईश्वरी। वेद में वाम देवायनमः शिव का नाम है उनकी शक्ति वामकेशी। शिव द्वारा प्रस्तुत २० तंत्रों में एक वामकेश।

३५२. वह्निमण्डलवासिनी

मूलाधार में वह मण्डल मूलाधार की अग्नि महाप्रकाश है। वह सूर्य चन्द्र विद्युत की अग्नि से युक्त है, वह महान तेज में निवास करनेवाली है। अथवा जठराग्नि में निवास करके उनके भोज्य को पचाने वाली। जैसा कि गीता में कहा है- अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रिताः। वह्नि माने तीन मण्डल- सूर्य, चन्द्र व अग्नि। चिदग्नि जिसका उद्गम है।

३५३. भक्तिमत्कल्पलतिका

भक्तों की कामना पूर्ण करने को जो कल्पलता है। कल्पलता उसे कहते हैं, जो मन में कल्पना करा और इच्छा करो, उसे वही कल्पित वस्तु प्राप्त हो जाये। दूसरा यह कि अपनी भक्ति देने को जो कल्पलता है। जैसे किसी की अधूरी भक्ति है, उसे जन्मान्तर में पूर्ण भक्ति देने वाली। जैसी जिसकी भावना होती है, वैसे उसे फल देने वाली।

३५४. पशुपाशविमोचिनी

पशु जैसे बन्धन में रहता है, खूंटे के चारों तरफ चक्कर काटता है। ऐसे ही यह जीव भी कभी पृथ्वी, कभी स्वर्ग या नरक, कर्म के बंधनों में बँधा रहता है। मनुष्य शरीर लेकर भी पशु की भांति बंधा हुआ होता है। इस जीव के लिये आठ प्रकार के पाश हैं। जिनमें वह बंधा रहता है वे हैं-लज्जा घृणा भयं शोकं जुगुप्सा चेति पंचमम् कुलं शीलं तथा जातिं अष्टो पाशा इमे स्मृता। पाशबद्धः पशुःप्रोक्तः पाश-मुक्त सदाशिवः। भगवान के नाम या भजन में लज्जा, किसी बीमार से या गरीब से घृणा, इत्यादि ब्रह्मज्ञान न होना पशुता है, परन्तु श्रीजी ज्ञान देकर पशुता से छुटकारा दिलाती हैं। पशु को ईश्वर का ज्ञान नहीं होता, जिस मनुष्य को भी ज्ञान नहीं, वह भी पशुतुल्य है। "मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति, ज्ञानेन हीना पशुभिः समाना। पातंजल दर्शन के अनुसार ५ पाश हैं-अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश। इन सब पाशों से मुक्ति दिलाने वाली। कुछ मत ५२ पाश मानते हैं। शिवरहस्य के अनुसार वही सबको पाश के बन्धन में डालने वाली है तथा जो उसका अर्चन करता है, उसे पाशमुक्त कराती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३५५. संहृताशेषपाखण्डा

पाखण्डों का नाश करने वाली। वेदशास्त्र के विरुद्ध कर्म पाखण्ड है। लिंग पुराण में कहा है-वेद वाह्य व्रताचाराः श्रौतस्मार्त बहिष्कृताः। पाखण्डिन इति ख्याता न सम्भाष्याद्विजातिभिः। अर्थात् पाखण्डी दुरात्मा को कहा है, जो सोचते मन में कुछ और हैं वाणी से कुछ और बताते हैं, और करते कुछ और हैं। भगवती इनके दुराचार को दूर करती है तथा सदाचार इनमें पैदा करती है, इनके अंधकार को नष्ट कर प्रकाश फैलाती है तथा अज्ञान को नष्ट कर ज्ञान की किरण फैलाती है। ब्रह्मवैवर्त पुराण के अनुसार धर्मशास्त्र पुराण, न्यास, मीमांसा, शिक्षा व ज्योतिष के अंग वेद ज्ञान के स्रोत हैं ये १४ बताये गये हैं।

३५६. सदाचारप्रवर्तिका

सदाचार, सद् शुद्ध एवं अच्छा आचार। सतां शिष्टानां आचारः सदाचारः अथवा ब्रह्मा का आचार। सज्जनों के आचार को प्रवर्तन करने वाली। तात्पर्य कि दुराचारी भी यदि सत्संग में आकर भगवती श्री माता की उपासना में लग जाये वह दुराचार से उसे हटाकर सदाचार की ओर प्रवृत्त कर देती है।

३५७. तापत्रयाग्निसंतप्तसमाल्हादनचंद्रिका

जिस प्रकार मानव जीवन के लिये तीन प्रकार के आनंद हैं- भौतिक, मानसिक और आत्मिक या आध्यात्मिक, उसी प्रकार तीन प्रकार के ताप भी होते हैं-अधिभौतिक, आधिदैविक तथा आधिदैहिक। आधिदैविक-देवी प्रकोप बिजली गिरना, तूफान, भूकम्प इत्यादि आधिभौतिक किसी दूसरे प्राणी द्वारा दिया गया शारीरिक कष्ट आदि है। तथा आधिदैहिक ताप जो अपने शरीर से पैदा होने वाले रोग आदि। संसार में और बहुत से दुख हैं, उन सब में चिन्ता सबसे बड़ा है। भगवती समस्त दुख ताप को शान्त करने के लिये पूर्णमासी के चन्द्रमा के समान है। अर्थात् सूर्य की किरणों के तेज से मनुष्य तपता है तथा चांदनी उस ताप को दूर कर ठंडक प्रदान करती है। योगी लोग अपनी इच्छा से व्रत-साधना, यम-नियम आदि से अपने को तपाते हैं, उनके तप को ही तपस्या में परिवर्तित करती है, क्योंकि अग्नि में ही चंद्रमा की शीतलता भी विद्यमान रहती है। सूर्य के प्रकाश से ही चंद्र चमकता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३५८. तरुणी

अर्थात् युवती। हमेशा सोलह वर्ष की षोडशी। कभी वृद्ध न होने वाली। काल का जिस पर प्रभाव नहीं होता। वह तो स्वयं काली है। काल की भी काल उसके अधीन है, वह उसकी जननी है। अत: ये हमेशा युवती तरुणी है। तरुणावस्था में भी संसार में रहते हुए या गृहस्थ में रहते हुए भी तप का संस्कार बनाना, क्योंकि वह एक आजीवन साधना है।

३५९. तापसाराध्या

तपस्या क़रने वाले जिनकी आराधना करते रहते हैं। तपस्वियों की आराध्य देव। ध्रुव, प्रह्लाद आदि बालक-अवस्था से ही तपस्या में लीन थे। तपस्या एक जीवन का कृत्य न होकर अनेक जन्मों के संस्कार का फल है, जो एक जीवन में बाल्यावस्था से ही जीवनपर्यन्त चलता रहता है।

३६०. तनुमध्या

जिसकी पतली कमर हो। यानी मध्य का भाग जो कटि है, यह स्त्रियों के सौंदर्य का बोधक है। कृशोदरी। शंकराचार्य ज़ी ने सौंदर्य-लहरी में परिक्षीणा मध्ये. कांची देश में तनुमध्याख्या देवी प्रसिद्ध है (ज़ो बिल्वेश्वर की पत्नी है और नीवा या नींव नदी के किनारे रहती है) "तनुमध्या" तगण्य गण जिसमें हो। भगवती के नाम में भी गायत्री छन्दसामहम् आया है। तनु का शाब्दिक अर्थ सूक्ष्म भी है और सूक्ष्म से स्थूल फैलने वाला भी है। संसार का सृजन इसी स्थान से होता है यही सूक्ष्म भी होंती है, और यही स्थूल भी।

३६१. तमोपहा

तम जो अन्धकार है, उसे नष्ट करके प्रकाश-रोशनी करने वाली। अन्धेरे में प्रकाश चन्द्रमा के रूप में, सूर्य या अग्नि के रूप में। अज्ञान भी अंधकार है तो भगवती ज्ञान प्रदान कर प्रकाश कर देती है, वह ज्योतिर्मय है। अविद्या की उपासना से तम नरकों में जाता है।

३६२. चिति:

चेतना या ज्ञान या चैतन्यता-जोकि संसार में चैतन्यता लाने वाली शक्ति। "या देवी सर्वभूतेषु चेतन्येत्यभिधीयते"। सूर्य, चन्द्र, विद्युत, अग्नि, जीव वृक्षों सभी में चैतन्यता विराजती है। यदि "चिति" माता शरीर में न हो, तो वह मृत देह मात्र है। सच्चिदानन्द, सत् चित् और आनंद ईश्वर का

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

..ा है। सूर्य चैतन्यशक्ति से ही चलता है। मनुष्य अचेतावस्था में कुछ कर नहीं सकता, चैतन्य होने पर क्रियाशील हो उठता हैं।

शक्तिसूत्र के अनसुार चित स्वतंत्र है तथा इस ब्रह्माण्ड की स्थापना का कारण है। महावशिष्ठ के अनुसार चित ही देवी है, तथा जो जीवन चाहते हैं, उसका वह जीवन है।

चिति, चित्त, चित् तीनों में ही चेतना का बोध समाहित है। जड़ से चेतन, निश्चलता से चंचलता, ही चिति का आविष्कार है।

३६३. तत्पदलक्ष्यार्था

सत्य के दो रूप हैं, जो प्रत्यक्ष सत् या सत्ता है, वह भौतिक है तथा इसके विपरीत जो अप्रत्यक्ष सत्य है जो मूर्त रूप में नहीं है अनुभवगम्य है, वही तत् है मूर्त के भीतर अमूर्त रूप को तत् कहा जाता है।

तत् पद तत्वमसि। तत् पद का ज्ञान कराने वाली या लक्ष्य कराने वाली। तत् का ही लक्ष्य मानकर उसकी उपासना है। तत् परब्रह्म परमात्मा को लक्ष्य करता है। "तत्" जिसको करके कहा है वह यही देवी है। तुम वही हो तत्त्वमसि। तत् त्वम असि, वह और तुम एक ही सत्ता के दो नाम हैं, वेदांत का यही सार है।

३६४. चिदेकरस रूपिणी

सच्चिदानन्द रस ही जिसका स्वरूप है। यो यःच्छ्द्धः स एव सः चिदानन्दाकारं शिव युवति भावेन विभृषे। संसार के सभी रसों से ऊपर जो रस है, रसोवै सः। चित्त का आनंद ही रस में बदल जाता है। चित्त का लक्षण ध्यान है, ध्यान से ज्ञान, ज्ञान से आनंद की प्राप्ति होती है आनंद रस है और रस ही भगवती है। शब्द जड़ है अर्थ चेतन परन्तु ये रस की कोटि में चित्त की सहायता से पहुंचते हैं।

३६५. स्वात्मानन्दलवीभूत ब्रह्माद्यानन्दसंततिः

सब प्रकार का आनंद प्राणियों को प्रदान करने वाली। वह आनंद की केन्द्र बिन्दु है अथवा आनंद का कोष या निधि समुद्र है। मनुष्य की आनंद की पराकाष्ठा को नहीं मापा जा सकता परन्तु एक से दूसरा आनंद सौ गुना के क्रम में गंधर्व आनंद, देव-गंधर्व आनंद, पित्रानंद, अजानंज देवानंद, कर्म-देवानंद, इन्द्रानंद, बृहस्पति, प्रजापति और इस सबसे बड़ा ब्रह्मानंद तथा ब्रह्मानंद से सहस्रों गुना आत्मानंद होता है, जो आराधक को अमरत्व के तत्व

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

का बोध करा देता है। भगवती की कृपा से प्राप्त आत्मानंद प्राप्त होने से ब्रह्मानंद कण मात्र लगता है-सब आनंदों की जननी।

३६६. परा

सबसे परे, यानी दूर। शब्दों के उच्चारण में वाणी की चार संज्ञा हैं- परा, पश्यन्ती, वैखरी और मध्यमा। ये शब्दब्रह्म रूपिणी हैं। शब्दब्रह्म अखण्ड अविनाशी है। आनंदों का अनुभव नाभि, हृदय, कंठ और रसना चार स्थानों में होता है, यह भी क्रमशः अधिक गहन होता जाता है। वाणी सूक्ष्म रूप में नाभि में निवास करती है, उसे "परा" कहते हैं। यही हृदय में पश्यन्ती, कंठ में मध्यमा और रसना यानी जीभ में वैखरी रूप में क्रमशः स्पंदित, संचारित और वैखरी बनकर निकलती है जीभ से।

३६७. प्रत्यक्‌चितीरूपा

अन्तर्मुखी चित्त वाली। अव्यक्त ब्रह्म परा वाणी सुनने को अपना ध्यान अपने मस्तक पर लगाकर एकाग्र करना पड़ता है, अतः वह वाणी प्रत्यगात्मा कहलाती है। वाणी का रहस्य ज्ञान करने के लिये अन्तर्मुखी होना पड़ता है, अपने चित्त से ही वाणी के रहस्य का ज्ञान हो सकता है, अतः भगवती को प्रत्यक् चिती रूपा कहा गया है वह सबके घट की जानने वाली है।

३६८. पश्यन्ती

वाणी के चार रूप हैं- परा, पश्यन्ती, मध्यमा तथा वैखरी। कंठ से संचारित होने वाली मध्यमा वाणी को समझने के लिये आंखों का आश्रय लेना पड़ता है। वैखरी तो कानों से सुनी जा सकती है। आंखों की भाषा को आंखों से देखकर ही सुना जा सकता है। यह बिंबात्मक भाषाा चेतना में स्थित है।

३६९. परदेवता

सब देवताओं से परे। परदेवता। यह पश्यन्ती का विशेषण है। इससे अर्थ का ज्ञान होता है। वह मात्र सर्वोच्च देव के रूप में पूजी जाती है। चिदग्निकुंड में हुई आवाज या उसकी वाणी को जो सबसे नीचे से निकलती है सुनने के लिये सबसे ऊंचे ललाट से ही सुना जा सकता है। वहां परदेवता का निवास हैं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३७०. मध्यमा

परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी ये चारों तत् के ही भाग हैं। वह वाणी जो मध्य में निवास करती है या जो न तो पश्यन्ती है और न ही वैखरी, जो सुनी जा सके। हृदय की भाषा को हृदय ही पहचान सकता है। पश्यन्ती सूक्ष्मा है, वैखरी बाहरी है परन्तु मध्यमा प्रकाशवान है और सब अंगों से युक्त वाणी है। यह स्मृतिगोचरा है। इसी को संकल्प रूपा क्रम रूपानुपातिनी अर्थात् श्रृंखला बद्ध कहते हैं।

३७१. वैखरीरूपा

शब्द की घनावस्था या कठिन अवस्था। "खं'' आकाश को भी कहते हैं जिसके द्वारा वाणी का विस्तार होता है, फैलता है। जैसे आकाशवाणी शब्द आकाश से ही आकर्षित होते हैं। अर्थात् कर्ण विग्रह रूपा है। "वि'' अर्थात् अधिक "खरा'' यानी कठिन वाणी, जो अपने भौतिक रूप में हो। सौभाग्योदय के अनुसार "वै'' अर्थ निश्चित तथा ख यानी छिद्र (कान का) तथा "र'' जाना या अंदर आना।

३७२. भक्तमानसहंसिका

जिस प्रकार पौराणिक "हंस'' मानसरोवर में पाया जाता है, ऐसा कहते हैं। भगवती भक्तों के मान-सरोवर में रहने या उसमें तैरने वाली "हंसी'' है। योगी लोग विभिन्न ग्रंथियों को उनके विभिन्न स्थानों यानी हृदय, नाभि, ललाट आदि में प्रत्यक्ष करने का प्रयास करते हैं। भगवती मानस-मराल बनकर भक्तों के पवित्र मन में स्वच्छन्द विचरण करती रहती है। इसीलिये भक्त रास्ता जो अपना तय करते हैं परन्तु वह अपनी "हंसिनी'' के दिखाए मार्ग पर ही चलते हैं।

दूसरे यह ही वह मंत्र भी है, जिससे योगी-जन ब्रह्म-संबंध प्राप्त करते हैं। यह अजपा मंत्र के नाम से विख्यात है, जिसे सद्गुरु ही प्रदान करते हैं तभी यह फलीभूत होता है। इसका ध्यान है-

द्या मूर्धानं यस्य विप्रा वदन्ति, खं नाभिं चंद्र सूर्यो च नेत्रे
दिग्भिश्रोत्रं यस्य पादाक्षितिश्च, ध्यातव्योऽसौ सर्वभूतान्तरात्मा।

३७३. कामेश्वरप्राणनाडी

भगवान शंकर की प्राण शक्ति। जैसे प्राण के बिना शरीर बेकार (शव) हो जाता है, इसी प्रकार शिव की प्राणरूपा। भगवान शंकर ने हलाहल

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

जहर पी लिया। भगवती तब भी उसमें वर्तमान रही, जिससे शिवजी का बाल बांका न हुआ। ये भगवती के सौभाग्य चिह्न गहनों का ही प्रभाव है।

कामेश्वर और कामेश्वरी में वस्तुतः कोई अन्तर नहीं है, परन्तु जैसे शरीर को नाड़ियों के द्वारा ही संचालित किया जा सकता है या मन से उपजी भावना मस्तिष्क आदि की सहायता से क्रिया में परिवर्तित हो जाती है। मन ही कामनाओं का निवासस्थल है यही कामेश्वर है, इसमें उठी भावना या कामना भगवती कामेश्वरी है। कामनानुसार मनुष्य मुख से वाणी निकालता है या क्रियाशील हो जाता है। दूसरे शब्दों में कामेश्वर ही मन में कामनाओं को पैदा कर उन्हें स्वेच्छानुसार क्रियाशील बनाते हैं, परन्तु इस सब में प्राणनाडी का कार्य करने वाली कामना ही है, इसी से सब क्रियाशील हैं।

३७४. कृतज्ञा

मनुष्यों के कृत्यों को जानने वाली। कृतज्ञता जो कुछ भगवती द्वारा किया जाता है, वह उसको भूलती नहीं अपितु मनुष्यों के किये सुकृतों के उपकार के रूप में प्रत्युपकार करने वाली। जितना उनके लिये कृत्य करता है, उससे अधिक फल देने वाली। "फलमपि चं वांछासमधिक" जो इच्छा भगवती से करो, उससे भी ज्यादा देने वाली-कृतज्ञा।

मानवमात्र के अच्छे और बुरे कार्य सूर्य, चन्द्र, समय, पंचतत्व तथा धर्मराज (मृत्यु के देवता) इन नौ से छिपे नहीं होते। अब चूंकि भगवती इनसे पृथक् नहीं है, अतः वह सबकी क्रियाओं को जानने वाली है।

पासे के खेल के सिद्धान्त में चार द्यूत होते हैं, जो कृत, त्रेता, द्वापर व कलि इनके क्रमशः ४, ३, २, १ होते हैं तथा क्रमशः १०, ६, ३ व १ गिने जाते हैं। सबसे बड़ा कृत जिसमें सबसे अधिक अंक होते हैं, तथा उसमें सभी शेष तीन छोटे शामिल होते हैं। भगवती कृतज्ञा है।

३७५. कामपूजिता

कामदेव यानी मन्मथ द्वारा पूजित। कामनाओं को सिद्ध करने वाली। ऐहिक और पारलौकिक काम पूर्ण करने वाली। लक्ष्मी का यह पुत्र देहधारी नहीं है, क्योंकि इसे कामेश्वर ने भस्म कर दिया था, अतः इसके शरीर या मस्तिष्क नहीं है, परन्तु भगवती की ही कृपा से वह जीवधारी है, वह पंचदशी-रत्न प्राप्त है। इस अशरीरी को अनंग और पंचबाण भी कहते हैं। भगवती भी पांच बाण धारण करती है। मंत्र-शास्त्र में काम का संधिविच्छेद क से ब्रह्मा अ से विष्णु तथा म से महेश्वर तीनों को देखा जाता है, अर्थात् भगवती इन तीनों से पूजित है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३७६. श्रृंगाररससम्पूर्णा

श्रृंगार से रस से पूर्ण ब्रह्म के साथ रहने वाली। यहां श्रृंगार रस बहुत रहस्यमय है। मानवीय श्रृंगार बिंदी, काजल, पान, इत्र-सुगन्ध आदि है, भगवती का श्रृंगार में जैसे उसके मुकुट की शोभा बढ़ाने के लिये चन्द्रमा विराजमान है। कामेश्वरी की कमनीयता भरा यह चौथा नाम उसके रूप माधुरी का वर्णन करता है। जहां सांसारिक जीवन में "स्त्री'' को संसार की सर्वश्रेष्ठ प्रतिमा माना जाता है। भगवती की कृपा से उत्पन्न श्रृंगार रसमयी स्त्री का पुरुष से संयोग तन-मन को एक कर देने वाला होता है, अध्यात्म संसार में भक्त का भगवती से प्रेम उसमें लीन कर देने वाला होता है, ये दोनों आनंद प्रणय व प्रणव, क्षणिक और अक्षुण्ण है। भगवती का रूप-माधुर्य समस्त ब्रह्माण्ड के कण-कण में है। रूप चन्द्रमा की चांदनी या उसके विभिन्न रूपों में हो या सूर्य की लालिमा वृक्षों की सुन्दरता पवन में, जल में, पर्वतों या हीरे-मोती आदि में सब उसके ही विभिन्न रूप हैं। सौंदर्य या श्रृंगार से ही प्रेम की उत्पत्ति होती है और प्रेम से ही आनंद प्राप्त होता है, आनंद से भगवती और भगवान्।

३७७. जया

सर्वत्र जिसकी जय है। जब कोई शत्रु दुष्ट भाव से या युद्ध करने आता है भगवती उस पर विजय प्राप्त कर लेती है। सब देव मनुष्य आदि जिसकी जय-जयकार करते हैं। वह जया है।

जया जिसकी उपासना से प्राणी शुत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है। मनुष्य के सबसे बड़े शत्रु काम, क्रोध, लोभ, मोह, अभिमान, ईर्ष्या-द्वेष, दम्भ हिंसा झूठ कपट, जड़ता, नास्तिकता आदि हैं। इन पर विजय दिलाने वाली जया। पद्मपुराण के अनुसार वाराह नामक गिरि पर पूजे जाने वाली देवी है जया।

३७८. जालन्धरस्थिता

जालन्धर पीठ है वहां निवास करने वाली। जालन्धर पंजाब में है तथा शरीर में भी जालन्धर है। पद्मपुराण के अनुसार जालन्धर एक स्थान है, जहां भगवती विष्णुमुखी के नाम से पूजी जाती है। भावनापीठ के आधार पर ध्यान पीठ और ज्ञान पीठ हैं। ध्यानपीठ नाद की महिमा पुष्ट करता है, यह अनाहत चक्र के पास है। यह मध्यकूट में है, हृदय में है। साधना का केन्द्र भी हृदय है क्योंकि योगीजन हृदय में ही इष्ट का ध्यान करते हैं। हृदय -

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

में प्रफुल्लता रहती है और आनंद मिलता है। ध्यानपीठ या जालन्धर पीठ की अधिष्ठात्री "जया'' (३७७) है।

३७९. ओड्याणपीठनिलया

मूलाधार में भावना पीठ के आगे ध्यानपीठ यानी जालंधरपीठ का पिछले नाम में वर्णन किया दूसरा ज्ञानपीठ है इसे ही ओड्याण-पीठ कहा जाता है। भावनापीठ मूलाधार के शक्ति कूट विशुद्ध चक्र के वाग्भव कूट से जुड़ा है। मेरु तंत्र के अनुसार कांची का कामकोटि पीठ देवी का नाभि स्थान है, इसे वाग्भवकूट भी कहते हैं। मूलाधार वाणी और वासना दोनों का केन्द्र है। नाद का केन्द्र, उत्पत्ति स्थान है मूलाधार। नाद को ब्रह्म भी कहते हैं। अनाहत चक्र में नाद अपना रूप प्राप्त करता है, पुष्ट होता है। तब मुख से निकलकर अपना स्वरूप प्राप्त कर बाहर निकलता है। परन्तु निकलने से पूर्व वह आज्ञाचक्र में जाता है जहां वह बिंदु से आज्ञा लेकर बाहर आता है। आज्ञाचक्र में ओड्याणपीठ पर ही रुद्र ग्रंथि है। यही ज्ञान पीठ है, इसमें रहने वाली भगवती को ओड्याणपीठनिलया कहा गया है।

३८०. बिन्दुमंडलवासिनी

विन्दु मंडल श्रीचक्र में त्रिकोण के मध्य में है। मानव शरीर में सिर पर सहस्रार उसके मध्य में जो रहती है। आनंदलहरी में कहा है-

सहस्रारेपद्मे सहरहसिपत्याविहरसे

अर्थात् सहस्रदल में कमल है, वहां निवास करने वाली। विन्दु का अर्थ कुछ लोग "श्वेत'' भी लगाते हैं, मंडल अर्थ गोलाकार उसमें रहने वाली। यह है ब्रह्मरन्ध्र। इसे सर्वानन्दमय भी कहते हैं। बिन्दु रहस्यमय नाम है।

३८१. रहोयागक्रमाराध्या

एकान्त में याग उपासना आराधन करने से एकान्तयाग कहा जाता है। गीता में कहा है- योगी युंजीत् सततमात्मानं रहसि स्थितः। योग-साधन एकान्त में ही स्थित रहकर किया जा सकता है। साधना का वहीं स्थान सर्वोत्तम है। वह एकान्त स्थान जिसे सहस्रार कहते हैं, शिव और शक्ति के मिलन का स्थान जहाँ से अमृत बरसता है। मूलाधार की कामना, अनाहत का ध्यान और आज्ञाचक्र का ज्ञान क्रमशः कामकोटि,जालंधर और ओड्याण पीठ है। इसमें क्रमशः नाद, विन्दु और कला का स्थान है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३८२. रहस्तर्पणतर्पिता

एकान्त में तर्पण से तृप्त रहने वाली। विशेषार्घ के विन्दु से सन्तुष्ट रहने वाली। इसका तात्पर्य अन्योन्य प्रकाश और विमर्श के मिलाने से है। अन्तर्याग कुंडलिनी शक्ति है, जो करोड़ों सूर्य के समान और "तडित्कोटि प्रभादीप्तां'' करोड़ों विद्युत (बिजली) के समान जिसका प्रकाश है, यही जगदीश्वरी की प्रतिमूर्ति है जब वह परम पुरुष ब्रह्म से मिलती है तब परमानन्द का पूर्ण सुख प्राप्त होता है। जैसा कि गीता में भी कहा है-"सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्'' यह सुख इन्द्रियों का नहीं हो जो कि क्षणिक है, यह अनन्त सुख है, जो कि कभी नष्ट नहीं होता है। इसको विस्तार से यहां कहने का स्थान नहीं है। सहस्रार से अंमृत वर्षा से तृप्त होने वाली भगवती की आध्यात्मिक साधना में जैसे कि मानसिक पूजा होती है। यह भावना-प्रधान रहस्यमयी साधना ही रहोयाग कही जाती है और इसी से भगवती संतुष्ट हो जाती है, इसलिए इसे रहस्तर्पणतर्पिता कहा गया है।

३८३. सद्यःप्रसादिनी

शीघ्र प्रसन्न होने वाली अर्थात् अन्तर्याग द्वारा जल्दी खुश होकर भक्त को अभीष्ट वर प्रदान करने वाली। अन्य देवता तो विचार करते हैं, परन्तु भगवती तो शीघ्र प्रसन्न हो जाती है।

३८४. विश्वसाक्षिणी

विश्व जिसका साक्षी है। ईश्वरी है तो कहां है, इस शंका का समाधान करने को विश्व ही साक्षी है। प्रत्यक्षे कि प्रमाणम्, समस्त प्रकृति ही उसका रूप है। वह सभी वस्तुओं में, सभी समय और सभी क्रियाओं में विद्यमान है।

"खं वायुमग्निं सलिलं महींश्च ज्योतींषि सत्वानि दिशद्रुमादीन्,
सरित्समुद्रांश्चहरेः शरीरं, यत्किंचभूतं प्रणमेदनन्यः। ''

भगवती संसार को देखती है, संसार के भौतिक नेत्र उसे नहीं देखते। मंत्रद्रष्टा ही उसे देख पाते हैं।

३८५. साक्षिवर्जिता

दूसरा कोई साक्षी नहीं है अतः वह साक्षी से वर्जित है। वह अनादि अनंत है, अतः उसे कोई नहीं देख पाता है । वह सबको देख पाती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

३८६. षडंगदेवतायुक्ता

भगवती के छः अंग देवताओं से युक्त हैं। मूलाधार में गणेश, स्वाधिष्ठान नाभि उपस्थ के मध्य ब्रह्मा, मणिपुर -नाभि-विष्णु, अनाहत-हृदय-शिव, विशुद्ध-कंठ-जीवात्मा, आज्ञा चक्र -भ्रूमध्य-परमात्मा।

कर षडंग है, अंगुष्ठ या अंगूठा, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा तथा करतल का पृष्ठ भाग।

हृदयादि षडंग : हृदय, सिर, शिखा, कवच, नेत्र तथा अस्त्र।

सर्वज्ञता, तृप्ति, अनादिबोध, स्वतंत्रता, नित्यता अलुप्तशक्तित्व ये षडंग देवता है।

षडैश्वर्य: ऐश्वर्य समग्र, धर्म, यश, श्री, ज्ञान, वैराग्य

वाणी भी भगवती ही है, जिसके के दो रूप है मुखर, जिसे भौतिक जगत सुनता है दूसरी मौन जिसे मात्र हृदय सुनता है। मुखर में सात स्वर हैं स,रे,ग,म,प, ध,नि स गौण है/ तथा मौन जिससे मंत्र की वाणी कहा जाता है उसके छः उद्गम स्थान हैं: ये हैं कंठ, तालु, मूर्द्धा, दांत, ओठ तथा नासिका। मंत्र भी ब्रह्म रूप होते हैं, इनके भी छः अंग हैं- ऋषि, छंद, देवता, बीज, शक्ति तथा कीलक। भगवती के किसी भी रूप में जायें उसके छः अंग मिलेंगे।

३८७. षाड्गुण्यपरिपूरिता

भगवती छः गुणों से परिपूर्ण है। अर्थात् जो पूर्व नाम में विवरण किया ईश्वर के छः लक्षण हैं- ऐश्वर्य, यश, श्री ,ज्ञान, वैराग्य व धर्म। अर्थात् कीर्ति, समृद्धि, सम्पत्ति, विवेक, वैराग्य और धार्मिकता।

संगीत के स्वर छः हैं रे से नि तक तथा स उसका समाहार है, इन छः से पैदा हुआ है, अत: उसे षड्ज भी कहते है।

शिव के पुत्र षडानन छः मुख वाले है। ऋतुऐं भी छः हैं-वसन्त, ग्रीष्म,शिशिर, वर्षा, हेमन्त व। स्वाद अर्थात् मीठा, नमकीन, कसैला, कडुआ आदि भी छः रस हैं। षडरस व्यंजन। राग मल्हार, भैरव आदि छः प्रमुख हैं। वेदान्त न्याय वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा, षड्दर्शन हैं। शिक्षा, कल्प, निरुक्त, छंद, व्याकरण और ज्योतिष को वेद के छः अंग माना गया है। भगवती छः गुणों से परिपूर्ण है।

३८८. नित्यक्लिन्ना

नित्य दयार्द्र। नित्य ही जो अपनी दया, करुणा के रस को प्रकट करती है, अपने अंगों से। उसके समस्त अंगों से दया लहरा रही है और नेत्रों

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

में है- अद्‌भुत करुणा कौ मद नैनन में सोहै। भगवती की सोलह कलाओं में तीसरी कला नित्यक्लिन्ना वैशाख शुक्ल "अक्षय तृतीया'' की अधिष्ठात्री देवी है।

३८९. निरुपमा

जिसकी कोई उपमा नहीं है। भला उस के समान हो भी कौन सकता है, भौतिक जगत में कोई भी रिश्तेदार स्त्री मां नहीं हो सकती, केवल मां ही मां हों सकती है। यह ही एक अखंड सत्य है।

३९०. निर्वाणसुखदायिनी

निर्वाण अर्थात् मोक्ष देने वाली। शरीर के तीन रूप हैं- स्थूल, सूक्ष्म और कारण। इन्हीं को बाण कहा है। इन तीनों का लय होना मोक्ष है। भगवती भोग और मोक्ष दोनों देने वाली है।

नि यानी बिना अथवा स्वतंत्र तथा वाण यानी यह शरीर। शरीर रहित। कूर्मपुराण के अनुसार भगवती कहती है हिमवान से कि "यदि तुम मुझे नकार देते हो, हे पर्वतों के राजा, तुम्हारी आत्मा कभी भी शांत नहीं रह सकती है। तुम्हें कभी परम मोक्ष प्राप्त नहीं होगा, अत: मुझे एक मात्र या अनेक रूप या द्विरूपा समझ कर मुझमें समर्पण कर दो और मेरी पूजा करो। हे राजा, तुम को वह अवस्था प्राप्त होगी''। मां बालक की जन्म दात्री है पालन करने के लिये दूध भी वही देती है वह सब कुछ देती है और अपनी गोद में भी वही लेती है, जिससे आत्मा निश्चित होकर गर्भ में रहता है गोद में सोता है या निर्वाण प्राप्त कर संसार के दु:खों से छूट जाता है।

३९१. नित्याषोडशिकारूपा

तंत्र में सोलह नित्या हैं। ये हैं क्रमश: कामेश्वरी, भगमालिनी, नित्यक्लिन्ना, भेरुण्डा, वन्हिवासिनी, महावज्रेश्वरी, शिवदूति, त्वरिता, कुलसुन्दरी, नित्या, नीलपताकिनी, विजया, सर्वमंगला, ज्वालामालिनी, चित्रा, तथा त्रिपुरसुन्दरी। भगवती त्रिपुरसुन्दरी के पूर्व १५ नाम उसके अंग है, यही उसका स्वरूप है। वह हमेशा सोलह वर्ष की ही युवती बनी रहती है। उसे कभी वृद्धावस्था नहीं छू सकती है। जिसका मंत्र षोडशी विद्या है। करोड़ वाजपेय यज्ञों का फल षोडशी-मंत्र उच्चार से होता है। वह सोलह कलाओं से युक्त षोडशी है। सदा सोलह वर्ष की ललिताम्बा जो सोलह कलाओं से युक्त है, की सुषमा का क्या वर्णन हो सकता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

श्री यानी विष कण्ठ यानी गला, श्री कण्ठ शिव, अर्द्धशरीरिणी अर्थात् शिव के आधे अंग में निवास करने वाली। अथवा श्री चक्रराज में चतुर्भि श्री कण्ठैः शिव युवति पंचभिरपि - श्रीयंत्र में आधा स्थान है जिनका - इस प्रकार भगवान सदाशिव अर्द्धनारीश्वर हैं और शिवा उनकी अर्द्ध शरीरिणी। ब्रह्मोपनिषत्। (.४.-३) के अनुसार आदि में मात्र वह ही थी, बाद में उसने स्वयं को दो भागों में विभक्त कर लिया और तब से वह पुरुष-स्त्री रूप में पति-पत्नी रूप में हो गयी।'' भगवती भगवान की गोद में बैठी पुलकित होती रहती है, प्रकृति-पुरुष, शिव-शक्ति के इस संयोग से ही अखिल ब्रह्माण्ड कीं शक्तियों का संचालन होता है।

३९३. प्रभावती

प्रभा प्रकाशमयी अथवा प्रकाश या तेज की किरणें रश्मिमयी। तेजपुंज भागवत के प्रथमस्कन्ध में है।-"सर्वचैतन्यरूपान्तामाद्यां विद्यां च धीमहि।''

प्राणीमात्र प्रकाशप्रेमी होता है। प्रकाश से प्रेम का सीधा सम्बन्ध है प्रेम ही मानव जीवन का प्रकाश है। मानवजीवन के पांच लक्षण-अस्ति, भाति, प्रकाश, प्रेम,नाम तथा रूप। ये प्रथम तीन जीवन की विशेषता तथा अन्तिम दो लक्षण हैं। इस नाम से प्रारंभ इस श्लोक में सात नाम भगवती की प्रभा का ही वर्णन करते हैं। भगवती भी गौरांग हैं। प्रकाश का रंग भी श्वेत ही माना गया है। आज के वैज्ञानिक प्रकाश के सात रंग मानते हैं, जिन्हें मिलाकर देखने से वह श्वेत ही दीखता है।

३९४. प्रभारूपा

प्रकाश रूपा। अणिमा आदि सिद्धि जिसकी प्रभा रूप हैं। उत्कृष्ट प्रभा वाली। श्रुति कहती हैं "मस्तिष्क भी स्वयं प्रकाश है " आत्मा शरीर का प्रकाश है जिस प्रकार आकाश अनन्त है, वायु का कोई अपना घर नहीं हैं, ये दोनों आकाश व वायु असीम अनन्त अखंड आत्मा के प्रतीक हैं। प्रभा ही है, जो धरती को आकाश से जोड़ती है। भगवती प्रकाश की अक्षय निधि है, जिस प्रकार से एक दीपक से दूसरा जल जाता है तथा पहला दीपक यथावत् बना रहता है, वह प्रकाश की अक्षय निधि है।

३९५. प्रसिद्धा

जब भगवती प्रकाश रूपा है, तो प्रसिद्ध तो स्वयमेव ही हो गयी।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

क्योंकि प्रकाश होने से ही किसी व्यक्ति या वस्तु के होने का परिचय मिलता है। प्रकाश होने से बाहरी जगत और आंतरिक प्रकाश यानी प्रेम के सहारे आंतरिक जगत आत्म जगत में समरसता पैदा हो जाती है। प्रसिद्धि सामान्यतः एक सामाजिक स्थिति है। परन्तु यह एक दिव्य जगत् अस्तित्व को प्रकट करती है। प्रकाश व प्रेम की स्थिति से भगवती के अस्तित्व का बोध प्रसिद्ध है।

३९६. परमेश्वरी

ईश्वरों की ईश्वरी परम ईश्वरी। यथा राजेश्वर, धनेश्वर, विद्येश्वर, सिद्धेश्वर, यज्ञेश्वर, ब्रह्मेश्वर, भुवनेश्वर आदि असंख्य ईश्वर सबकी परमेश्वरी सर्वोत्कृष्टा। ईश्वर द्रव्य है, तो ईश्वरी उसकी ऊर्जा। वह ईश्वर की प्राणशक्ति है, जैसे सूर्य का प्रकाश, आग का ताप, प्रेमी का प्रेम एक ही वस्तु के दो पहलू हैं। वह शिव की शक्ति है।

३९७. मूलप्रकृति

मू अर्थात् पंचतन्मात्रा, शब्द, स्पर्श, रूप रस गंध। ल कार का मतलब अव्यक्त महत् अहंकार। ब्रह्म ही प्रकृति है। गीता- प्रकृतिरष्टधा। 'प्रकृतिं पुरूषंचैव विद्धयनादीवुभावपि'। देव्यथर्वशीर्ष- वेद में प्रकृति पुरुषात्मकं जगत् रात्रिसूक्त - प्रकृतिस्त्वं। समस्त कृति का आधार प्रकृति ही है। गीता कथनानुसार प्रकृति सृष्टि करती है तथा इसके लिये वह प्रेरणा प्राप्त करती है पुरुष से । परन्तु उस प्रेरणा को भी प्रेरित करने वाली वह मूल शक्ति ही मूल प्रकृति है।

३९८. अव्यक्ता

जोकि इन्द्रियों से न जानी जाय। अर्थात् व्यक्ति रूप से नहीं दीखती। प्रकट नहीं है। २४ वां तत्व जो कि कामकला नाम से जाना जाता है। वृक्ष को तो सब देखते है, उसके बीज को कौन देखता है, अव्यक्त द्वारा यह रहस्यपूर्ण नाम अमूर्त से मूर्त, असीम से ससीम, सूक्ष्म से स्थूल का विस्तार का यह रहस्य प्रत्यक्ष सत्य भी है। श्रुति कहती है कि वह न तो आंखों के द्वारा देखी जा सकती है, न भाषा भाषण द्वारा व्यक्त की जा सकती है, न वह क्रिया द्वारा जानी जा सकती है।

३९९. व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी

व्यक्त और अव्यक्त दोनों ही जिसके स्वरूप हैं जैसा कि वेद में आया है। द्वे एव ब्राह्मणो रूपे व्यक्तंच अव्यक्तंच। गीता अ०८ में

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

'व्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः' कहा है। श्रीयंत्र में वह विन्दु से चलकर रेखाएँ मिल
Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
जाती हैं, विलीन हो जाती हैं, या कहें कि जिस विन्दु से चलकर रेखाएं तथा वृत्त बनते हैं। अर्थात् वह विन्दु है जहाँ से सिन्धु बनता है। ब्रह्मवैवर्त पु० में लिंग तीन प्रकार के हैं व्यक्त, अव्यक्त व व्यक्ताव्यक्त।

४००. व्यापिनी

जोकि सर्वत्र व्याप्त है। कोई वस्तु ऐसी नहीं, जहां ईश्वरी न हो। 'यथाकाशस्थितोनित्यो, वायुः सर्वत्रगो महान्।'

'रामायण, हरि- व्यापक सर्वत्र समाना'। यह प्रकृति है, जो सर्वत्र विद्यमान है। भगवती के दिव्य सांनिध्य का अनुभव भावना के बल पर ही किया जा सकता है।

४०१. विविधाकारा

विविध आकारों से आप सब जगह दर्शन देती हैं। कहीं काली, कहीं सिंह-वाहिनी, तो कहीं हंस वाहना, कहीं लक्ष्मी , कहीं सरस्वती और कहीं दुर्गा या राधा, सीता। पृथ्वी के कण-कण में विद्यमान है। उसके नाम अनन्त हैं रूप अनन्त हैं। भगवती के स्वरूप की विविधता है या विविधता का स्वरूप है।

भौतिक या अभौतिक सभी स्वरूप भगवती के हैं। चाहे धरती, पानी, आग, सूर्य, चन्द्र या तारे एक ही ज्योति के रूप हैं। इच्छा, ज्ञान, क्रिया शक्ति सभी उस परमेश्वरी की ही ऊर्जा हैं। इसलिये वह विविधाकारा है।

४०२. विद्याविद्यास्वरूपिणी

विद्या प्रकाशस्वरूपिणी, अविद्या अन्धकार या अज्ञान दोनों ही इसके स्वरूप हैं। जैसे प्राणी और उसकी छाया विद्या (ज्ञान) दोनों ही आपके स्वरूप हैं। देव्यथर्वशीर्ष में ' विद्याहमविद्याहम्' कहा है कि मैं ही विद्या और मैं ही अविद्या हूँ। अथवा विद्या अमृत- विद्ययामृतमश्नुते, अविद्यया मृत्युं। विद्या मोक्ष और अविद्या बन्धन हैं।

लिंग पुराण के अनुसार शिव के तीन रूप हैं: भ्रांति, विद्या और परा। विद्वानों के अनुसार भेद कारक बुद्धि या ज्ञान को भ्रांति कहते हैं जबकि स्वयं के ज्ञान को विद्या और ब्रह्म-ज्ञान को परा जो कि सर्वोच्च है। भगवती मात्र सद्गुण-रूपा नहीं है अपितु असद्रूपा भी है। वह श्रद्धा भी है और निद्रा भी। शरीर का दोनों के बिना निर्वाह नहीं हो सकता है। ईशावास्य उपनिषत् में बताया गया है कि अविद्या की सहायता से मृत्यु को पार करके विद्या से

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

अमरत्त्व प्राप्त करना चाहिए। इस प्रकार की योगिक साधना से आत्मतत्त्व बोध प्राप्त होता है। ऐसी ही साधना (पंचमकार) तांत्रिक भी करते हैं।

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

४०३. महाकामेशनयनकुमुदाल्हादकौमुदी

महाकाम सबसे बड़ी कामना रखने वालों के ईश्वर। जो महाकामेश्वर उनके लाल कमल रूपी नयन (दोनों नेत्र) उस लाल कमल को आल्हाद आनंदित करने वाली या परम सुख देने वाली कौमुदी चांदनी। कुमुद कार्तिक के महीने को भी कहते है और कौमुदी उस माह की पूर्णिमा। कमल जो सूर्य के प्रकाश से खिल उठता है और कुमुद जो चांदनी के स्पर्श से खिलती है। महाकामेश की आंखें परमेश्वरी की पावनता को देखकर कुमुद की तरह खिल उठती हैं। कामेश्वर तो रति के पति को अपने संयम से भंग करने वाले हैं, वे भी भगवती के इस पावन स्वरूप को देखकंर उनके रक्त कमल नेत्र खिल उठते हैं। उन्हें प्रसन्नता होती है। यह नाम तपस्वियों को आत्मस्वरूपिणी-देवी के दर्शन कराने वाला है।

४०४. भक्तहार्दतमोभेदभानुमद्भानुसंतति:

भक्त के हृदय में जो तम (अन्धकार) है, उसको सूर्य की किरणों के समान प्रकाश से नष्ट करने वाली है। उसकी ज्योति उसी के अन्धकार को दूर करेगी, जो कि उसके उस ध्यान में मग्न होगा। कोटि सूर्य समान उस महाप्रकाश से भक्त का हृदय अंधकार दूर होगा। यह दो षोडशाक्षरी नाम हैं। इस नाम से स्पष्ट होता है कि मानव शरीर में प्रकाश के दो स्थान हैं, एक तो आंख, जिससे हम सब बाहरी प्रकाश को देखते हैं तथा दूसरा हृदय। जब नेत्र बंद होते हैं, तो ज्ञानचक्षु हृदय में होते हैं और यहां भगवती अपने भक्तों के लिये प्रेम और ज्ञान के प्रकाश से इसे आलोकित करती रहती है।

४०५. शिवदूती

शिवदूती षोड्श नित्याओं में सातवीं नित्या है। यह भगवती शिव की दूती बन चुकी है। जैसा कि दुर्गासप्तशती में भी लिखा है--

'यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिव: स्वयम्।
शिवदूतीति लोकेस्मिस्तत: सा ख्यातिमागता।'

दूसरे यह कि शिव को भगवती ने दूत बनाकर भेजा, इसलिये शिवदूती कहलाई। यह भी सोलह अक्षरों का श्लोकार्ध है। चार-चार नाम है तथा चारों शिव-शक्त्यात्मक नाम हैं। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार शिव स्वयं भगवती के दूत बने थे। यह पद्मपुराण के अनुसार पुष्करतीर्थ की देवी है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

४०६. शिवाराध्या

शिव की आराध्य। शिव ने आराधन करके स्वयं को शक्ति में लीन किया शक्ति-शक्तिमान् का अभेद हो गया। वह शिव मंत्ररूप बनकर शक्ति के साथ जप करने योग्य बन गये।

'कत्रयं हृद्वयं चैव शैवो भाव: प्रकीर्तिता:, शेषाणि शक्त्यक्षराणि ह्रींकार उभयात्मक:'' दोनों मिल कर अर्द्धनारीश्वर बन गये।

४०७. शिवमूर्ति

शिव अर्थात् कल्याणरूपा भगवती स्वयं शिव की मूर्ति है और शिव ही जिस भगवती की मूर्ति है। शिव की पिण्डी जिसमें स्थित है, वह जलहरी में गौरी शिवा है, ऊपर शिव लिंग उस पर विराजमान है। अभेद एक ही रूप है, जिसे "त्रिकोण-रूपिणी शक्ति, बिन्दु रूप: सदाशिव: '' कहते हैं।

४०८. शिवंकरी

शिव अर्थात् कल्याण करने वाली। मंगलमय। मंगल करने वाली। शिव का दूसरा अर्थ मोक्ष भी है, भगवती मोक्ष देने वाली।

४०९. शिवप्रिया

शिव की प्रिय या शिव हैं जिसके प्रिय।

४१०. शिवपरा

शिव की पराशक्ति। अर्थात् सबसे श्रेष्ठ। परा का अर्थ है शिव की साधना में शिव परायण शिव ही लक्ष्य है।

४११. शिष्टेष्टा

शिष्ट पुरुषों की इष्ट। शिष्ट उसे कहते हैं जिनका मन चंचल न हो। विहित कर्म करने वाले एवं अच्छे कर्म करने वालों से पूजित। अच्छे कर्म में प्रेम करने वाली। वशिष्ठ सूत्र के अनुसार शिष्ट वह है जिसने समस्त शरीर को नियंत्रित कर रखा है जो ब्रह्म के लिये समर्पित है, उनसे पूजिता जो नियमित आचरण वाले कल्याणकारी मन वाले विवेकशील और विनीत हैं वे उन की इष्ट देवी।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

४१२. शिष्ट पूजिता

शिष्ट पुरुषों द्वारा पूजित या अर्चित। जोकि स्थिर आसन से बैठकर आराधना करते हैं जैसा कि गीता (अ ६, १२, १४) में लिखा है "समं काय शिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः।" शिष्ट व्यक्ति शत्रुओं को भी मित्रवत् समझते हैं, वे निन्दक का भी अभिनन्दन करते हैं, ऐसी ही उसकी इष्ट देवी है, जो अहैतुक अनुकम्पा करती है, बिना मांगे ही सब कुछ दे डालतीं है।

४१३. अप्रमेया

जिसकी तुलना नहीं एवं जिसकी कोई परिधि नहीं। जिसका परिमाण नहीं, जो नापी नहीं जा सकती, ऐसी अप्रेमय है देवी। या ब्रह्मा और विष्णु जिन्हें जानने की कोशिश करते रहते हैं अथवा श्रुति अनुसार अप यानी जल प्रमेय यानी निवास यानी जल ही जिसका निवासस्थान है, समुद्र में रहने वाली लक्ष्मी देवी।

४१४. स्वप्रकाशा

जिसके प्रकाश से सूर्य प्रकाशित हो रहे हैं। जिसके प्रकाश से चन्द्रमा विद्युत और अग्नि प्रकाशित हो रही है। देवी स्वयं अपने प्रकाश से प्रकाशित है। जिस प्रकाश का ध्यान करने से यह जीवात्मा प्रकाशित है। वह स्वयंप्रभा मूर्ति है।

४१५. मनोवाचामगोचरा

मन से भी अगोचर जोकि मन और वाणी से ऊपर है। वाणी जिसका वर्णन नहीं कर सकती। उस अनन्त अनादि शक्ति का वर्णन करने में वाणी सर्वथा असमर्थ है। पुनः मन वाणी से अगोचर। अनिर्वचनीय। "यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।"

जिसको पाने के प्रयास में सफलता प्राप्त किये बिना मन और वाणी वापस चले जाते हैं।

४१६. चिच्छक्ति

जिसकी चैतन्य शक्ति से सब जगत चैतन्य है, चलता है- इच्छा-शक्ति या ज्ञान-शक्ति आदि के रूप में। देवी भागवत में-"चिच्छक्ति सर्व भूतेषु रूपं तस्यास्तदेव हि।" प्राणीमात्र में रहने वाली शक्ति। चिच्छक्ति यानी

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

चिंत् शक्ति यानी अविद्या को दूर करने वाली शक्ति। जैसे एक सेना नायक के नीचे सैन्य बल होता है, वैसे ही चित्त् शक्ति के नीचे अनेक शक्ति कार्यरत रहती हैं और शरीर में चित्त् शक्ति ही अन्य शक्तियों को संचालित करती है।

४१७. चेतनारूपा

ब्रह्म की महाशक्ति चेतना रूपा है। चेतना रहित को जड़ माना जाता है। किन्तु जड़ के अन्दर भी चेतना शक्ति निवास करती है जैसे पहाड़ है, वह भी घटता, बढ़ता है। पेड को जड़ माना जाये तो यह चेतना के बिना बढ़ नहीं सकता। वृक्ष में पत्ते फूल का लगना बिना चित्त् शक्ति के कैसे हो सकता है। प्रारम्भ श्लोक में भी भगवती को चिदग्निकुण्डसम्भूता कहा है कि वह अग्नि की भट्टी के समान जलती रहने वाली चित्रूपा चेतना है, जिसकी अपार शक्ति से संसार चलता है।

४१८. जडशक्ति

शक्ति अनेक रूपों में है। जड रूप जडता-अज्ञानता। वैसे भी वृक्ष की जड केवल वृक्ष का अंग है किन्तु वृक्ष तो छाया भी देता है पत्ते फल-फूल सुन्दर लगते हैं और सुगन्ध फैलाते हैं। जड तो जड है परन्तु उसमें भी शक्ति है जैसा कि वृक्ष के उपरोक्त उदाहरण से स्पष्ट हुआ जड चेतनात्मक जगत की चेतन शक्ति तो वह है ही जड शक्ति भी वही है। शक्ति तो जड और चैतन दोनों में समान रूप से बसी हुई है।

४१९. जडात्मिका

जो दृश्यमान् आत्म स्वरूप है, जो सृष्टि ब्रह्म को जानने में बिल्कुल असमर्थ है जो कि ये नहीं जानते कि हम कौन हैं, कहां से पैदा हुए और कौन हमको आहार देता है, कौन हमारी जीवन-लीला को समाप्त करता है इत्यादि जो भगवती को जानने में सक्षम नही हैं, उन जडों की भी जो आत्मा है ऐसी जडात्मिका।

४२०. गायत्री

जिसके द्वारा परब्रह्म का गान हो और तो बहुत गान राग रागिनी संसारी-जीवों को रंग रंजित एवं आकर्षित करने को हैं, किन्तु यह ब्रह्म का गान ही नहीं अपितु ब्रह्म ही है। 'गायन्तं त्रायसे यस्मात् गायत्री तेन कथ्यते' जिसका गान करने से त्राण रक्षा हो, वही गायत्री एवं वेद-जननी, वेदों की

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
माता, गायत्री वेद मातरः है। गीता-गायत्रीछन्दसामहम् अथवा गोपकन्या गायत्री अर्थात् ब्रह्मा की पत्नी गायत्री गायनाद् वापि गायत्री त्रिदशार्चिता।

एक मंत्र जो चौबीस अक्षरों का है। गायत्री मंत्र में आगे सात व्याहृति होती हैं तथा .. तत्सवितुर्वरेण्यं .. से गायत्री का प्रारंभ होता है। इसके चौबीस अक्षर चौबीस तत्वों के प्रतीक माने गये है। पृथ्वी, जल, पावक,गगन,समीर पंच भूत, शब्द, स्पर्श, रूप रस गंध पांच विषय, पांच ज्ञानेन्द्रिय तथा पांच कर्मेन्दिय- मन, बुद्धि चित्त अहंकार और महत्। गायत्री मंत्र तंत्र में प्रधान मंत्रपंचदशी की तरह है। भगवती कूर्म पुराण में बताती है 'मंत्रों में मैं गायत्री हूँ।' गीता (१०/३५) में भी यही है।

गोपकन्या गायत्री के बारे में पद्म पुराण में कथा है कि एकबार पुष्कर में ब्रह्मा तपस्या करते हुए यज्ञ कर रहे थे, तब उनकी अर्द्धांगिनि सावित्री को बुलाया परन्तु वह लक्ष्मी के यहां चली गई थी, उसने कहा जब लक्ष्मी और मेरी अन्य सखियों को बुलाओ तो हम आयें। कोधित होकर ब्रह्मा ने विष्णु से कहा कि यज्ञ/बलि में देर न की जाय तथा यहां एक पवित्र गोपकन्या है नाम है गायत्री। ' विष्णु बोले तब आप उससे गंधर्व रीति से विवाह करलें। इसके लिये आप ग्रहण करलें। तब विवाह हुआ।

४२१. व्याहृतिः

गायत्री मंत्र में प्रणव (ओउम्) के साथ, भूःभुवः, स्वः, महः, जनः,तपः, सत्यम् को कहा जाता है, इन्हें परमेश्वरी के रूप में बताया गया है। उपर्युक्त सात व्याहृति सात लोक रूप में मानी गयी है। व्याहरण अर्थात् उच्चारण। रूप वाली। वायु पुराण में वर्णन है :-

'मयाऽभिव्याहृतं यस्मात्त्वं चैवसमुपस्थिता। तेन व्याहृतिरेत्येवं नामतः सिद्धमेष्यति।'

४२२. संध्या

गायत्री मंत्र जाप के लिये तीन संध्या होती हैं। सांध्य काल में ही जप का महत्त्व बताया गया है। जब सूर्योदय हो रहा हो या सूर्यास्त हो रहा हो तथा इन दोनों के दिन में मध्य काल में। वैसे सान्ध्य जब दो काल मिलते हों उसे कहा जाता है, सायं, दिन बीतता है रात्रि काल का प्रारंभ होता है, तब सायं संध्या तथा सुबह जब रात्रि समाप्त होकर दिन आता है तब प्रातः सन्ध्या। वैसे प्रातः संध्या काल निर्णय के बारे में कहा गया है- "उत्तमा तारकोपेता मध्यमा लुप्त तारकाः। अधमा सूर्य सहिता प्रातः संध्या त्रिधास्मृताः। इसी प्रकार सायं सन्ध्या काल निर्णय है-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
उत्तमा सूर्यसहिता मध्यमा लुप्त भास्करा।, अधमा तारकोपेता सायं संध्या त्रिधा स्मृताः। संध्या ब्रह्मा की मानसिक पुत्री भी है। ब्रह्मा द्वारा ध्यान अवस्था में पैदा हुई (मस्तिष्क से) यह बाद में वशिष्ठ की पत्नी हुई अरुंधती, ऐसा भागवत-पुराण में है। धौम्य के अनुसार एक वर्ष की बालिका को संध्या कहते हैं।

४२३. द्विजवृन्दनिषेविता

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीन वर्णों में जन्मा व्यक्ति, जिसका संस्कार हुआ हो, उसे द्विज कहते हैं। द्विजन्मा द्विज होता है। संस्काराद् द्विज उच्यते। गायत्री की आराधना करने वालों को द्विज कहा जाता है।

गायत्री की आराधना से द्विजत्व मिलता है। माता के गर्भ से तो सभी सहज रूप में पैदा होते है। परन्तु ज्ञानी जन ज्ञान दृष्टि से ब्रह्मज्ञान प्राप्त करते हैं, अतः यह उनका दूसरा जन्म होता है, अतः वे द्विज कहलाते है। द्विज या ब्राह्मण कोई जाति विशेष न होकर एक स्थिति वाचक है। ऐसे लोगों के द्वारा सेवित भगवती को द्विजवृन्दनिषेविता कहा जाता है। वैसे पक्षियों को भी द्विज कहा जाता है। क्योंकि वह अंडे के रूप में पैदा होकर बाद में पक्षी का रूप लेते हैं। संध्यैका सर्वदा देवैर्द्विजैर्वन्द्या महात्मभिः।

४२४. तत्वासना

तत्वों पर है आसन जिसका। ये चौबीस तत्व हैं, जिन पर भगवती स्वयं विराजमान है। वह ही इन तत्वों का उद्गमस्थान है। उनको प्रकट करने वाली है। उसकी ही कृपा से हम शब्द बोलते हैं, स्पर्श करते हैं, मन डोलता है, गंध का आभास होता है, सौंदर्य दिखाती है, रसास्वादन कराती है आदि। कुछ विद्वान् ३६ तत्व मानते हैं, ऐसा योगपीठ के अनुसार है।

४२५. तत्

वह, बुद्धि की अवस्था, वह तुम्ही तो हो। उसकी शक्ति उसकी लीला आदि।

तत्त्वमयी रूप में तत्ववेत्ता भगवती को "तत् त्वं अयि'' कहते हैं कि वही तुम हो या जो कुछ संसार में है वह तुम ही हो। प्रायः इसे तीन नामों में विभक्त करते हैं।

४२६. त्वम्

तुम, एक भक्त की अपने ईश्वर के प्रति भावना कि तुमने दिया

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
है। त्वदीय भावना। सब तुम्हारी शक्ति है। ऐसी भावना भगवती का ही स्वरूप है।

४२७. अयि

ओह! प्रश्नवाचक या आश्चर्य वाचक शब्द है। वह इस नाम से भी सम्बोधित होकर सौभाग्य प्रदान करने वाली है।

४२८. पंचकोशान्तरस्थिता

श्रीचक्र पूजन में पंच-पंचिकाओं का पूजन है, अथवा पंच कोश-अन्नमय कोष, प्राणमय कोष, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय कोष में रहने वाली भगवती। ये मानव शरीर की रचना में क्रमश: अधिक सूक्ष्म हैं, अर्थात् अन्न के बिना जीवन रह नहीं सकता परन्तु प्राण ही न हो तो अन्न किस काम का अत: अन्न से प्राण अधिक महत्त्वपूर्ण हुआ परन्तु प्राण के लिये यह शरीर बहुत आवश्यक है क्योंकि इसी के सहारे ही वह खाना खाता है अन्य कार्य करता है परन्तु इससे भी महत्त्वपूर्ण है, मन बिना मन के शरीर किसी भी चाहत या सोचने की शक्ति से शून्य रहा तो वह पशुवत् हो गया, अत: मानव जीवन में मन का बड़ा स्थान है, परन्तु मन से भी बड़ा स्थान विज्ञान का है क्योंकि मन पर यदि ज्ञान का अंकुश न हो तो वह मनुष्य को ईर्ष्या-द्वेषी आदि आसुरी प्रवृतियों से युक्त बना देगा। ज्ञान से वह स्वयं को, विद्या को, अविद्या को समझता है, परन्तु सर्वोपरि है आनंद, जोकि जीवन का परम ध्येय है। आनंद शाश्वत है, पांचों कोषों के समन्वय से इस शाश्वत लक्ष्य से (आनन्द) प्राप्त किया जा सकता है।

श्रीयंत्र पूजा में पंच, कोष ज्ञानपर्व के अनुसार श्रीविद्या, परमज्योतिष, परा, निष्कलशाम्भवी तथा अजपामंत्र है।

४२९. नि:सीममहिमा

जिसकी महिमा की सीमा नहीं। परिधि नहीं। जिसकी हद नहीं। जिसकी बड़ाई की सीमा नहीं, अवधि नहीं। यह नाम भगवती के निरंतर ऐश्वर्य का द्योतक है।

४३०. नित्ययौवना

जो नित्य ही युवा, नवीन यौवना नजर आती हैं कभी वृद्ध नहीं होती। हमेशा एकरूप एक सी अवस्था में रहने वाली। वह भूत, वर्तमान, भविष्य तीनों कालों में यौवनावस्था में रहने वाली है। जैसे कि प्रकृति की सुन्दरता

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
कभी क़म नहीं होती, यह अलग बात है कि एक का स्थान दूसरा ले ले, परन्तु सौंदर्य सृष्टि में सदा बना रहता है।

४३१. मदशालिनी

जिसमें आनन्दमय हो उसे मदशालिनी कहते हैं। इसका अर्थ संसार का मद या मद्य नशा नहीं अपितु भगवती की दया का मद। वह आनन्द में इतनी मस्त है कि वह अपने भक्तों को बिना मांगे कई इच्छित पदार्थ दे डालने को उद्यत रहती हैं दया करने को उद्यत रहती हैं। उसका ध्यान है दयामदारुणापांगी। उस अनन्त यौवना में अदभुत सौंदर्य है तथा अनिर्वचनीय मादकता है।

४३२. मदघूर्णितरक्ताक्षी

मद अर्थात् अपने आत्मानन्द से जिसके नेत्र चंचल हो रहे हैं। आप स्वयं आनंदमयी हैं, सांसारिक मद्य तो तुच्छ और नाशवान है, परन्तु श्री राजराजेश्वरी आनन्दमद में है, वह अविनाशी है, अत: वह प्रसन्न रहती हैं और मदघूर्णित अथवा मद में अपने भक्तों को देखती हैं उन्हीं के प्रेमानन्द की लालिमा है, आपके नेत्रों में।

४३३. मदपाटलगंडभू:

प्रसन्नता से जिसके कपोल पाटल यानी गुलाब की तरह के हो रहे हैं। श्वेतरक्तस्तु पाटल:। श्वेत सफेद लाल मिलकर पाटल गुलाबी रंग बन जाता है। अथवा कस्तूरी से लिप्त हैं गण्डस्थल जिनके।

४३४. चन्दनद्रवदिग्धागी

सारे अंग में चन्दन सुगन्धित हो रहा है। चन्दन कैसा कि जिसमें केशर कस्तूरी आदि सुवासित हो रहे हैं।

४३५. चाम्पेयकुसुमप्रिया

चम्पा के पुष्प जिन्हें बहुत प्रिय हैं। यह पुष्प हरित पीत वर्ण का होता है।

४३६. कुशला

कुशल यानी चतुर। सृष्टि, स्थिति और संहार कार्य में कुशल प्रवीण। कुशल आरोग्य रहने वाली और भक्तों के आरोग्य करने में कुशल।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अथवा कुत्सित शल: चन्द्रमा अतः चन्द्रमा, भी जिसके सामने तुच्छ है। अथवा कौन कला ऐसी है जिसमें वह कुशल नहीं है। श्रीमद्भगवद् गीता में कहा है योगः कर्मसु कौशलम् अर्थात् कुशलतापूर्वक कार्य करने को योग कहते हैं।

४३७. कोमलाकारा

कोमल हैं अंग जिसके, सुकुमार हैं अवयव जिसके। हृदय कोमल है, अतः वह भक्तों को दुखी नहीं देख सकती। मां का हृदय अपनी सन्तान के प्रति बहुत ही कोमल होना स्वाभाविक है। कार्य करने में कुशल व्यक्ति यदि व्यवहार में विनम्र, मधुर हो, तो उसका महत्त्व बढ़ जाता है।

४३८. कुरुकुल्ला

कुरुकुल्ला नाम की देवी कोल्हापुर में है। कुरुकुल्ला का पूजन श्रीचक्र में भी होता है। यह विमर्श रूपिणी और जल की अधिष्ठात्री देवी है। ललितास्तव में लिखा है-"कुंकुम विलिगात्री कुरुकुल्लां, मनसि कुम्हि सततम्।" यह नाम भगवती की कर्मठता का द्योतक है, श्रीचक्र में विमर्शमय सरोवर की अधिष्ठात्री देवी है। प्रकाश विश्व का प्रतीक ओर विमर्श शक्ति का।

४३९. कुलेश्वरी

कुल की ईश्वरी अर्थात् माता जिनको पैदा करती है, वह सब उसकी संतान कुल या कुटुम्ब ही हैं। माता के शक्ति के उपासक कौल होते है, उस कुल की ईश्वरी अथवा कुलकुण्ड जहां कुण्डलिनी शक्ति का निवास है वह स्थान भगवती के कुल का होने के कारण वह कुलेश्वरी है। शंकराचार्य जी ने कहा है-"अवाप्य स्वां भूमिं भुजगनिभ मध्युष्ठवलयं-स्वमात्मानं कृत्वा स्वपिषि कुलकुण्डे कुहरिणी।"

४४०. कुलकुण्डालया

कुलकुण्ड है आलय जिसका। कुलकुण्ड मूलाधार में जो कर्णिका में विन्दु है, उसमें सोने वाली। जिसे योगी लोग उठाकर ब्रह्म में मिलाते हैं। यही जीव ब्रह्म का संगम है। जीव यमुना, ब्रह्म, गंगा जहां ये दोनों मिलते हैं, वहीं तीसरी सरस्वती है, यही त्रिवेणी है। नाड़ी जो तीन हैं वे तीन महानदी है। इडा, पिंगला, गंगा, यमुना हैं इनके बीच सरस्वती अत्यन्त सूक्ष्म है, जिसे सुषुम्ना कहते हैं। करोड़ों सूर्य के समान प्रकाश, करोड़ों चन्द्रमा के समान प्रकाश है। जैसे महाशक्ति राजराजेश्वरी सारे ब्रह्माण्ड को धारण करती है,

CC0. In Public Domain Vinikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
और सबकी खबर रखती है सबमें क्रीड़ा करती है, वैसे ही यह विषतन्तु तनीयसी है। श्री कामराज जी दीक्षित ने नीराजन में कहा है-कुलकुण्डे त्वं कुल करुषे देवि प्रस्वापं, स्वाधिष्ठाने मिहरायुत दीधित पापं नीला नाभौ कण्ठे। शशिभाहृत तापं-शशिभाहृत तापं, वर्षस्यामृत विन्दा वानन्दा वापम्। अर्थात् आप कुण्डलिनी के रूप में मूलाधार में चार दल कमल आधार चक्र में कुल कुण्ड में शयन करती है या स्वात्मानन्द में अपने आनन्द में मस्ती में शयन करती है। इस कुण्डलिनी रूप का यहां बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। वह यह लाल कमल में कर्णिका के मध्य अ से क पर्यन्त तथा क से थ पर्यन्त तथा य से क्ष पर्यन्त का त्रिकोण है, उसमें अनेक सूर्य समान तेज तथा अनेक चन्द्र समान शीतलता, लाल विन्दु पर विराजमान अनेकों बिजलियों के समान प्रकाशवान् बिसतन्तु तनीयसी रोम से भी पतली सर्पिणी के समान शरीर रूपी पिण्डाण्ड में भ्रमण करती रहती है, जैसे सात ही लोक हैं सात ही व्याहृति और सात ही स्वर हैं, सात समुद्र और सात तल हैं: सुतल, वितल, पातालादि। साढ़े तीन लपेटे में सर्पिणी के समान कोंडली बनाये यह नाड़ी सोती रहती है। उपासक इसे जगाते हैं और इसे छः चक्रों का भेदन करके ब्रह्मरन्ध्र में ले जाकर जो कि श्वेत सहस्रदल कमल है, उस पर रत्नों से युक्त सिंहासन पर सर्वशक्तिवान् सदाशिव परब्रह्म परमात्मा विराजमान हैं उनमें मिलकर गुरु के चरणों से जो अमृत झरता है, उसे वहां से लेकर अमृत पान करके साधक के अंग-अंग में उसे आप्लावित करती हुई पुनः कुल में आकर शयन करती है। कुण्डलिनी जगाने की क्रिया गुरु के द्वारा ही जानी जाती है। यह एक बहुत गहन और विस्तृत विषय है, यहां प्रसंगवश संक्षेप में दिया है। इस प्रक्रिया को करने से साधक अमर होने का अनुभव करता है, क्योंकि जीव ब्रह्म से मिल गया, यहीं ब्रह्म प्राप्ति का मार्ग है।

४४१. कौलमार्गतत्परसेविता

कुल परम्परा देवी की पूजा आराधना के बहुत से मार्ग हैं, उन मार्गों में जो तत्पर है उनके द्वारा सेवित। कौलमार्ग की व्याख्या बहुत विस्तृत है, अतः यहां इतना ही सूक्ष्म में दिया जाता है- समयाचार, कौलाचार और मिश्राचार, ये तीन आचार, जहां जैसी परम्परा है उसे कुलधर्म कहते हैं। तांत्रिक साधना दो प्रकार की है दक्षिणाचार और वामाचार दक्षिणाचार या समयाचार संयम-प्रधान है। सांसारिक वासना का एकदम त्याग और लौकिक भोग का सेवन निर्लिप्त भाव से किया जाये तो वामाचार कहते हैं, ये साधक संसार की सभी वस्तुओं को भगवती की देन समझ कर सेवन करते हैं। ये आचार बहुत खतरनाक भी हैं, क्योंकि साधक को अधःपतन की संभावना रहती है। इसके

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

विपरीत इस मार्ग से भगवती प्रसन्न भी तत्परता से होती है।

४४२. कुमारगणनाथाम्बा

स्कन्द यानी सोमकार्तिकेय और गणेश जी की माता श्री गणेश जी का पूजन उनकी शक्ति के साथ तो है ही किन्तु यह एक विशेष बात है कि गणेश का पूजन अपनी माता अम्बिका के साथ है। कर्मकाण्ड में गणेशाम्बिका का साथ-साथ पूजन का विधान है। जैसे गणानांत्वा गणपतिं हवामहे.........फिर इसी के साथ कर्मकांडी-विद्वान इस मंत्र को बोलते है।-अम्बे अम्बालिके..........। श्री महात्रिपुरसुन्दरी जगदम्बा है, जगत की मां हैं किन्तु गणेश स्वामिकार्तिकेय की विशेष रूप से जैसे प्रत्येक माता अपने भाई बहिनों या परिवारी पुत्रों को अपने पुत्रवत् समझती है, किन्तु जिनको उत्पन्न किया और पालन करती है, पुत्रों के बिना पूजा ग्रहण नहीं करती। कुमार सेनापति हैं, तो गणेश गणपति। दोनों की माता कुमार गणनाथाम्बा है।

४४३. तुष्टि

भगवती अनेक गुणों वाली है, उनके शिव जैसे पति, कुमार, गणनाथ जैसे पुत्रों को प्राप्त कर वह पूर्ण संतुष्ट है। संतुष्ट को यहां तुष्टि के लिये कहा है। भगवती संपूर्ण गुणों से युक्त होने के कारण सदा उल्लासित रहती है। आगे के नामों से यह स्पष्ट होता है, तुष्टिपुष्टि मति, धृति, शान्ति, स्वस्ति, कांति।

४४४. पुष्टि

देवदारु वने पुष्टिः। पुष्टि-पोषण करने वाली-शरीर को पुष्ट करने वाली। स्वयं तुष्ट रहती है, अतः शरीर और मन से पुष्ट। मन को पुष्ट करने वाली या भक्त की बात की पुष्टि करने वाली। वेद में मंत्र हैं (सुगन्धिं पुष्टि-वर्धनम्)। ब्रह्म प्राप्ति या ब्रह्म से संबंध करने को भी पुष्टि-की आवश्यकता होती है, जब उपासक पुष्टि रूपा शक्ति की किसी भी रूप में उपासना करता है, तब वह पुष्टिमार्गी होता है। श्री बल्लभाचार्य जी ने श्रीयमुना शक्ति की शरण ली, तब मार्ग पुष्ट हो गया और तभी से यह पुष्टि-मार्ग का वैष्णव मार्ग प्रशस्त और ब्रह्म से संबंधित हो गया। देवाराधन में पुष्टि परमावश्यक है। जब तक यह अपुष्ट है। यदि उपासना करता रहेगा तो आगे चलकर पुष्ट हो ही जायेगा। देवदारु वन की देवी पुष्टि है।

४४५. मति

मति बुद्धि रूपा है। मति तीन प्रकार की है एक सद्बुद्धि, सन्मति

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

दूसरी दुर्बुद्धि तीसरी सन्मति। चौथी है सुबुद्धि। मति मतीव शुभां ददासि-देव्य०-विभर्ति मानं मनुते विभागं मन्यतेऽ पि च। पुरुषो भोग सम्बद्धस्तेन चासौ मतिः स्मृति। पुराणान्ते स्मशानान्ते रत्यन्तेश्चैव या मतिः। सा मति सर्वदा चेत्स्यात् को न मुच्येत बन्धनात्। मन से मति बनती है। बुद्धि जैसी मति होगी, वैसा प्राणी का भविष्य बनेगा।

४४६. धृति

धृति पिण्डारक क्षेत्रे, पिंडारक में पूजे जाने वाली देवी। प्रसन्न मन से परमार्थ में लगाने से जीवन में सहजता और स्थिरता आती है, इस स्थिरता की देवी ही धृति है।

४४७. शान्ति

सब जीवों को शान्ति देवीं शान्ति प्रदान करती है। प्रसन्न रहते हुए धीर-गंभीर भावना से जीवन यापन करने वाले को शान्ति मिलती है, जो सहज ही प्राप्त वस्तु से सन्तुष्ट रहता है। शान्ति आन्तरिक होती है, बाहरी तो क्षणभंगुर होती है।

शान्ति तुल्यं तपो नास्ति, न संतोषात्परम धनम्,
विचार परमं ज्ञानं सत्संगम् परमम् सुखम्।

गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं "अशान्तश्चकुतः सुखम् अर्थात् अशान्त के लिये कहां है सुख। हमारे यहां मूलशांति, अरिष्टशांति आदि का विधान है।

४४८. स्वस्तिमती

क्षेम करने वाली। सबका कल्याण करने वाली अथवा सुन्दर है सत्ता जिसकी। स्व, अस्ति, मतिः अस्ति यानि 'है'' यानी स्व या मैं हूं ऐसे मत वाली। इसका भाव सबमें आत्म तत्त्व का होना है। आत्मा ही परमात्मा का प्रतिबिम्ब है। यक्ष भी स्वस्ति को अमरत्व का पर्याय बताते हैं। ब्रह्मोपनिषत् भी ब्रह्म है इस सच्चाई को ही स्वस्ति कहते हैं।

४४९. कान्ति

शोभायमान प्रकाश है जिनका। द्युतिमान् इच्छाशक्ति कमनीय वर्ण। शान्ति और स्वस्ति की भावना से ही मनुष्य में क्रांति आ सकती है। कान्ति से शरीर में ओज आता है, इससे आनंद की प्राप्ति होती हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

४५०. नन्दिनी

आनन्दित करने वाली। नंदिनी गौ को भी कहते हैं। अपने पयोधरों से सबको गोरस द्वारा तृप्त करने वाली गंगा को भी नन्दिनी कहते हैं। ब्रज में ननद को भी नंदिनी कहते हैं। इनको यशोदा-मेहर भी और ब्रजरानी भी कहते हैं। कामधेनु की पीढ़ी की ही एक गाय का नाम नंदिनी है।

४५१. विघ्ननाशिनी

विघ्नों का नाश करने वाली। भक्तों के किसी कार्य में विघ्न आये तो उसका नाश करने को उद्यत रहने वाली। विघ्नों का शमन कर सानन्द सब कार्य सम्पन्न करने वाली। कुमार और गणेश की माता अपने भक्तों पर उक्त पांच नामों से कृपा करती हैं- शांति, स्वस्तिमती, कान्ति, नंदिनी विघ्ननाशिनी। इन्हीं की कृपा से भक्तों को भगवती का सान्निध्य प्राप्त हो सकता है।

४५२. तेजोवती

तेज स्वरूप, जिसके तेज से सूर्य, विद्युत्, चन्द्रमा, अग्नि आदि प्रकाश पाते हैं। वह ज्योति स्वरूपा है तथा सबमें प्रकाश करती है। तेज ही सर्वत्र जय प्राप्त करता है, तथा तेजहीन कुछ नहीं कर सकता। तेजो यस्य विराजते स बलवान् स्थूलेषु कः प्रत्ययः। तेज भर्ग का नाम है, जिसकी गायत्री में उपासना की है, वह भर्गोदेवस्य० भर्ग तेज ही ध्यान करने योग्य है। जहां तेज होता है या प्रकाश होता है, वहां अंधकार नहीं रहता। इसी तरह जहां मनुष्य में तेज होता है वहां मानवीय दुर्गुण भाग जाते हैं यथा काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेषादि। तेज शारीरिक मानसिक तथा आध्यात्मिक रूप में होता है, मानवीय तेज। तीनों क्रमशः आते हैं। बाहरी शोभा के बाद मानसिक तेज से मनुष्य की विचार धारा बनती है और आध्यात्मिक तेज वह अलौकिक वस्तु है, जिससे अन्दर का आनंद अनुभव होता है। इन्हें ओज, तेज और द्युति भी कहते हैं।

४५३. त्रिनयना

तीन नेत्रों वाली। ये तीन नेत्र उपर्युक्त वर्णित तीन तेज ही त्रिनेत्र हैं। सूर्य, चन्द्र और अग्नि भी उसके त्रिनेत्र हैं। आंखों से प्राणीमात्र देखता है, उनमें ज्योति इन्हीं की होती है। प्राणियों में भी तीन नेत्र हैं, दो तो चर्म चक्षु तथा तीसरा ज्ञान चक्षु। जो चर्म चक्षु विहीन होते हैं, उनका भी ज्ञानचक्षु बहुत तेज होता है। वह अनुमान से ही सब कुछ देख लेता है। देवताओं के

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

दिव्य चक्षु होते हैं। जैसे गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं- दिव्यं ददामि ते चक्षु पश्य मे योगमीश्वरम्। इस तीसरे नेत्र ज्ञान के बिना वह ईश्वर को नहीं देख सकता। कई बार दो चर्म चक्षु तो होते हैं, परन्तु ज्ञान के बिना वह ईश्वर का सान्निध्य नहीं प्राप्त कर सकता। नयनों का एक अर्थ बढ़ना, चलना और चलाना भी है। कर्मज्ञान और भक्ति भी है।

४५४. लोलाक्षी कामरूपिणी

चंचल नेत्र वाली। जिनके नेत्रों में स्वाभाविक चंचलता है और वह अपने ही द्वारा रचित ब्रह्माण्डों को देख कर प्रसन्न हो रही है। आप स्वयं तो सत्य रूप हैं ही, परमतत्व रूप है, अपनी छाया माया रूप में अपने ही बनाये प्राणियों का खेल चंचल नेत्रों से देखती रहती हैं, कि स्वरचित सृष्टि में सूर्य समय पर उदय या अस्त होता है, वायु बहती है, जल जीवन संचार करता है। पृथ्वी प्राणियों को धारण करती है। तीन: प्रत्यक्ष, अनुमान तथा आगम नेत्रों से देखने योग्य। कुछ विद्वान "लोलाक्षी-कामरूपिणी" एक ही नाम मानते हैं। यह सम्मिलित नाम प्रकाश और प्रेम का परिचायक है। वाराह पुराण के अनुसार आठ माताएं हैं, जो काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह, मात्सर्य, द्वेष, असूया के द्वारा क्रमश: योगेश्वरी, माहेश्वरी, वैष्णवी, ब्रह्माणी, कल्याणी, यमदण्ड धारण करने वाली देवी तथा वाराही नाम से जानी जाती है। भगवती कामना पूर्ण करने वाली है। वह जिसकी ओर देखती है, उसकी कामना पूर्ण हो जाती है।

कामरूपिणी नाम उपरोक्त लोलाक्षी के साथ शामिल कर लिया है। यहां तात्पर्य इतना है कि सूर्य या चन्द्र अथवा अग्नि में तेज तो है, परन्तु इन तेजों के पीछे कुछ कामनाएं छिपी हुई हैं। सूर्य कर्मसाक्षी बन संसार को कार्य या सत्कार्य के लिये प्रेरित करता है। चन्द्र की किरण प्रेम और भक्ति के अमृत से नहलाती है। ज्वालामालिनी ज्ञान की ज्योति जलाकर संसार को जगमगाती है।

४५५. मालिनी

माला धारण करने वाली। अक्षरब्रह्म रूपी माला, ५१ वर्ण ही उनकी माला है। इसी से वह मालिनी कहलाती है। माला पहनने वाली स्त्री को भी मालिनी कहा जाता है। तो भगवती ने वर्णमालाओं को पहन रखा है। इनके स्वर उस माला के रंग-बिरंगे पुष्प हैं। इसका धागा सांस है। विश्व के मतानुसार चम्पा वन को मालिनी या गौरी या गंगा को भी कहते हैं। सात वर्ष की वय वाली कन्या को भी मालिनी कहते हैं। वामनपुराण के अनुसार मालिनी पार्वती की सहेली है और वह पार्वती के विवाह के समय भगवान शंकर

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

के, "हर" के चरण पकड़ लेती है, तब भगवान कहते हैं कि तुझे जो कुछ मांगना हो, मांग ले परन्तु पैर छोड़ दे, तब वह अपनी सहेली के लिये समृद्धि मांगती है, जो वर प्राप्त करने पर उसे छोड़ती है, भगवान कहते हैं कि यह तो मैंने पहले ही दे दिया है।

४५६. हंसिनी

हंस स्वरूपा। अजपाजप। वह जप बिना ही जप के चलता रहता है, किन्तु इसकी प्रक्रिया का ज्ञान होना आवश्यक है जो गुरु द्वारा ही प्राप्त होता है। सामान्य प्रकार से इसका रहस्य यह है कि मनुष्य इक्कीस हजार छः सौ श्वास चौबीस घण्टे में लेता है, जो वह बिना किसी कोशिश के लेता रहता है। इन सभी श्वासों से श्वासा-निवेदन चलता है। राक्ति सूक्त में "त्वं शान्तिः क्षान्ति-रेव च" कहा है कि हे परमेश्वरी आप ही शान्तिस्वरूपा हैं। यह शक्ति के रूप में और "शान्ताकारं भुजग शयनं" पुरुष रूप में । शिव और विष्णु हरिहरात्मक एक ही तत्व हैं। उनकी दी हुई श्वांस को उन्हीं के अर्पण कर श्वासानिवेदन हर कोई तो नहीं कर सकता। इसमें शरीर में षट्चक्र माने गये हैं, कहीं नौ चक्र भी मानते हैं, परन्तु उनमें से छः पर देवता निवास करते हैं। ये चक्र क्रमशः मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा, सहस्रार है। इन पर क्रमशः गणेश, ब्रह्म, विष्णु, शिव, जीवात्मा, परमात्मा तथा गुरुपादुका का निवास है, इनकी समर्पण श्वास संख्या क्रमशः छः सौ, फिर तीन बार छः हजार तत्पश्चात् तीन बार एक हजार है। संक्षेप में भावना यह है कि जब श्वास निकलती है तब श्वास की आवाज "सः" जैसे निकलती है तथा अन्दर आते समय "हं" की आवाज आती है, यह प्रक्रिया दिनरात चलती है। परन्तु इस सब को पुस्तक के आधार पर न करके गुरु के उपदेश से ही करना श्रेयस्कर है। "किं बहुना गुरुमुखादवगन्तव्यम्।" हंसनी-मानसरोवर की हंसिनी। मुनि मन रूपी मानसरोवर की हंसिनी। यह श्वास जो चलती है, वह एक माला के रूप में चलती है, इसे इडा, पिंगला और सुषुम्ना तीन नाड़ियां संचालित करती रहती हैं। इनका रास्ता भी बदलता रहता है। कभी सूर्यनाड़ी, तो कभी चन्द्रनाड़ी चलती है तथा इसे संचालित करने वाली या नियंत्रित करने वाली सुषुम्ना नाड़ी है। योगी लोग इन नाड़ियों को देख पाते हैं, यह हंसिनी है।

४५७. माता

सबको जन्म देने वाली। राम की माता, कृष्ण की माता, जन्म देने वाली माता, पालने वाली माता। षोडश मातृका। सप्त मातृका-गौरी, पद्मा, शची, मेधा आदि। "मंत्राणां मातृका भूता च, मातृका परमेश्वरी।" अथवा अ से

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

क्ष तक ५१ अक्षर वाली मातृका। माता मापक को भी कहते हैं, जो नापने का काम करती है, हमारे अंदर ज़ो श्वास चल रही है, उनके मापने का काम या गिनने का कार्य। हमारी जन्मदात्री हमें पालती पोषती है और जब तक श्वास चल रही होती है, हम आनंद में डूबे रहते हैं, वही माता अपनी ममता को तब समेट लेती है। जब उसके द्वारा ही नियंत्रित काल आता है, श्वास पूरी होती है और शरीर निस्तेज होकर पृथ्वी पर पड़ा रह जाता है। तब वह नवीन वस्त्र धारण कराती है।

४५८. मलयाचल-वासिनी

मलय पर्वत पर रहने वाली। इस पर्वत पर चन्दन के वृक्ष लगे रहते हैं। जिनकी वायु से भी भगवती प्रसन्न रहकर भक्तों को अभीष्ट प्रदान करती हैं। कुछ विद्वान मलय उस सहस्रार को बताते हैं, जहां से योगीजन अमृत की धारा को प्राप्त करते हैं। और उस रसास्वादन से आनन्दित होते रहते हैं।

४५९. सुमुखी

जिसका मुख सुन्दर है। अच्छे मुख वाली जैसा कि वेद में आता है। ब्रह्मविद इव ते सौम्य मुखमाभाति''। भगवती विदुषी हैं, जिससे उसका रूपलावण्य बढ़ा हुआ लगता है। श्रुति कहती है कि जिसको ज्ञान है उसका मुख चमकता है। उपनिषद कहते हैं कि 'हे प्रिय बालक, तुम्हारा मुख ब्रह्मवेत्ता ज्ञानियों की तरह चमक रहा है''। यह षोडशी मंत्र में ध्यान किये जाने वाली देवी भी है।

४६०. नलिनी

कमल रूपा। मुख कमल, हस्त कमल, चरण कमल। सब कुछ कमल जैसा ही है। कमलासना। अरविन्दाक्षी। सहस्रदल कमल। नल नामक राजा की रानी, जिसने भगवती की पूजा की, वह नलिनी। गंगा को भी कहते हैं।

४६१. सुभ्रू

जिसकी भौंह सुन्दर है। आंखों के ऊपर भौंह है, जो धनुष के आकार की है। विद्वान रुद्रग्रंथि और भौंह में संबंध मानते हैं।

४६२. शोभना

शोभायमान। शोभायुक्त। शुभ विचार, शरीर वाली। शुभ करने

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

वाली। सबकी शुभचिन्तक जैसी कि मां होती है। वह सभी शोभाओं से युक्त है तथा सबकी शोभा बढ़ाने वाली है ओर अशुभ को मिटाने वाली है, अत: वह शोभना हैं।

४६३. सुरनायिका

सुर यानी देवताओं की ईश्वरी, उनकी नायिका श्रेष्ठा माता। श्रुति कहती है कि वह देवताओं की परमशक्ति है। सुर का अर्थ ३३ से भी है अर्थात् तैतीस करोड़ देवताओं की नायिका। या सुर यानी स्वर वह सभी स्वरों की नायिकायें अथवा तीन नाड़ियों द्वारा निकले स्वरों को नेतृत्व प्रदान करने वाली।

४६४. कालकण्ठी

कालकण्ठ भगवान शिव का नाम है। भगवान ने हलाहल विषपान किया था अर्थात् जो काल है उसे कण्ठ में धारण करने से कालकण्ठ नीला हो गया, अत: उसे नीलकण्ठ भी कहते हैं, उसकी पत्नी कालकण्ठी है। "पश्यतां सर्व देवानां, पिशाचोरग-रक्षसां। धृतं कण्ठे विषं घोरं कालकण्ठस्ततोऽस्म्यहम्।।"

लिंग पुराण के अनुसार दारुक नागक दैत्य का नाश करने के लिये भगवान शंकर ने काली के साथ कपर्दिनी तथा कालकण्ठी को भी पैदा किया। देवी पुराण के अनुसार ६८ पवित्र स्थानों में एक कालंजर नामक पर्वत है, जिसमें कालकण्ठ की पूजा होती है।

४६५. कान्तिमती

कान्ति प्रकाश। एक विशेष सौन्दर्य जो, पतिव्रता स्त्रियों में होता है, उस तेज को कान्ति कहते हैं, तो भगवती कान्तिमती है। वह आकाश की कान्ति है रात्रि में अंधेरा छा जाता है, परन्तु उषा-काल में आकाश में कान्ति दिखाई देती है और अंधकार दूर होता चला जाता है।

४६६. क्षोभिणी

सृष्टि को संचालित करने वाली अथवा संक्षोभणचक्र की स्वामिनी।

प्रकृतिं पुरुषं चैव प्रविश्यात्मेच्छयाहरि:, क्षोभयाभास भगवान् सर्गकाले व्यपाश्रिता:।।

यह एक दार्शनिक शब्द है। विद्वानों का मत है कि वही संध्या की लालिमा है तथा वही प्रात: की लालिमा भी। अर्थात् संध्या की लालिमा क्षोभ

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

की परिचायक है। मूलाधार में चेतना का मूल विक्षोभ का काम करता है, इसमें हुआ विचलन, विक्षोभ और विवेक ही विशुद्ध चक्र में पहुंचकर शुद्ध होता है। तात्पर्य यह कि भगवती कृपा करके अपने भक्तों को क्षोभ प्रदान करती हैं, तब उनके क्षोभ को दूर भी करती है जिससे उनके जीवन में मंगल, आनंद का संचार होता है।

४६७. सूक्ष्मरूपिणी

दुर्ज्ञेय अर्थात् कठिनाई से जानने योग्य। सूक्ष्म होने से वह आंखों से दिखती नहीं। मात्र ज्ञान की दृष्टि से ही जिसके दर्शन हो सकते हैं।

सूक्ष्मा सूक्ष्मतरं नित्यम्। सूक्ष्म अन्तर्याग को भी कहते हैं। देवी के तीन रूप हैं सूक्ष्म, स्थूल और पर। यह सूक्ष्म रूप वाली है। यह भी दार्शनिक नाम है।

४६८. वज्रेश्वरी

वज्रेश्वरी देवी जालन्धर पीठ की अधिष्ठात्री देवी है। एवं महावज्रेश्वरी नित्या का पूजन श्रीचक्र में होता हैं तथा इन्द्र को देने वाली वज्रेश्वरी, जब इन्द्र जल में तप करने गया तो भगवती ने प्रसन्न होकर वज्र दिया। यह ब्रह्मपुराण में है। श्रीचक्र की हीरों की बारह दीवारों में से ग्यारहवीं दीवार के मध्य में वज्रमयी नामक नदी बहती है, जो सदा-सदा बहती रहती है।

४६९. वामदेवी

शिव की अर्द्धांगिनी उनके वाम अंग में विराजने वाली। वामदेव भगवान का नाम है, वेद में आता है। (वामदेवाय नमः, ज्येष्ठाय नमः, श्रेष्ठाय नमः।) वामदेव यानी शिव की वामा। वामाचार के साधकों की देवी।

४७०. वयोवस्थाविवर्जिता

वय यानी आयु। भगवती की आयु नहीं होती, वह हमेशा रहती है और मानवों की अवस्थाओं से रहित नित्ययौवना रहती है वह नित्य है। भगवती ने काल को अपने कण्ठ में धारण कर रखा है, अतः काल के नियम उन पर लागू नहीं होते।

४७१. सिद्धेश्वरी

सिद्धों की ईश्वरी स्वामिनी अथवा जो स्वयं सिद्ध है। बनारस में इसकी पूजा होती है। वह सभी सिद्धियों की अधिष्ठात्री देवी है, अतः वही

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सिद्धेश्वरी है।

४७२. सिद्धविद्या

श्री पंचदशाक्षरी विद्या सिद्धविद्या है। मंत्रों में तीन चीज देखी जाती हैं वह मंत्र जो- सिद्ध, साध्य और अरि अर्थात् स्वयं सिद्ध मंत्र, साध्य मंत्र सिद्ध करना होता है, या मंत्र का जाप साध्य के लिये प्रयुक्त होने वाला है तथा अरि जो अनुकूल वह मंत्र। भगवती की सिद्धविद्या यह उसका पंच-दशाक्षरी नाम है। इसमें किसी सावधानी के नियम लागू नहीं होते तथा कादिमत अनुसार इसके लिये ज्योतिषीय गणना आवश्यक नहीं, क्योंकि यह आन्तरिक और सार्वभौम है।

४७३. सिद्धमाता

जो कि स्वयं सिद्धमाता है, उसके सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है। माता तो स्वयं सिद्ध होती है अथवा सिद्धों की माता।

४७४. यशस्विनी

यश वाली। कीर्ति करने वाली। कीर्तिमती। सिद्धि के मार्ग में बढ़ने वाले साधक को कोई बाधा नहीं और उसके लिये कोई घाटा नहीं रहता। अत: वह यश भी प्राप्त करता है "न हि कल्याणकृत कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति।'' अर्थात् जो अच्छा कार्य करता है, उसके पुण्य का नाश नहीं होता, उसकी दुर्गति कभी नहीं होती।

४७५. विशुद्धिचक्रनिलया

विशुद्धि चक्र में है निवास जिसका। यह कण्ठ देश का अग्रभाग है, यहां सोलह दल का कमल है, इसको विशुद्धि चक्र कहते है। इसमें भगवती का किस स्वरूप में निवास है, उसका स्वरूप है कण्ठस्थाने विशुद्धो। पूर्वोल्लिखित "अण्डेतद्ब्रह्माण्डे'' को यहां पुन: ध्यान करें। ब्रह्माण्ड में पंचतत्व हैं, जिन्हें अण्ड में भी देखा जा सकता है। अर्थात् पृथ्वी, जल, पवन, अग्नि, आकाश, शरीर में भी हैं परन्तु योगी ही इन्हें ध्यान से देख सकते हैं। शब्द ब्रह्म को हर प्राणी अपने ही साथ लाता और ले जाता है, यह कण्ठ में है, वाणी से ही मनुष्य जिज्ञासा कर ज्ञानार्जन करता है ओर इससे ही ज्ञान देता भी है। विभिन्न चक्रों में भगवती के ६४ नामों से पूजा होती है। सात चक्रों में सात योगिनी रहती हैं ये डा, रा, ला, का, सा, हा, तथा या हैं डाकिनी विशुद्धि-चक्र में निवास करती हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

४७६. आरक्तवर्णा

पूर्ण लाल वर्ण आपकी शरीर की कान्ति। चारों और लाल ही लाल प्रकाशित हो रही हैं। सायं-प्रातः की सूर्य की कान्ति, योगियों के लिये ध्यानमग्न करने वाली होती है। यह राजसी रंग है श्वेत सात्विक, तथा श्याम तामस।

४७७. त्रिलोचना

तीन नेत्रों वाली। सूर्य, चन्द्र, अग्नि रूपी तीन नेत्रों से प्राणी-मात्र को देखती हैं। उसके नेत्रों की ही ज्योति प्राणी-मात्र को संसार में सब कुछ दिखाती है। इसकी आगे व्याख्या कर चुके हैं ज्ञान नेत्र जो दिव्यचक्षु है, उसके लिये भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा-दिव्यं ददाति ते चक्षु पश्य मे योगमैश्वरम्। अर्थात् मैं तुम्हें दिव्य चक्षु देता हूं जिससे तुम मेरा ऐश्वर्य देख सकोगे।

४७८. खट्वांगादि-प्रहरणा

खाट के सेरे पाटी पाए आदि भी जिसके आयुध हैं। अर्थात् साधु पुरुष को जब दुष्ट दुख देते हैं, सताते हैं, जब अत्याचार होता है, तब वह इन को ही शस्त्र बनाकर शत्रुओं का नाश करती है। आशय कि खाट के अंगों का प्रयोग करके पापियों का संहार करती है। अनेकानेक शस्त्र तो वह धारण करती है ही यथा हलमूसल, कैंची, खड्ग, शूल, पाश, अंकुश, सुदर्शन चक्र, गदा, धनुष-बाण आदि किसी शत्रु को तो मात्र हुंकार से ही भस्म करती है-हुंकारेणेव तं भस्म। मानव शरीर की खोपड़ी को भी खटवांग कहते हैं।

श्रीमद्भागवत में खट्वांग नामक एक साधक के मन में पलभर में परिवर्तन होकर आत्मज्ञान मिलता है। इस खट्वांग यानी मानव मस्तिष्क में देवता और दानव बनने की शक्ति का खतरा है। भगवती की कृपा से मनुष्य को महान् मस्तिष्क मिलता है।

उपर्युक्त खटवांग नामक राजा ने प्रजा को अनेक प्रकार से पीड़ित करके धन जुटाया था परन्तु तब उसे यह पता लगा कि कल उसकी मृत्यु हो जाएगी तो उसे कुछ नहीं सूझा उसे आत्मज्ञान प्राप्त हुआ तथा समस्त सम्पत्ति और राज्य ब्राह्मणों को दान देकर स्वर्ग प्राप्त किया। यह उदाहरण राजा परीक्षित को दिया गया कि जब एक पल में आत्मज्ञान प्राप्त हो सकता है तो तुम्हें तो सात दिन अभी जीना है।

४७९. वदनैक समन्विता

एक ही मुख वाली। वह सहस्रशीर्षा पुरुषरूपा भी है। विशुद्धिचक्र

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
में विराजमान देवी का एक ही मुख है। आकाश तत्त्व है, शब्द इसका लक्षण है।

४८०. पायसान्नप्रिया

पायस अन्न यानी दूध और अन्न यानी चावल। अर्थात् दूध की खीर जिसको प्रिय है। इसके सेवन से वाणी की सिद्धि होती है। इसका भोग लगता है।

४८१. त्वक्स्था

त्वचा (खाल) में निवास करने वाली। त्वचा आदि सात धातुओं में निवास करने का अर्थ है कि भगवती इस पिण्डाण्ड में रहती है। स्थूल, सूक्ष्म तथा पर तीन रूपों में परमेश्वरी का दर्शन है। मानव शरीर में त्वचा, रक्त, मांस आदि सात तत्व हैं। विशुद्धिचक्र में जो तत्त्व है, वह चर्म है। इस त्वचा में पशुता न होकर कोमलता और दिव्यता है। अमृत है, अत: सुरीली आवाज निकलती है।

४८२. पशुलोकभयंकरी

पशु अर्थात् अज्ञानियों को भय देने वाली। बिना तत्त्व ज्ञान के मनुष्य दो पैर का पशु ही है जैसा कि कहा है - 'येषां न विद्या न तपो न दानं, ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्म:, ते मृत्युलोके भुवि भारभूता मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति।'' श्रुति कहती है (ब्रह्मोपनिषत में) जो देवी को अलग समझता है, स्वयं को अलग वह वास्तविकता को नहीं जानता, अत: वह पशुतुल्य है। भय वहीं आता है, जहां द्वैतवाद आता है। अद्वैत में भय नहीं।

४८३. अमृतादिमहाशक्तिसंवृता

अमृतादि महाशक्ति जिनके चरणों में चारों तरफ विद्यमान हैं। अमृत आदि १६ शक्तियां हैं, ये हैं-शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, चित्त, धैर्य, स्मृति, नाम, बीज, आत्मा, "अमृत'' शरीर, काम, बुद्धि और अहंकार ये सब अमृताकर्षिणी योगिनी की सहयोगी अधिष्ठात्री देवी हैं। विशुद्धि चक्र सोलह दल का होता है। ये सब उन दलों पर विराजमान हैं। स्वच्छन्द तंत्र के अनुसार अनाहत चक्र के एक अंगुल ऊपर विशुद्धि चक्र सोलह दल का है, डाकिनी शक्ति इसकी शासक है तथा अमृता से अक्षर तक सोलह सहायिका देवी है। चन्द्रविम्ब इन के ऊपर है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

४८४. डाकिनीश्वरी

डाकिनी भगवती का नाम है-"डाकिनीं वीरवन्द्याम्''

विशुद्धि चक्र की देवी का नाम है, जैसा ऊपर उल्लेख किया है। इस प्रकार उपर्युक्त दो श्लोकों में विशुद्धि चक्र का वर्णन हुआ।

४८५. अनाहताब्जनिलया

हृदयस्थित अनाहत चक्र पर विराजमान देवी। ध्यान-हृत्पद्मे भानु पत्रे यहां बारह दल का कमल है। इस चक्र की योगिनी का नाम राकिनी है। दो मुख। श्याम वर्णा, त्रिनेत्र। कालरात्रि आदि उसकी सहयोगिनी हैं। यहां से अनाहद नाद निकलता है। यह दिल की धड़कन के रूप में है। पूरे शरीर की सिंचाई का केन्द्र रक्त और प्राण का केन्द्र यही है। रामायण का पंपासरोवर यही है।

४८६. श्यामाभा

यहां रुधिर-सरोवर में निवास करने वाली देवी श्यामाभा कहलाती है। १६ वर्ष की सुन्दर कन्या को श्यामा कहते है। श्याम है आभा जिसकी अथवा श्यामा षोडशी होने के कारण यह महाविद्या षोडशी है। इसके मंत्र के अक्षर भी सोलह हैं, जैसे कि पंचदशी के १५ हैं। बाला त्र्यक्षर और नवार्ण ९ अक्षर का। षोडशी महाशक्ति शाश्वत युवती रहकर विश्व को संचालित करती है।

४८७. वदनद्वया

दो मुख वाली। यह दो मुख हैं आकाश और वायु। हृदय में जो शून्य स्थान है वह दहराकाश है। आकाश का तत्त्व है शब्द और वायु का स्पर्श।

४८८. दंष्ट्रोज्ज्वला

यह भगवती का सौन्दर्यवाचक नाम है। भगवती के दांत उज्ज्वल और चमकीले हैं।

४८९. अक्षमालादिधरा

चार आयुध जिन्होंने धारण कर रखे हैं। रुद्राक्ष की माला, चक्र, शूल तथा गदा धारण करने वाली।

४९०. रुधिरसंस्थिता

रक्त खून में निवास करने वाली। यहां रक्त प्रचुर मात्रा में है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

४९१. कालरात्र्यादिशक्त्यौघवृता

कालरात्रि आदि शक्तियों से जो आच्छादित है। जैसे सम्राट् के चारों ओर उसके अंगरक्षक आदि आवृत हो जाते हैं, वैसे ही भगवती के अंग से पैदा हुई कालरात्रि से तमकारी तक १२ उसकी योगिनियां हैं, जो उसके बारह दल पर विराजमान हैं।

काल समय का भी नाम है वही माहेश्वरी महेश्वर की शक्ति भी है। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है "कालोऽस्मि लोक क्षय कृत्प्रवृद्धो" अर्थात् काल को भी खाने वाली शक्ति महाशक्ति है। महाकाली अथवा वही पुरुष है काल रूप में और महाकाली के रूप में त्रिपुरसुन्दरी भी वही है।

४९२. स्निग्धौदनप्रिया

घी और भात जिसको प्रिय लगता है। स्निग्ध यानी चिकनाई वह है घी और इसी का प्रतिनिधि माखन भी हो सकता है। दूसरा यह कि स्निग्ध से स्नेह बना है, तो स्नेह यानी प्रेम से बना भोजन, जिसको प्रिय है। प्रेम से ही प्रेम मिलता है और हृदय प्रेमआलय है।

४९३. महावीरेन्द्रवरदा

महावीर इन्द्र, प्रह्लाद, ध्रुव, हनुमान ये महावीरेन्द्र माने जाते हैं, इनको वर देने वाली। वीर का आशय शक्तिशाली से ही नहीं, अपितु ब्रह्मज्ञानी, पदवाला या सम्पदा वाले को भी वीर कहते हैं। भगवती उन्हें वर प्रदान करने वाली हैं।

४९४. राकिण्यम्बास्वरूपिणी

यहां राकिनी नाम की योगिनी है। जिस तरह विशुद्धि चक्र में डाकिनी अधिष्ठात्री है, इस अनाहतचक्र में राकिनी अधिष्ठात्री देवी है।

४९५. मणिपूराब्जनिलया

नाभि में दशदल का कमल है। उसमें रहने वाली देवी। यहां मणिपूर चक्र है, यहां की अधिष्ठात्री देवी लाकिनी देवी है, तीन मुख वाली है, ये मुख- आकाश, वायु और अग्नि हैं। इनके क्रमशः शब्द, स्पर्श और रूप लक्षण हैं।

४९६. वदनत्रयसंयुता

तीन मुख वाली। जैसा ऊपर लिखा है। तीसरा मुख, जिसका

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
लक्षण है रूप और रूप का लक्षण है अग्नि। यहां जठराग्नि है। इससे भूख लगती है यहां आग और पानी दोनों है। दस कमल हैं। रक्तवर्णा।

४९७. वज्रादिकायुधोपेता

यहां भगवती जिन आयुधों को धारण किये हुए है- वे चार वज्र आदि हैं। यह आयुध वज्रतुल्य हैं। जिसके वज्राघात से लोग भयभीत हो जाते हैं।

४९८. डामर्याधिभिरावृता

देवी के चारों ओर डामरी आदि जैसी दस शक्तियां सहचरी हैं, जो यहां दस दल कमल पर निवास करती हैं। डामरी से फट्कारिणी। डमरू ध्वनि वाली दस सहचरी है।

४९९. रक्तवर्णा

लाल रंग है जिनका। विशुद्धि चक्र का वर्ण भी लाल है, परन्तु यहां गहरा लाल रक्त वर्ण है।

५००. मांसनिष्ठा

मांस धातु है, यहां। इसमें रहने वाली देवी। जिस प्रकार विशुद्धिचक्र में त्वचा के रूप में और अनाहत में रक्त के रूप में है, यहां भगवती मांसरूप में बैठी रहती है और वह भी निष्ठा के साथ।

यहां छठी कला जो कि रुचि नामक है, इन ५०० नामों के साथ पूर्ण होती है।

५०१. गुडान्न प्रीत मानसा

गुड से बने पदार्थों को प्रीति (प्रेम) से खाने वाली। ये गुलगुला या पूआ आदि है। गुड से बने पकवानों को जो अत्यन्त चाव से खाती है।

५०२. समस्तभक्तसुखदा

सब भक्तों को मुक्त-हस्त से सुख प्रदान करने वाली।

५०३. लाकिन्यम्बा स्वरूपिणी

यहां निवास करने वाली माता का नाम या योगिनी का नाम लाकिनी है। यह "ल" कार वाली देवी लालित्य और लावण्यमय है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

५०४. स्वाधिष्ठानाम्बुजगता

स्वाधिष्ठान कमल पर विराजमान। कंठ में विशुद्धि, हृदय में अनाहत, नाभि में मणिपूर के नीचे छह कमलों पर विराजमान देवी। यहां की योगिनी का नाम काकिनी है, यह चतुर्मुख है, त्रिनेत्र है, पीला रंग है।

५०५. चतुर्वक्त्रमनोहरा

चार मुख वाली। मन को हरने वाली, सुन्दरता धारण किये हुए हैं। इन चार मुखों में आकाश, हवा, आग और पानी है, जिन तत्वों से शब्द, स्पर्श, रूप, रस विषयों का निष्पादन होता है।

५०६. शूलाद्यायुधसम्पन्ना

शूल आदि आयुधों को धारण करने वाली। आयुधों के सहारे अपनी पीठ की रक्षा करती है।

५०७. पीतवर्णा

पीला जिनके अंग का रंग है जो उसकी नैसर्गिक शोभा को बढा रहा है।

५०८. अतिगर्विता

अत्यन्त सौन्दर्य का गर्व है जिसको। यह नाम मनःस्थिति का द्योतक है। भगवती अपने सौंदर्य को निखरा हुआ पाकर भीतर ही भीतर पुलकित होकर गर्वित लग रही है।

५०९. मेदोनिष्ठा

मेद अर्थात् चर्बी में रहने वाली। सौंदर्य शरीर के मासंल होने पर निर्भर करता है। भगवती का शरीर भी मांसल है।

५१०. मधुप्रीता

शहद को प्रीतिपूर्वक पीने वाली। भगवती के शरीर का यह लावण्य मधु के सेवन से ही बढ़ा है। वेद में भी मधु का वर्णन है। कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि मधु से तात्पर्य मद्य से है। भगवती को मद किसका, वह तो दयामदारुणापांगा है, उसके यदि मद है तो वह तो दया का मद है। सप्तशती में भगवती कहती हैं- "गर्ज गर्ज क्षणं मूढ मधु यावत्पिवाम्यहम् ,मया त्वयि

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवता:''महिषासुर से कहती है कि जब तक मैं मधु पीती हूँ तब तक तू और गरज।

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

५११. बन्धिन्यादिसमन्विता

बन्धिनी आदि छः देवियों से घिरी हुई। यह बन्धिनी से लम्बोष्ठी तक छः देवी उसकी सहचरी हैं, जो छः दलों पर विराजमान हैं।

५१२. दध्यन्नासक्तहृदया

दही भात या (श्रीखण्ड) भात बहुत प्रिय है जिनको। इससे पेट में ठंडक पहुंचती है।

५१३. काकिनीरूपधारिणी

काकिनी नाम की योगिनी का निवास स्थान है यहां। "क'' कार ब्रह्म वाचक है, यहां से सृष्टि की उत्पत्ति मानी जाती है।

५१४. मूलाधाराम्बुजारूढा

मूलाधार में जो कमल है उसमें रहने वाली। मूलाधार चक्र स्वाधिष्ठान के नीचे है, इसमें चार दल का कमल है। साकिनी यहां की योगिनी है, यह पांच मुख वाली देवी है। योगियों के लिये यही साधना का आधार है। यहां कुंडलिनी-शक्ति प्रगाढ निद्रा में सोती रहती है, योगी इसे ही जागृत करते हैं। यही शक्ति है।

५१५. पंचवक्त्रा

पांच मुख वाली। पूर्वोल्लिखित चार तत्त्वों के अतिरिक्त प्रधान तत्त्व पृथ्वी भी यहां है, पृथ्वी का मुख्य लक्षण है गंध।

५१६. अस्थिसंस्थिता

अस्थि (हड्डी) में रहने वाली। जिस प्रकार पूर्व के चक्रों में चर्म या खाल, रुधिर या रक्त, मांस, मेद के रूप में भगवती विराजमान है, यहां हड्डी के रूप में हैं।

५१७. अंकुशादिप्रहरणा

अंकुशादि शस्त्रों से प्रहार करने वाली। अंकुश प्रधान शस्त्र

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

है। इसी के प्रहार से कुंडलिनी शक्ति जागृत होती है तथा ऊपर के सभी चक्रों
Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
में होती हुई, आज्ञाचक्र और सहस्रार में पहुँचकर अमृत-वर्षा करके वापस मूलाधार में आ जाती है।

५१८. वरदादिनिषेविता

वरदा से सरस्वती तक चार देवी, यहां देवी की सेवा करती रहती हैं। वरदा शक्ति साधकों का इच्छित वरदान प्रदान करने को सदा उद्यत रहती हैं।

५१९. मुद्गौदनासक्तचित्ता

मूंग-भात का भोजन जिनको प्रिय है। अथवा खिचड़ी का भोजन जिसे प्रिय है। यहां की साकिनी नामक योगिनी को यह सात्विक भोजन पसंद है।

५२०. साकिन्यम्बास्वरूपिणी

साकिनी नाम की माता है यहां। यहां माता का स्वरूप साकिनी का है।

५२१. आज्ञाचक्राब्जनिलया

आज्ञाचक्र में निलय है जिसका। यह चक्र ललाट में भौंहों के मध्य में है। सहस्रनाम में इसे छठा चक्र कहते हैं। क्योंकि इसकी चर्चा भी छठे स्थान में की है। वैसे तो इन्हें यदि नीचे से गिना जाये तब भी इस चक्र का नम्बर छठे स्थान पर आता है परन्तु यहां इसका अभिप्राय यह बताया गया है कि विशुद्धि से मूलाधार का जो स्थूल रूप है, वही आज्ञा चक्र से ब्रह्मरन्ध्र तक है सूक्ष्म रूप में। कंठ में आकाश तत्त्व तथा मुख में वायु, अग्नि तथा जल तत्त्व हैं, नासिका में पृथ्वी तत्त्व है। इन पांच तत्वों से परे इस दो दल के कमल में आज्ञाचक्र का बहुत महत्त्व है।

५२२. शुक्लवर्णा

यहां भगवती गौरवर्णा है। यहां की शक्ति हंसिनी है, जो हंस के समान श्वेत वर्ण वाली है, वस्तुतः यही उसका प्रकृत रूप है। अन्य वर्णित चक्रों में रहने वाली देवी जैसा स्थान होता है वैसे ही रंग में रंगी है। योगिनी

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

को हाकिनी भी कहते हैं।
Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

५२३. षडानना

यहां भगवती छह मुख वाली है। पूर्वोल्लिखित पंच तत्त्व पंचतन्मात्रा हैं। इन के छह मुखों में छह विकार काम, क्रोध आदि यहीं से पैदा होते हैं तथा परमार्जित भी यहीं होते हैं। मूलाधार से विशुद्धि तक मुखों की संख्या क्रमशः एक-एक बढ़ती जाती है तथा आज्ञाचक्र में जाकर यह संख्या छह बन जाती है। सभी विकारों का परिमार्जन भी यहीं आज्ञा चक्र में होता है। अतः साधना का सक्रिय सदन भी यही है। षडानन शिवपुत्र कार्तिकेय का भी है जो अद्वितीय सेनानायक भी है और विजय दिलाने वाले हैं।

५२४. मज्जासंस्था

शरीर में जो मज्जा नामक धातु है, उसमें रहने वाली शक्ति। जिस प्रकार त्वचा, रक्त, मांस, मेद और अस्थि शरीर की धातु है। इसका संचार मस्तक में है। यह आज्ञाचक्र का स्थान है, यहीं हमें किसी भी चीज के अच्छे या बुरे होने का ज्ञान प्राप्त होता है।

५२५. हंसवतीमुख्यशक्तिसमन्विता

हंसवती आदि मुख्य शक्तियों से आवृत या घिरी हुई। आज्ञाचक्र में बैठी देवी हंसवती और क्षमावती देवियों से सेवित हो रही है। हंसवती विवेक प्रदान करती हुई श्वास चला रही है। अर्थात् उच्छ्वास और निश्वास करा रही है और क्षमावती संयम और संतुलन प्रेरणा दे रही हैं।

५२६. हरिद्रान्नैकरसिका

हल्दी से बने अन्न जैसे कढ़ी आदि को प्रसन्नता पूर्वक सेवन करती है, इससे मनुष्य निरोग होता है और मन निर्मल होता है।

५२७. हाकिनी रूप धारिणी

आज्ञाचक्र में निवास करने वाली देवी का नाम हाकिनी है। यहां भगवती दो दल के कमल पर बैठी हैं इन दलों को स और ह की संज्ञा दी गई है। मनुष्य के उच्छ्वास और निःश्वास से क्रमशः ये ही हैं और सः की प्रक्रिया जीवन पर्यन्त चलती रहती है। इस सोऽहं की संगीत-लहरी का आनंद लेने वाले नर के लिये सहस्रार का मार्ग खुलता है। इसीलिये कहा गया है नर तन बहुत भाग्य से मिलता है, इसे वृथा ही नहीं गंवा देना चाहिये, क्योंकि सहस्रार

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

के या ब्रह्मरन्ध्र के पास ले जाने वाला मार्ग यदि है तो इसी नर-तन में ही है, किसी और में नहीं और न ही किसी में समझने की शक्ति है। सहस्रार तक पहुंचने को ही ब्रह्मसंबंध कहा जाता है।
Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

५२८. सहस्रदलपद्मस्था

हजार दल के कमल पर रहने वाली। अभी तक जिन चक्रों की चर्चा की वे छह चक्र कुल मिलाकर ४, ६, १०, १२, १६, २ दल वाले कमल थे, जिनका कुल योग ५० है दूसरे अर्थ में ये वर्णमाला के पचास अक्षर हैं "शब्द-ब्रह्म" को सिद्ध करने के लिये। यहां भगवती भगवान के साथ सहस्रदल में विराजती है। यहां याकिनी नामक योगिनी का निवास है। समस्त शक्तियों से घिरी हुई या संचित तथा कुल ५१ वर्णों वाली जो अभी तक ५० ही थे यहां वर्ण ५१ हो जाते हैं। यहां भगवती सभी शस्त्रों से सुसज्जित है। सभी रंग, सभी भोज्य पदार्थ लिये भगवान के सान्निध्य का आनंद प्राप्त कर रही है। कुछ विद्वान इस कमल के दलों की अनंत संख्या बताते हैं। इसका विस्तृत वर्णन आगे के नामों में आयेगा।

५२९. सर्ववर्णोपशोभिता

सब प्रकार के रंगों से शोभायमान या अकार से क्षकार तक सभी ५१ वर्णों से शोभित। पूर्व-वर्णित पचास अक्षरों को सीधे ओर उल्टे गिनने से १०० होते हैं तथा सर्व वर्ण उप शोभिता यहां उप को वररुचि सिद्धान्त के अनुसार प को १ तथा उ को शून्य मानते हैं अर्थात् १० यानी सब वर्ण कुल सौ को दस-दस दलों पर विराजमान करने से संख्या हजार होती है। यह योगिनीन्यास क्रम में भी आता है जहां प्रत्येक वर्ण की दस आवृत्ति होती हैं।

५३०. सर्वायुधधरा

सब प्रकार के आयुधों को, शस्त्रास्त्रों को धारण करने वाली। रुद्राध्याय में भगवती सहस्रभुजी है और सभी भुजाओं में आयुध धारण किये हुए है।

५३१. शुक्लसंस्थिता

शुक्ल यानी श्वेत वर्ण शुक्र का होता है। जिस प्रकार छह तत्त्वों का वर्णन किया, जिनमें त्वचा, मांस, मेद, आदि हैं, वैसे ही शुक्र यानी वीर्य की अधिष्ठात्री देवी यह याकिनी। पंचमकार और भा० उत्तर पुराण में संभोग के समय ध्यान को शुक्र की संज्ञा दी है। यह शुक्र सबसे सशक्त और तेजवान्
CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
है। वस्तुत: यही मनुष्य बल्कि जीवजन्तु में शक्ति का मात्र स्त्रोत है और रस का रहस्य भी यही है। मूलाधार में कामवासना के वशीभूत यही शुक्ल या शुक्र संसार में नीचे आकर संतानोत्पत्ति करता है और मनुष्य का तेज कम करता है, और इसी मूलाधार में काम-वासना को काबू कर इसको ऊपर रखने या शरीर में बनाये रखने से मनुष्य तेजवान् बनता है। इस शुक्ल में ही देवी का निवास है।

५३२. सर्वतोमुखी

सभी दिशाओं में जिसका मुख हो। कहा है-सर्वतोक्षिशिरो मुखम्। वह उसका विराट स्वरूप है। भगवद्गीता में भी इसका उल्लेख हैं

५३३. सर्वौदनप्रीतचित्ता

सब प्रकार के ओदन यानी चावल का प्रसन्नता से भोग लगाने वाली। जैसे सूपोदन (दाल-भात), दही-भात, दूध-भात, घी-भात, मूंग-भात, झोर-भात आदि सभी प्रकार के अन्नों को आरोगने वाली।

ब्रह्मरन्ध्र में रहने वाली योगिनी देवी याकिनी को "या'' कहने मात्र से संबोधित किया जा सकता है। दुर्गासप्तशती में पंचम अध्याय में "यादेवीसर्वभूतेषु'' संबोधित किया है कि देवी ही सब भूतों में चेतना, श्रद्धा, निद्रा, लक्ष्मी, लज्जा, विद्या आदि रूपों में संस्थित है।

"मुंड व्योमस्थ पद्मे दशशत-दल के कर्णिका चंद्र संस्था,
रेतो निष्ठां समस्तायुध कलित करां सर्वतो वक्त्र पद्मां।
अादि क्षांतार्ण शक्ति प्रकट परिवृतां सर्व वर्णां भवानीं,
सर्वान्नासक्त-चित्तां परशिवरसिकां याकिनीं भावयाम:।।''

५३४. याकिन्यम्बा-स्वरूपिणी

याकिनी के स्वरूप में ललिता परमेश्वरी ही विराजमान है। सभी सात चक्रों में अलग-अलग नाम और रूप गुणों से जानी जाने वाली यह ललिता ही है।

५३५. स्वाहा

देवताओं को हवि अर्थात् द्रव्य स्वाहाकार से पहुँचता है। वह भगवती स्वाहा-रूपिणी है। हवन में प्रत्येक मंत्र के पश्चात् इसी के उच्चारण से अर्पित द्रव्य देवी देवता ग्रहण करते हैं। हवन में होता अर्थात् हवन करने वाला आत्मा है, हवि (हवन सामग्री) भी आत्मा है, मंत्र के रूप में देवता

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
भी आत्मा है और इस आत्मा द्वारा आत्मा को आत्म-निवेदन ही हवन है। यह भेद इसका शाब्दिक अर्थ भी स्पष्ट करता है कि स्व यानी अपना, जहां अपने पराये का भेद दूर हो जाता है, उस स्व का निवेदन स्वाहा है।

५३६. स्वधा

पितृगणों को कव्य वहन करने वाली स्वधा-रूपिणी दुर्गा है। यह पितरों के लिये आत्म समर्पण, अनन्य भावना से आराधना का द्योतक शब्द है। सर्वत्र "स्व" की भावना से ही साधक और साध्य की दूरी मिट जाती है।

५३७. अमति

बुद्धि स्वरूपिणी। व्यावसायात्मिक बुद्धि या "अमति" या अविद्या। जब सब कुछ स्व ही है तो तादात्म्य स्थापित हो गया अब साधक किसके बारे में सोचे, सब कुछ तो अभिन्न है, यह अवस्था अमति की है। यही समाधि अवस्था है।

५३८. मेधा

स्मरणशक्ति। यानी याददाश्त। मेधा भगवती का ही नाम है। सप्तशती में "मेधासि देवि विदिताऽ खिलशास्त्रसारा" कहा है। पद्मपुराण के अनुसार कश्मीर-देश की देवी का नाम मेधा है।

५३९. श्रुति

जो सुनी जाती है उसे श्रुति कहते हैं। श्रुति वेद को भी कहते हैं। मनीषियों के मन कानों से सुनते हैं।

५४०. स्मृति

स्मरण शक्ति यानी याददाश्त। जो सुनने के बाद याद रह जाती है। कोई भी आराधक इनके बिना आराधना नहीं कर पाता है। श्रुति और स्मृति ही आराधना का मार्ग प्रशस्त करती है। ऋषियों ने जीवन के जो विधान बनाये हैं मनुस्मृति, पराशर स्मृति आदि में भी शक्ति का विवेचन है।

५४१. अनुत्तमा

जिससे कोई अन्य उत्तम नहीं है। उसे अनुत्तमा कहा है। वास्तव

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
में भगवती से उत्तम हो भी कौन सकता है। "नत्वत्समश्चाभ्यधिकश्चदृश्यते। इतिश्रुति। "आराधक'' पद को प्राप्त करना ही भक्त की उच्चतम पदवी है, इसलिये भगवती जिसकी आराधना की जाती है, वह अनुत्तमा है।

५४२. पुण्यकीर्ति

जिनके कीर्तन से पुण्य प्राप्त होता है अथवा जो पुण्यवान् पुरुष है, वे ही भगवती का कीर्तन कर सकते हैं। कथमकृतपुण्यः प्रभवति - सौंदर्यलहरी। बिना पूर्व पुण्य के प्रणाम या स्तुति-कीर्तन नहीं किया जा सकता। यही उसकी पवित्र कीर्ति है। यह पवित्र-कीर्ति जन्मजन्मान्तर के पुण्य से ही प्राप्त होती है।

५४३. पुण्यलभ्या

पुण्य का सबसे बड़ा लाभ। पुण्य से ही जो प्राप्त होने वाली है। जिसकी उपासना से लाभ प्राप्त होता है। गीता में -यं लब्ध्वाचापरंलाभं लिखा है।

५४४. पुण्यश्रवणकीर्तना

जिस के श्रवण और कीर्तन से पुण्य मिलता है। यह पुण्य कैसे प्राप्त हो, उसका तरीका बताया है रामायण में नवधाभक्ति द्वारा, जिसमें ये दो ही प्रथम हैं। श्रीमद्भागवत में भी ऐसा उल्लेख है। प्रथम सुनत जे कथा प्रसंगा...।

५४५. पुलोमजार्चिता

पुलोमजा जो कि इन्द्राणी है, उससे पूजित। जिस समय इन्द्र को वृत्रासुर मारने की हत्या दोष लगा जिससे वह कमल नाल में छिप गया, तब राजा नहुष स्वर्ग के इन्द्रासन पर जाकर बैठ गया। तब शची पुलोमजा ने राजराजेश्वरी श्री महाशक्ति का तप किया। जिससे इन्द्राणी अपने पति सुरपति इन्द्र को प्राप्त कर सकी। श्री माता सबकी कामनापूर्ण करने वाली है। तब राजा नहुष का स्वर्ग से पतन हुआ और इन्द्र अपने इन्द्रासन पर प्रतिष्ठित हुए।

५४६. बन्धमोचनी

भगवती की कृपा कटाक्ष से उसके दिव्य मंत्रों द्वारा अर्चन से कोई भी व्यक्ति बन्धन-मुक्त हो सकता है। इसका आश्रय लेने मात्र से कारागार से मुक्ति मिल सकती है। हरिवंश पुराण में जब श्री कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध को वाणासुर ने कारागार में बंदी बना लिया, तब उसने भगवती दुर्गा की

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
प्रार्थना की, जिसकी कृपा से वे बन्धनमुक्त हुए। अनिरुद्ध की उक्ति है:

"अवेक्षस्व विशालाक्षी पादौ ते शरणं ब्रजे

सर्वेषामेव बन्धानां मोक्षणं कर्तुमर्हसि।'' अर्थात् हे विशालाक्षी तेरे चरणों की शरण हूं, तू सब प्रकार के बंधनों से छुड़ाने में समर्थ है। इस प्रकार शरणागत को न केवल भगवती ने मुक्त किया बल्कि वाणासुर की सुंदर पुत्री ऊषा से उसका विवाह भी हुआ "एवं स्तुता तदा देवी दुर्गा दुर्गपराक्रमा। न केवल यह बल्कि वह संसार के बंधन से भी मुक्त करने वाली है।

५४७. बर्बरालका

भगवती के सुंदर घुंघराले ऊंचे नीचे केश हैं, जिनके अलक कुन्तल बाल शिर पर शोभा पा रहे हैं। उनकी लटें जितनी जटिल हैं उतनी मृदुल हैं। यह बंधुरालका: भी बोला जाता है।

५४८. विमर्शरूपिणी

विमर्श प्रकाश है यानी अन्धकार को दूर करके रोशनी में लाने वाली। विद्या ही प्रकाश है। प्रकाश-शक्ति। जो स्वाभाविक प्रकाश है। स्फुरण हो रहा है यही ब्रह्म का स्वरूप है उसकी शक्ति है।

"वाचकेन विमर्शेन विना किम्वा प्रकाश्यते।

वाच्येनापि प्रकाशेन विना किंवा विमृश्यते।'' अर्थात् जैसे सूर्य और सूर्य की किरणें एक दूसरे से पृथक् नहीं हैं इसी प्रकार विमर्श-प्रकाश का संबंध है।

इसका शब्दिक अर्थ संभाषण या विचार करना भी है। मातृकाविवेक के अुनसार बिना विचार के ज्ञान/प्रकाश नहीं आ सकता तथा बिना संभाषण के विचार के लिए प्रेरणा नहीं मिल सकती है।

५४९. विद्या

भगवती परा-विद्या और अपरा विद्या दोनों हैं। इसके अतिरिक्त अनेक विद्याएं हैं, जैसे भगवती के अनेक रूप नाम और गुण हैं, वैसे ही विद्या के अनेक रूप नाम गुण हैं, अर्थात् वह विद्या स्वरूपिणी है । सबसे उत्तम कला विद्या है।

५५०. वियदादिजगत्प्रसू:

आकाश, तेज जगत को उत्पन्न करने वाली। जैसा श्रुति वाक्य है आत्मन: आकाश: सम्भूत:। तैत्तिरीय उपनिषद के अनुसार आत्मा से तेज

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पैदा होता है।

५५१. सर्वव्याधिप्रशमनी

सब प्रकार की व्याधियों का नाश करने वाली। आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक तीनों प्रकार की व्याधि, तथा भव-व्याधि, मानसिक व्याधि, शरीरिक व्याधि को दूर करने वाली।

५५२. सर्वमृत्युनिवारिणी

सब प्रकार की मृत्यु का निवारण करने वाली। अल्पमृत्यु, कालमृत्यु, अकालमृत्यु। जहां वह सब रोगों का निवारण करती है। वह मृत्यु का भी निवारण करती हैं, जीवन के रहते हुए भी जो मृत्यु होती है, वह है ज्ञान का न होना, आत्मज्ञान बिना मृत्यु। आत्मज्ञान अभूत तत्त्व है। भगवती आत्मज्ञान देती है, जिसके पश्चात साधक सब प्रकार की मृत्युओं से परे हो जाता है। मृत्यु उसे छू नहीं सकती, वह निर्भय हो जाता है। "उसको जान लेने" के बाद मृत्यु-भय जाता रहता है, ऐसा कठोपनिषद् कहता है।

५५३. अग्रगण्या

सर्वोपरि विराजमान,, सर्वप्रथम गिनी जाने वाली। सर्वप्रथम पूज्य। यह भगवती की सामाजिक स्थिति का द्योतक नाम है।

गणों में सर्वप्रथम या गणों की नायिका। वह संसार की मूलाधार है। संसार में रूप, नाम, कर्म, विचार उसी से पैदा हुए हैं। हम जो कुछ करते हैं, वह शक्ति हमारे साथ सदैव एकाकार होकर रहती है। अत: हम तो उसके बारे में नहीं सोच पाते परन्तु वह अपने विशिष्ट गुणों की वजह से हमसे कर्म कराती रहती है। अन्न से आनंद तक मानव चेतना के पांच कोश, मूलाधार आदिक, यौगिक संरचना, पंचतत्व, पंच कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय, पंचलक्षण और चार अन्त:करण भगवती सबके ऊपर विराजमान रहती हैं।

५५४. अचिन्त्य रूपा

जिसका रूप चिन्तन करने पर भी नहीं जाना जा सकता। क्योंकि हम अपने शब्दों में उसे परिभाषित नहीं कर सकते। वेदों ने भी "नेति-नेति" यह भी नहीं-यह भी नहीं कह कर माना है। उस विराट् रूप का मनन कर सकते हैं, जब हम उसी के सहारे ही चिंतन कर सकते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

मानव शरीर कर्म प्रधान है, अतः सदैव सक्रिय रहता है, उन सभी मानव-चेष्टाओं के पीछे एक विश्वास रहता है, यह विश्वास अग्रगण्या भगवती की ही कृपा से है। वह हमारी प्रत्येक चेष्टा के साथ सक्रिय रहती है, हम बैठते-उठते हैं, वह हमारे साथ बैठती-उठती है, जब हम सोचते हैं, वह हमारे साथ उस विषय-विशेष पर सोचती है। तब हमें यह बिल्कुल ख्याल नहीं होता कि कोई शक्ति हमारे साथ बैठ भी रही है सोच भी रही है या किसी प्रकार से हमारे ही साथ छाया की तरह सक्रिय है हमारे चिंतन के साथ एकाकार है। अतः वह हमारे चिंतन से परे है। यह भी एक गूढ़ अर्थ वाला नाम हैं

५५५. कलिकल्मष-नाशिनी

कलियुग के पापों का नाश करने वाली। यहां कलियुग के ही पापों का नाश करने का कारण यह है कि युगों के अंत में कलियुग में पाप अधिकाधिक होते हैं, अन्य युगों में इतने नहीं। युग में मनुष्य की प्रवृत्ति पाप में अधिक होती है। अन्य किसी में इतनी शक्ति नहीं कि कलियुग के पापों का शमन कर पाये। कूर्म पुराण में है कि जिस प्रकार पानी में आग बुझाने की शक्ति है, सूर्य में अंधेरा दूर करने की शक्ति है, इसी प्रकार भगवती के नामोच्चारण में कलियुग के पापों का नाश करने की शक्ति है । ऐसा ही ब्रह्मपुराण में भी उल्लेख है कि भगवती के चरणों का ध्यान करने से ज्ञात-अज्ञात पाप दूर हो जाते हैं। यह कलियुग के कीचड़ में भक्त को कमल की तरह उससे ऊपर रखने की शक्ति देने वाली है। इस युग में मानव मन कोशिशों के बावजूद आत्मा को नहीं देख पाता, जिससे उसे आनंद प्राप्त हो, वह तो वासनाओं में लिप्त होना चाहता है। भगवती के चरणों का ध्यान ही मन को कमल की तरह बनाने की शक्ति है, वही आत्मानन्द की राह पर लाने में समर्थ है।

५५६. कात्यायनी

कात्यायन मुनि ने आराधना की थी, जिनकी आराध्य देवी कात्यायनी है। इसकी गायत्री भी है "कात्यायनाय विद्महे कन्यकुमारि धीमहि, तन्नो दुर्गीः प्रचोदयात्। कुछ लोग कत नामक ऋषि की पुत्री होने के कारण इनका नाम कात्यायनी बताते हैं। "कत'' एक फली या बीज का नाम भी है, जिसको पानी में डालने से पानी साफ हो जाता है। "कं जलं शुद्धं तनोति'' जल को शुद्ध बनाने वाला तत्त्व है। ब्रह्माण्ड पुराण में "कृतस्याखिलपापस्य ज्ञानतोऽज्ञानतोऽपिवा प्रायश्चित्तं परं प्रोक्तं पराशक्तेः पदस्मृतिः।''

अर्थात् जाने अनजाने पापों का प्रायश्चित पराशक्ति के पदों के

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
स्मरण से ही हो जाता है। कालिकापुराण में ओड्याण पीठ की अधिष्ठात्री देवी कात्यायनी है।

५५७. कालहंत्री

काल को हरने वाली या काल को भी मारने वाली या काल की भी काल। मनुष्य भी कई प्रकार से काल का हरण करता है। भोगी भोग में लिप्त रहकर समय नष्ट करता है तथा योगी योग साधना में समय व्यतीत करता है, वह स्वयं को भूल कर भगवती के चरणों का ध्यान करता है। लेकिन एक को काल खा जाता है, दूसरे को वह विकास की ओर अग्रसर कर देता है।

५५८. कमलाक्षनिषेविता

कमलाक्ष विष्णु द्वारा सेवित। विष्णु के नयन कमल जैसे हैं, उनकी आराध्या पद्मपुराण के अनुसार भगवान विष्णु सदैव इन्द्रनील की शोभा से विराजमान देवी को पूजते रहते हैं। अतः उन भगवती जैसे ही उनके नेत्र हैं, जैसे भगवती के कमल नेत्र हैं "कमलाक्षी" इससे ही वे विष्णुत्व को प्राप्त हुए। जो भगवती के भक्त हैं, उनके नेत्र कमल की तरह शुद्ध हो जाते हैं।

५५९. ताम्बूलपूरितमुखी

ताम्बूल पान से पूर्ण है मुख जिनका। पहले भी कर्पूर वीटिकामोद कहा है।भगवती के ओंठ ही लाल हैं उन पर ताम्बूल की लाली न केवल उसकी शोभा बढ़ाती है बल्कि उसकी सुगन्ध मन को मोहने वाली हैं यह पान प्रेम और आनंद और अनुराग के रूप में है, उनके सौरभ को बिखेर रहा है।

५६०. दाडिमी-कुसुमप्रभा

अनार के फल के समान आभा है, प्रकाश है जिसका। भगवती के मुख की लालिमा न केवल पान से लालिमा फैला रही है, बल्कि दाडिम नामक पुष्प अनार का होता है, जिसमें फल नहीं लगते उसका फूल हमेशा लाल रहता है और बहुत सुन्दर होता है।

५६१. मृगाक्षी

मृगनयनी। हिरण की सी आंखों वाली। मृगलोचनी। मृग की आंखें चंचल और भोली होती हैं। मृग यानी खोजना अर्थात् भगवती के चंचल

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

नयन शुद्ध हृदय को तलाश करती रहती है। वह तो शुद्ध पवित्र स्थान पर ही बैठने वाली है और हृदय ही देव का स्थान होता है। अत: वह चंचल नयनों से निर्मल मन को तलाश करती है।

Digitized by Sarayu Trust Foundation, Delhi and eGangotri

५६२. मोहिनी

मन को अपनी और खींचने वाली। अथवा मन को चुराने वाली। वह मनुष्य अत्यन्त भाग्यवान् है, जिसका मन भगवती अपनी ओर आकर्षित कर लेती हैं, फिर उस महा-भाग्यवान् को सारा विश्व तिनके के समान प्रतीत होती है, जैसे गोपियों ने सारा संसार सुख त्याग कर एक श्री कृष्ण को ही सर्वस्व समझा। जिन गोपियों की चरण-रज उद्धव जी चाहते हैं।

मोहिनी देवी का स्वरूप स्वयं विष्णु ने तब धारण किया, जब समुद्र-मंथन से अमृत पैदा हुआ था। उसको प्राप्त करने के लिये देव और असुर दोनों लड़ने लगे, तो मोहिनी ने देवताओं को अमृत पिलाया और असुरों को अपने स्वरूप से ही मोहित किये रखा।

मानव मात्र को वह मोहती है। मानव मन में अनेक लिप्साएं होती हैं, वह उनसे बंधा रहता है या उनसे सम्मोहित रहता है। उनका मन निर्मल नहीं होता परन्तु मां उनको मोहिनी निद्रा में सुलाती रहती है तथा जब कभी वह जागता है तब वह उन्हें आनन्द का अनुभव कराती है।

५६३. मुख्या

सबमें प्रमुख प्रधान। सबसे प्रथम "आदौ प्रादुरभूच्छक्तिर्बह्मणो ध्यान-योगत:। प्रकृतिर्नाम साख्याता देवानामिष्ट सिद्धिदा।''

सबकी आदि देवी है जिनसे सारी सृष्टि उत्पन्न हुई है। दूसरे, मुख से जो उत्पन्न हो, उसे भी मुख्या कहा गया है, मुख में सरस्वती की निवास है।

५६४. मृडानी

मृड यानी सुख। भगवती सुख देने वाली है। शिव का नाम भी मृड है, आगे नाम आया है। "मृडप्रिया'' शंकर की अर्द्धांगिनी।

"जनसुखकृतेसत्वोद्रिक्तौमृडायनम:।''

५६५. मित्ररूपिणी

प्राणी मात्र की मित्र है सबकी हितैषिणी है, हित-चिंतन वही करती

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
है। सच्ची मित्र है, वही सुख और दुख दोनों में साथ रहती है।

दूसरे, सूर्य जो बारहवां होता है, माह में उसे मित्र कहा जाता है। वह भी संसार पर समान रूप से अपनी किरणें फैलाता है। जिसको उसकी किरणों के प्रकाश की आवश्यकता होती है। वह उसको उपयोग में लेता है लेकिन वह सबका समान रूप से मित्र है।

५६६. नित्यतृप्ता

हमेशा तृप्त रहने वाली। सदा सन्तुष्ट रहने वाली। जिसे स्वयं की कोई इच्छा न हो, वह ही तृप्त रह सकता है। कामना वाला मनुष्य तो अतृप्त रहता है।

५६७. भक्तनिधि

भक्तों की निधि अर्थात् खजाना। भगवती अपने भक्तों को इच्छित वस्तु तुरन्त प्रदान कर देती है। भक्त जो चाहे वही नहीं मिलता अपितु फलमपिचवाञ्छासमधिकम्-अर्थात् जो कुछ भक्त चाहता है, उससे कहीं अधिक प्रदान करने वाली। उसका अक्षय भंडार है। और भक्त चाहता भी क्या है उसे सांसारिक धन-ऐश्वर्य से क्या लेना, वह तो भगवती के अधिकाधिक सांन्निध्य की लालसा रखता है तो भगवती उसकी यह इच्छा भी पूर्ण करती है।

५६८. नियन्त्री

सब पर नियन्त्रण करने वाली। नियामक अनन्त ब्रह्माण्डों को नियमित करने वाली। सब ब्रह्माण्ड जिसके नियन्त्रण में है। वह न केवल बृहत रूप में नियंत्रण करने वाली है, बल्कि सूक्ष्म रूप में अपने भक्त जनों की निगरानी रखती है, ताकि उसका भक्त सांसारिक प्रबल वासनाओं में लिप्त होने से बचा रहता है।

५६९. निखिलेश्वरी

अखिल विश्व की ईश्वरी। जितने ब्रह्माण्ड हैं, उन सब की ईश्वरी। किसी भी लोक का कोई देव, दानव, किन्नर, नर स्वतंत्र नहीं है, वह सब किसी न किसी रूप में अपने ईश्वर के अधीन हैं तथा सब ईश्वरों की ईश्वरी है भगवती जगदम्बा।

५७०. मैत्र्यादिवासनालभ्या

मैत्री-करुणा-मुदिता और उपेक्षा ये ही चार वासनाएं हैं। सुख

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

में मैत्री, दुख में करुणा, धर्मों में मुदिता तथा पापी में उपेक्षा, इन चारों भावों से भगवती लभ्या है अर्थात् सुलभ है। इस प्रकार के उल्लेख योगसूत्र में भी है जिसके अनुसार ध्यान की सर्वोत्तम स्थिति समाधि अवस्था है और चित्त की प्रसन्नता के लिये इन चार वासनाओं पर विजय पा लेना परम आवश्यक है।

साधारणतया मनुष्य तो दूसरों के सुख में ईर्ष्या करता है, जबकि यहां का सिद्धान्त मैत्री है, दुख में आज का मित्र भी दूर भागता दीखता है, जबकि उस वक्त करुणा की आवश्यकता है, पुण्यात्मा के धर्मकार्य को देखकर उसका अभिनन्दन तो कर भी सकता है परन्तु पापी के पापकर्म के लिये क्षमा कर देना उस कर्म की उपेक्षा कर देना ये काम वही कर सकता है, जिसंका हृदय निर्मल हो, ऐसा असम्भव तो नहीं, परन्तु अत्यन्त कठिन है।

५७१. महाप्रलयसाक्षिणी

महाप्रलय में कोई नहीं रहता। इसमें तो भगवान और भगवती ही रहते हैं, वे ही इसके साक्षी हैं। प्रलय तो कई प्रकार की होती है, जैसे- नदी या समुद्र में तूफान से प्रलय होती है, जन-धन हानि होती है। भूकम्प से अनेक बार ऐसे प्रलय आए हैं। परन्तु महाप्रलय पूर्ण प्रलय है, इसमें संसार में कुछ भी नहीं शेष नहीं रहता-

कल्योपसंहरण कल्पित ताण्डवस्य, देवस्यखण्डपरशोः परभैरवस्य।
पाशांकुशैक्षव शरासन पुष्पबाणैः, सा साक्षिणी विजयते तव मूर्तिरिका।।

भगवान शिव जब ताण्डव नृत्य करते हैं। तब ब्रह्मा, विष्णु भी समाप्त हो जाते हैं, कहते हैं, सतयुग से आधा द्वापर, उससे आधा त्रेता, त्रेता से आधा समय होता है कलियुग का। चारों युग समाप्त होने पर ऐसे ७२ चतुर्यगों के बाद एक मन्वन्तर १४ मन्वन्तर के बाद ब्रह्मा का एक दिन समाप्त होता है। ब्रह्मा के १०० वर्ष समाप्त होने पर दूसरा ब्रह्मा आता है। तो ब्रह्मा और विष्णु सबकी उम्र है। देवताओं की तो गणना ही क्या, परन्तु शाश्वत शिव-शक्ति ही सभी युगों में अनेकों ब्रह्मा-विष्णु पैदा करते हैं, और उनका विलय करते हैं। उस महाताण्डव की साक्षिणी भगवती ही है।

५७२. पराशक्ति

सबसे उत्तम है शक्ति जिसकी। सबसे पर, यह वेदान्तिक संज्ञा है। यह पराशक्ति है, इसके लिये शक्ति की पूजा होती है। परमंत्र भी पराशक्ति है, शरीर में पांच धातु शक्ति तत्व हैं: ये हैं रक्त, मांस, मेदा, त्वचा और अस्थि

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

तथा चार धातु शिवात्मक हैं-मज्जा, शुक्र-प्राण और जीव। इन नौ धातुओं से जो परे है, वह है पराशक्ति, जिसकी प्रेरणा से हम और हमारी ये धातुएं स्वकर्म करती रहती हैं। वह संसार की सभी शक्तियों की मूल है और शक्तिमान् को शक्ति का बोध भी वही कराती है। शिव को उसकी शक्ति का ज्ञान भी उसकी प्रेरणा से होता है।

५७३. परानिष्ठा

ज्ञान की और श्रद्धा की अन्तिम सीमा। परा यानी सबसे श्रेष्ठ प्रेम। सर्व कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते। सब कर्मों की समाप्ति ज्ञान पर होती हैं। ज्ञान की अग्नि में सब कर्म भस्म हो जाते हैं। फिर कर्म बाकी नहीं रहता। न जन्म लेना पड़ेगा उसके भोगने को।

शक्ति एक है, उसकी किरणें अनेक हैं, ऐसी निष्ठा ही परानिष्ठा है।

५७४. प्रज्ञान घनरूपिणी

यह ऋतम्भरा प्रज्ञा है। प्रकृष्ट ज्ञान सबसे बड़ा ज्ञान, जिसमें अविद्या का लेश न हो वही प्रज्ञान घन। यह प्रज्ञान सहस्र दल कमल से गुरुचरणों से अमृतप्लावन के साथ झरता है। इस प्रकार साधक पूर्ण ज्ञान प्राप्त करता है। यह ज्ञान गुरु के चरणों से आप्लावित करता है।

प्र : उत्तम, ज्ञान : मष्तिष्कीय ज्ञान न होकर आन्तरिक बुद्धि, घन : अविद्या से दूर। प्रज्ञावान प्रज्ञा में एकाकार हो जाता है, तब उसे आत्मा की अनुभूति से आनंद प्राप्त होता है। यह एक अवस्था है, जब सुषुप्तावस्था में साधक अपने स्थूल, सूक्ष्म और कारण-शरीरों को एक कर अपने प्रज्ञान को घनीभूत करके आनंद-अवस्था में पहुंच जाता है।

५७५. माध्वीपानालसा

प्रेम ही मीठा मधु है। शहद से भी बढ़कर भक्तों के प्रेम में मग्न रहना ही प्रेम रस पान करना है यह मधुपर्क ही माध्वी पान करना है। यह मां ललिता का मधुमय नाम है। ऋग्वेद में संसार की विशाल प्रकृति में रस की मधुर कल्पना की है, यह प्रकृति, नदी, वनस्पति, जलराशि, मेघ, सूर्य-चन्द्र-किरण, आकाश, गाय आदि है। इस आशय से भगवती अनेकों प्रकार से जीवमात्र को मधुपान कराती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

५७६. मत्ता

मस्त अर्थात् प्रसन्न चित्त रहने वाली। भगवती को कभी चिन्ता, दुख, शोक संसार की गंध नहीं जा सकती, अतः हमेशा स्वयं में मस्त रहती है। अथवा जो भक्त भगवती के सान्निध्य के मधु का एक बार पान करले, वह सदैव के लिये मस्त हो जाता है।

५७७. मातृका-वर्णरूपिणी

अ से क्ष पर्यन्त जो पचास अक्षर हैं, इन्हीं को मातृका कहा गया है। श्रीचक्र मातृका रूप है, मातृकामय है। मातृका शब्द का मंत्रों के सन्दर्भ में प्रयुक्त होता है। नाद ब्रह्म, शब्दब्रह्म है।

वरिवस्या-रहस्य में मातृका का अर्थ है: मा:सीमाएं, तृ : लांघना तथा का : चमक। अर्थात् जो मातृका अक्षरों को जानता है, वह ब्रह्म को जानता है, उसने संसार को परे तक लांघकर देख लिया है, वह चमकता है।

कुछ लोगों ने अक्षरों के रंगों की कल्पना की है यथा सनत्कुमार कहते हैं- अ कार आदि वर्ण (१६) धुंए के रंग के, क से ठ तक सिंदूरी, ड से फ १० गोरे, बकार ५ अक्षर गहरे लाल रंग के, लकार आदि ५ सुनहरे, ह से क्ष तक विद्युत के समान चमकीले है।

कुछ तंत्रों में इन्हें अलग प्रकार से विश्लेषित किया है: १६ मात्राएं 'अकारादि'' स्फटिक की तरह के, क से म २५ मूंगा की तरह के, य से ह तक ९ पीले तथा शेष क्ष तक गहरे लाल रंग के हैं।

कुछ सभी अक्षरों को सफेद बताते हैं तथा मातृकाविवेक के अनुसार "अ'' देवी शब्द है लाल है तथा सभी चीजों का नियंत्रण करने वाला है।

प्रस्तर तीन प्रकार के हैं मेरु, कैलास तथा भू-प्रस्तर। मेरु १६ नित्या को बताता है कैलास ५१ अक्षरों यानी मातृकाओं को तथा भू ८ वशिनीयों को।

जिस प्रकार परम शिव के दो रूप हैं शिव व शक्ति। तो मातृकाओं के भी दो रूप है स्वर १६ तथा व्यंजन ४५ वे क्रमशः शक्ति व शिव के रूप के हैं।

५७८. महाकैलासनिलया

सदाशिव सदैव महाकैलाश में निवास करते हैं। वहीं श्री राजराजेश्वरी निवास करती हैं। दूसरे श्री चक्र को भी महाकैलाश माना गया है। तीसरे सहस्रार जहां शिव रूप गुरु निवास करते हैं। कल्याणकारी भावनाओं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
का मन या हृदय ही कैलाश है। आध्यात्मिक साधना का परम ध्येय सहस्रार के लक्ष्य को प्राप्त करना ही होता है।

५७९. मृणालमृदुदोर्लता

कमल की नाल के अंदर जो तन्तु होते हैं वे अत्यन्त सूक्ष्म और कोमल होते हैं। ऐसे कोमल हैं, दोनों हस्त कमल भगवती के। अर्थात् वे अत्यन्त सुकुमार हैं।

५८०. महनीया

महानता का द्योतक है। जिस प्रकार महादेव सब देवों में पूज्य हैं, वैसे ही भगवती राजराजेश्वरी भी महनीया है। वेद वाक्य है-महतोमहीयान्''। प्रत्येक अक्षर एक मंत्र बन सकता है, आवश्यकता है भावना की।

५८१. दयामूर्ति

सब पर दया करना तो आपका स्वभाव है। मां के बराबर कौन दया कर सकता है। पेट में से ही बच्चे का पोषण करना प्रारंभ कर जीवनभर जैसा उसका खाद्य है, जैसा वस्त्र वह चाहता है सबको देती है और ज्यादा क्या, शत्रुओं पर भी दया करती है। वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम्।

५८२. महासाम्राज्यशालिनी

जितने साम्राज्य हैं, उन सब पर शासन करने वाली। वह सांसारिक साम्राज्य तो तुच्छ हैं, जिसमें न सत्य है, न दया, न करुणा, न कृपा। भगवती के साम्राज्य में जीवमात्र के लिये करुणा है। वह सबकी इच्छा पूर्ण करती है। अत: वह महासाम्राज्यशालिनी है।

५८३. आत्मविद्या

उपासकों को आत्मा का ज्ञान या विद्या देने वाली। आत्मा का ज्ञान ही परमात्मा का ज्ञान है। उपासना के ग्रन्थों को गुरु द्वारा अध्ययन कराना आत्मविद्या है। इसका अर्थ आठ अक्षरों के मंत्र से भी है। इसका एक अर्थ आत्मज्ञान भी है, जिससे स्वयं को जाना जाये। वस्तुत: मनुष्य को सांसारिक भौतिक सुख मानसिक विद्या के पास ही नहीं जाने देते, यह तो माता की कृपा ही है कि व्यक्ति आध्यात्मिक साधना की ओर जाये।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

५८४. महाविद्या

पराविद्या सबसे परे विद्या है। और सब विद्या हैं, भगवती महाविद्या है। नवदुर्गा महाविद्या कहलाती है। यह सबकी आत्मा है, इसलिये महाविद्या है। यह सब दुखों को हरण करती है, अत: महाविद्या है। वनदुर्गा मंत्र को महाविद्या कहते हैं। मंत्र के अक्षर जहां से निकलते हैं उस स्थानों में उनके देवताओं का निवास होता है। मंत्र का उच्चारण न करके मनन करना चाहिए। मंत्र के अक्षर ही साक्षात् देवरूप होते हैं।

५८५. श्रीविद्या

पंचदशी विद्या श्रीविद्या है। श्री शोभा का नाम है, लक्ष्मी का नाम है "श्रयति हरिमितिश्रीः, परं ब्रह्म परमात्मा की शक्ति श्रीः '' यह आत्म-विद्या है। आत्मज्ञान से व्यक्ति महान बनता है। आत्म विद्या के छः, महा विद्या के ९ तथा श्रीविद्या के १५ अक्षर हैं। मंत्रों में श्री गायत्री मंत्र तथा विद्याओं में श्रीविद्या प्रमुख है।

५८६. कामसेविता

काम देव द्वारा सेवित। सौन्दर्य-लहरी में आचार्य शंकर ने कहा है-"जगदिदमनंगो विजयते'' भगवती के वरदान से ही कामदेव जगत को जीत रहा है। शरीर रहित होकर भी वह सब कुछ अनुभव कर रहा है। यह सब माता की ही कृपा है। काम देव द्वारा उनकी उपासना की गई थी। काम की पूर्ति करने वाली। भक्त की कामनाएं पूर्ण करने वाली। अरुणोपनिषद् में मन्मथ जो लक्ष्मी का पुत्र है, का सुंदर वर्ण है- वह अंधा है, परन्तु मां को सबसे निकट और आत्मीयता से देखा जा रहा है। उसके उंगलियां नहीं हैं, परन्तु वह सबको स्पर्श कर पा रहा है, वह भगवती की पूजा करता है, सबसे श्रेष्ठ ऋषि है दूसरों के मन का मंथन करता रहता है परन्तु स्वयं न शरीरधारी है, न मन रखता है। इस वर्णन से काम कला का आशय उसकी गहनता स्पष्ट होती है। श्री माता धर्मसम्मत कार्य करने से ही प्रसन्न हो जाती है। काम शब्द को तीन भागों में बांट कर ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी बताया गया है। इनके द्वारा सेवित। कांचीपुरम् में श्रीकामाक्षी मंदिर है यह दक्षिण काशी है।

५८७. श्रीषोडशाक्षरीविद्या

सोलह अक्षरों की विद्या से ये ही षोडशी है। यह शांभवी गुप्त है। अधिकारी उसे प्राप्त कर लेता है। गौडपाद सूत्र के अनुसार २८ अक्षर हैं षोडशी मंत्र में।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

५८८. त्रिकूटा

श्री विद्या पंचदशी के तीन कूट हैं। तीन नाड़ी-'इडा, पिंगला व सुषुम्णा हैं। तीन देव ब्रह्मा, विष्णु व महेश। देवी, महाकाली, महासरस्वती, महालक्ष्मी। त्रिकूट: शक्तिकूट, कामकूट व वाग्भवकूट। मानव शरीर में भी तीन कूट हैं, मूलाधार, मध्य और वाग्भव। श्री कामाक्षी को वाग्भव कूट की निवासिनी माना जाता है। यहां शंकराचार्य द्वारा प्रतिष्ठित पीठ कामकोटि-पीठ कही जाती है। वासना को उपासना का रूप देना ही श्रीविद्या की सिद्धि का द्योतक माना है।

५८९. कामकोटिका

शिव और शक्ति का मिलना ही काम-कोटि है। कोटि काम करोड़ों काम भी उस रस को नहीं पा सकते हैं।

५९०. कटाक्ष किंकरीभूत कमलाकोटिसेविता

कटाक्ष अर्थात् दृष्टि, जिसको वह देख लेती है, वह स्वयं कमला लक्ष्मी बन जाती है। उस राजराजेश्वरी की दासी किंकरी-नौकरानी बन जाती है। तात्पर्य कि जिन पर उनकी कृपा हो जाये, वह उनकी दासी और कमला बन जाती है। ऐसी करोड़ों कमलाओं से सेवित। भगवती की कृपा-कटाक्ष से लौकिक और पारलौकिक वैभव मिलता है।

५९१. शिर:स्थिता

शिर पर स्थित रहने वाली। ब्रह्म सर्वशक्तिमान है, इसलिये ब्रह्मरन्ध्र में निवास करने वाली। दूसरे गुरु भी ब्रह्म है। गुरुरूप में भगवती राजराजेश्वरी सिर पर रहती है।

५९२. चन्द्रनिभा

चन्द्रमा की सी दिखने वाली। भगवती मानव रूपी पिंड में कहां-कहां और किस-किस स्वरूप से विराजमान है, यह एक विशद वर्णन है परन्तु मुख्य रूप में तीन केन्द्र माने गये हैं- सिर, भ्रूमध्य या ललाट और हृदय। सिर में चन्द्रमा की कांति लिये विद्यमान है। ब्रह्मरन्ध्र के नीचे यह स्थान चन्द्रमा की आभा लिये हुए है।

५९३. भालस्था

भाल या ललाट में रहने वाली या जिसका निवास भ्रूमध्य है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यह आज्ञाचक्र है। इसमें इन्द्र-धनुषी रंग बिखरे हैं। जहां ऊपर चन्द्रनिभा पंचदशी मूलविद्या का तिहाई हिस्सा है उक्त भालस्था एक विन्दु के रूप में है, जो उभयात्मक है और प्रणव (ह्रीं) का केन्द्र बिन्दु है।

५९४. इन्द्रधनुः प्रभा

उपर्युक्त दो-दो नाम जोड़ों में हैं। शिरस्थिता यानी सिर में स्थित है चन्द्रनिभा यानी चन्द्र की कान्ति के रूप में। भालस्थेन्द्र-धनुःप्रभा यानी भाल में इन्द्र-धनु की प्रभा लिये हुए है। प्रकाश के सात रंग हैं: लाल, नारंगी, हरा, पीला, नीला, बैंगनी, आसमानी। साधक के सिर में ब्रह्मरन्ध्र के ऊपर गुरुमण्डल होता है ब्रह्मरन्ध्र में चन्द्रमा की आभा है। नीचे आज्ञाचक्र हैं, इसके सात रंग हैं सातों रंगों में प्रधान लाल रंग है, जो शेष छः रंगों को अपने में समाहित कर लेता है। अतः इसका सबसे अधिक महत्व है। भाल का लाल रंग शेष रंगों को शरीर के अंगों में आवश्यकतानुसार फैलाने में समर्थ है। क्योंकि यही चिंतन-स्थल है तथा यहां से ही सम्पूर्ण शरीर को बाहरी रूप से क्रियाशील होने की प्रेरणा मिलती है। कौन सा अंग क्या करे, कैसे करे उसको आज्ञाचक्र का यह इन्द्रधनुषी रंग ही रंग देता है। शरीर के अन्दर कुछ हिस्से तो स्वतः क्रियाशील बने रहते हैं, जैसे हृदय, धमनियां, नस आदि, तथा कुछ को मनन चिंतन की प्रेरणा यहां से प्राप्त होती है तथा कुछ क्रिया बाहरी हैं जैसे हम बाहरी रूप में कुछ करते मिलते हैं।

५९५. हृदयस्था

हृदय में रहने वाली। हृत्पद्मे भानुपत्रे..... षोढान्यास। हृदय में देवता का निवास माना गया है। हृदयादिन्यास-श्री महात्रिपुर सुन्दरी देवतायै नमः-हृदये। पराबीज को हृदय कहते हैं। कल्पसूत्र के अनुसार जो हृदय को देवता का निवास-स्थान करके जानता है वह सदैव प्रसन्न रहता है-यहां हृदय का तात्पर्य परा बीज से है। यह अनाहत चक्र है। पल-पल आहत होते हुए भी जो अनाहत रहे क्योंकि इसमें भगवती रहती है। हृदय में दहराकाश रहता है। इसमें आत्म-दीप जलता रहता है। संसार का बीज इस दीप-ज्योति में छिपा है। इसे आदित्य-हृदय या अग्नि-हृदय भी कहते हैं। नचिकेता ने यमराज की कृपा से अग्नि हृदय को पहचाना था। यह भावना का केन्द्र है। भावना से भगवती का सान्निध्य मिलता है।

५९६. रविप्रख्या

जिसकी सूर्य के समान कान्ति है। त्रिकूट का यह तीसरा कूट

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
हृदय की कान्ति सूर्य की प्रसर और पवित्र करने वाली कान्ति है। पंचदशी मूलविद्या का यह दूसरा तिहाई हिस्सा है।

५९७. त्रिकोणान्तरदीपिका

त्रिकोण को दीप्त यानी प्रकाशित करने वाली। यह वह त्रिकोण है जो मूलाधार में स्थित है। उपर्युक्त वर्णित तीनों स्थानों के तीनों प्रकाश का मूल प्रकाश तो सूर्य का ही है ये तीन साधना के त्रिकोण हैं।

जब सूर्य अष्टकोणीय मेरु पर्वत के चारों ओर चक्कर लगाता है, वह अपना प्रकाश तीन ओर फैलाता है एक ही समय में। वह जब इन्द्र के नगर में शिरीविंदु पर होता है, उस समय सोम के नगर में सूर्यास्त होता है तथा यमनगर में सूर्योदय।

विष्णुपुराण के अनुसार मध्यान्ह-काल में सूर्य जब देव के नगर से जाता है, वह अपना प्रकाश तीन नगरों में फैलाता है तथा दो मध्यम स्थलों में। उसके माध्यमिक विन्दु पर पहुंचने पर वह दो नगरों और तीन मध्यम स्थानों पर प्रकाश फैलाता है।

५९८. दाक्षायणी

दक्ष की कन्या। भक्तों को अभीष्ट वर देने में दक्ष यानी चतुर। दैत्यों का संहार करने में दक्ष, शिव की पत्नी।

५९९. दैत्यहन्त्री

दैत्यों का नाश करने वाली। जो प्राणियों को अकारण ही दुःख देते हैं, या जो हिंसा करते हैं ऐसे दैत्यों का हनन करने वाली। अथवा दिति के पुत्र होने से जो दैत्य हैं, उनका बध करने वाली। दिति का स्वभाव है दीनता, इससे अनेक दुर्गुण उत्पन्न होते हैं, अतः भगवती इस दीनता को समाप्त करती है। दीन को अदीन करना आदित्य का स्वभाव है। नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः-उपनिषद्। जहां भक्तों को दीनता से दूर रहना आवश्यक है, वहीं उन्हें अहंकार की भावना से भी दूर रहना है, तभी अपनी साधना को कर सकते हैं। दक्ष को भी अंहकार हुआ तब दाक्षायणी ने ही उसके अहं को नष्ट किया, उसका यज्ञ विध्वंस हुआ।

६००. दक्षयज्ञविनाशिनी

दक्ष प्रजापति के यज्ञ का विध्वंस करने वाली। जहां शिव का यज्ञ में भाग न देकर अशान्ति और नाश होता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

बड़े-बड़े नेत्रों वाली। नेत्रों में चंचलता या गतिशीलता भी है। दूसरे अर्थ में दर यानी डर आंदोलित अर्थात् उसे दूर करने वाली। अपन भक्तों के डर को दूर करने वाली होने से वह दरान्दोलित हैं तथा संसार उसके नेत्रों में समाया है, अतः उसके नेत्र विशाल हैं, उसकी दृष्टि से दूर कुछ भी नहीं है।

६०२. दरहासोज्ज्वलन्मुखी

जिनका हास-हंसना या मुसकाना भक्तों को सुख प्रदान करने वाला है। उनका अपना मुख तो शोभित हो ही रहा है। यह मंदहास मुखमंडल को सुंदर बना रहा है। कभी नष्ट न होने वाला सुख देने वाला सर्वानंदमय-चक्र है।

६०३. गुरुमूर्ति

गुरु की प्रतिमा। गुरु वही शिव है वही विद्या और शक्ति है गुरु और देवता में भेद नहीं है। "गुकारस्त्वन्धकारस्य रुकारस्तन्निवतर्कः, ब्रह्मज्ञानैकरूपत्वाद, गुरुरित्यभिधीयते। शक्ति रहस्य के अनुसार गुरु का अर्थ है गु यानी अंधकार तथा रु अर्थात् दूर करने वाला। अर्थात् जो तम को दूर करे। अन्य स्थान पर इनका अर्थ ब्रह्म और ज्ञान से है दोनों के एकीकरण से गुरु बनता है। सद्‌गुरु भगवती और मंत्र में कोई अन्तर नहीं है। श्रीमाता की मंद-मंद मुस्काती मूर्ति के अधखिले होठों से जो परम सत्य प्रकट हो रहा है, उसे समझने पर गु का गौरव दिखाई देता है। जहां अच्छे गुरु का अभाव हो, वहां माता की मंगलमय मूर्ति को ही गुरु रूप में मानना चाहिए।

६०४. गुणनिधि

गुणों की जो निधि हैं। गुणों का जो खजाना या समूह या व्यूह है। जैसे नव-व्यूह, श्रीचक्र में नौ का समूह एक नवावरण का समूह हुआ। सदा शिव का यह योग समय, परिवार, नाम, ज्ञान, मष्तिष्क, नाद, बिंदु कला तथा जीव के योग के रूप में है। देवी समस्त गुणों की निधि हैं, ये तीन गुण माने जाते हैं-सत्व, रज, तम। तीनों की उत्पत्ति विष्णु, ब्रह्मा शिव उन त्रिगुणात्मक रूप को उत्पन्न करने वाली जननी से हुई। गुण को रस्सी भी कहा जाता है। मानव या प्राणी एक अविद्यारूपी रस्सी से बंधा रहता है। यह विक्षेप शक्ति रूपी पाश है। भगवती पाश धारण करती है। भगवती इस रस्सी

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

से प्रलय के समय उस जहाज को बांधती हैं, जिसमें मनु के नेतृत्व में ऋषि-मुनि प्रलय काल में चढ़ाए जाते हैं। मनु भगवती की प्रेरणा से यह सब करते हैं और तब मत्स्यावतार होता है, तब नौ योजन लम्बी इस रस्सी से भगवती सबकी रक्षा करती हैं।

६०५. गोमाता

गौ की माता का नाम कामधेनु है, जो सुरभि है। गो पृथ्वी का भी नाम है, पृथ्वी की माता जगद्धात्री, महामाया लोकमाता जगन्मयी, गोस्वर्गे, गोइन्द्री इन्द्रियों को शक्ति देने वाली। ग़ावो विश्वस्य मातरः। गौ जगत की माता हैं। राजा पृथु ने गो-दोहन किया जिससे अनेक प्रकार के दूध रूपी पदार्थ निकले। वह ममता मयी है। गौ से जो अर्थ निकलते हैं, यथा भूदेवी, वाग्देवी, स्वर्ग, किरण, वज्र ये सब भगवती में व्याप्त हैं।

६०६. गुहजन्मभूः

गुह स्कन्द माता अथवा सोमकार्तिकेय की जननी हैं। गुह शब्द के अनेक अर्थ हैं तथा एक अर्थ गुप्त भी है। यह रहस्यात्मक नाम है। रामायण में भी एक रहस्यात्मक पात्र केवट "गुह" आता है। भगवती रहस्यों को जन्म देती है। योग्य साधक को ही वह आत्मा का रहस्य खोल कर दिखाती हैं।

६०७. देवेशी

देवताओं की ईश्वरी सुरेश्वरी। ज्वालापुर के पास जो हरिद्वार में है, सुरेश्वरी का प्राचीन मंदिर है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश की पूज्या। समस्त देवताओं पर शासन करने वाली शक्ति।

६०८. दण्डनीतिस्था

माता जहां अपने बच्चों को लाड-प्यार करती है, वहां ही जब उनके बुरे आचरण देखती है, तब उन्हें ऐसा करने से रोकने के लिये दण्ड का भी आश्रय लेती है। दण्ड नीति में स्थित। नीतिशास्त्र-न्यायं-दण्डेन शासनः। दण्ड के बिना प्रजा उच्छृंखल हो जाती है अतः शासन दण्ड से ही चलता है। सबको वह बड़े आत्मीयता से दण्ड देती है, उसमें जो मिठास होती है, भक्त उसे पहचानते हैं।

६०९. दहराकाशरूपिणी

दहर कुहर या हृदय। हृदयाकाश में रहने वाली। आकाश ही

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

भगवती का आकार है। हृदय में दहराकाश, अन्तरिक्ष में महाकाश।

Digitized by Sarayu Trust Foundation, Delhi and eGangotri

६१०. प्रतिपन्मुख्यराकान्त-तिथिमंडलपूजिता

पड़वा से पूर्णिमा तक की तिथि नित्या तिथि कहलाती हैं। पन्द्रह नित्याओं में जिसका पूजन होता है, वे कामेश्वरी, भगमालिनी आदि हैं। तन्त्र में निर्देशित साधनों से भगवती की पूजा की जाती है। दहराकाश में चन्द्रमा की कलाएं प्रतिदिन प्रकट होती हैं। उनसे तिथि बनती है, प्रत्येक तिथि का देवता प्रकट होता है यथा चौथ के गणपति, षष्ठी के स्कंद, सप्तमी के सूर्य, द्वादशी के विष्णु, पूर्णिमा के चन्द्र।

वाराहपुराण में अग्नि, अश्विनी, गौरी, गणपति, नाग, स्कंद,सूर्य, मातृकाएं, दुर्गा, दिशाएं, कुबेर, विष्णु, परमेष्ठी, शंभु, पितृ देव और चंद्र देव प्रकट होते हैं इन १६ दिनों में। ये सभी मानव शंरीर में अपना स्थान रखती है। इनसे अलग-अलग प्रेरणाएं मिलती हैं, कार्य-निष्पादित होते हैं। सिर से हृदय तक ये सब निवास करते हैं।

६११. कलात्मिका

सभी कलाओं की आत्मा हैं। १६ कला चन्द्रमा की हैं, १२ सूर्य की, १० अग्नि की और असंख्य कला आत्मा की हैं। आत्मा की कला सांसारिक और असांसारिक हैं। ललित कलाएं, फलित कला, चित्र, गायन, काव्य आदि ललित कलाएं हैं। भौतिक कलाएं लाभ के लिये होती हैं ललित कला आंतरिक-आनंद के लिये। कला परमेश्वरी की कृपा से ही प्राप्त हो सकती है। वैसे ६४ कला मानी गई हैं। मानव की चार अवस्थाएं हैं, जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय। यह सभी अवस्थाओं में कलामय होता है।

६१२. कलानाथा

जाग्रत अवस्था में मनुष्य चार कलाएं करता है- उत्पत्ति, जागर, बोध व मन की कलाएं सजग रहती हैं। इस अवस्था में मनुष्य बोलता-सुनता, चलता, फिरता स्वयं जगा रहता है और दूसरों को जगाता है। समझता और समझाता या सोचता विचारता है। जबकि स्वप्नावस्था में चार कलाएं अभिलाषा भ्रम, चिंता, व पुनःस्मरण व्यक्ति को अव्यक्त की ओर ले जाती है।

सुषुप्ति में चार कला मरण, विस्मरण, मूर्च्छा और निद्रा तथा चौथी तुरीयावस्था में वैराग्य, मोक्षकामिता, समाधि और विशुद्ध विवेक नामक चार अवस्थाएं मानव को परमात्मा का बोध कराती हैं। कलाओं की उत्पत्ति का जो स्थान है। सब कलाएं सब विद्याएं उसी से प्रकाशित हैं। चद्रमा की-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

१६ कलाएं हैं भगवता का भी, अत: वह कलानाथ हैं।

६१३. काव्यालापविनोदिनी

काव्यादि के कविता, छन्द, संगीत आदि के आलाप में निमग्न उन रसों का सार तत्व आनंद है। भगवती इस आनंद को लेती है और यह आनंद देती हैं। काव्य के आलाप से विनोद करने वाली।

६१४. सचामररमावाणीसव्यदक्षिणसेविता

हाथ में चमर लेकर लक्ष्मी और सरस्वती श्री जी त्रिपुर सुंदरी के दांये और बांये खड़ी होकर चमर डुला रही हैं। त्रिशती में इसे लक्ष्मी-वाणी निषेविता कहा है। बीज मंत्रों में तीनों देवियों के नाम 'ऐं ह्रीं श्रीं'' हैं, जिसमें दोनों ओर सरस्वती और लक्ष्मी तथा बीच में भुवनेश्वरी है। यह सोलह वर्णों का नाम है। इसका तात्विक अर्थ भी है। लक्ष्मी, अर्थ, विचार, सुंदरता, सश्रीकता की द्योतक है। जबकि सरस्वती उन भौतिक और क्षणभंगुर संपदा के विपरीत चिरंतन विचार, धन, सात्विक, सरस, स्वर और नाद का प्रतिनिधित्व करती है। और दोनों के सामंजस्यं से भगवती परमेश्वरी प्रत्यक्ष होती हैं।

६१५. आदिशक्ति:

आदि यानी सर्वप्रथम। इसी से ब्रह्मा, विष्णु, शिव, राम-कृष्ण आदि की उत्पत्ति है। कण-कण में शक्ति विराजमान है, सबकी अधिष्ठात्री श्रीमाता है, जिससे यह संसार पैदा हुआ है, अत: वह आदिशक्ति है।

६१६. अमेया

जिसको मापा नहीं जा सकता। सांसारिक शक्ति मापी भी जा सकती है, क्योंकि एक से बढ़कर एक होती है, तब दूसरी का मापन हो जाता है, परन्तु जो आदि शक्ति है, वह अक्षय-निधि है शक्ति का, उसे न मापा जा सकता है, न समाप्त किया जा सकता है, अत: उसे अमेया कहा है। उसे स्वयं उसके अलावा भला कौन नाप सकता है, जैसा कि लिंगपुराण में है- स्वर्ग, पाताल, पृथ्वी सब उमा में और उमा शिव में विद्यमान है।

६१७. आत्मा

अप्रमेय एवं परम् आत्मा। महात्रिपुर सुंदरी ही परमात्मा-स्वरूपा है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

६१८. परमा

परब्रह्म, अथवा पराशक्ति सबसे परे अथवा सबसे श्रेष्ठ। "परा पराणां परमा परम मूर्ति''। पर या ब्रह्मा यानी सीमा अथवा परा शिव मा लक्ष्मी। "सहस्रपरमा देवी शतमूला शतांकुरा'' कहा गया है। परम शिव को और परमा माता को कहा गया है पर को ब्रह्म तथा परब्रह्म के चार रूप पुरुष, व्यक्ति, अव्यक्त और काल है। इन चारों के परे इनको परमा परमेश्वरी नियंत्रित करती है।

६१९. पावनाकृतिः

पवित्र करने वाली। अथवा पवित्र है आकृति जिसकी। या जिसकी आकृति मन में आते ही मनुष्य पावन हो जाता है। जिसका शरीर, आकृति या चरित्र तीनों हीं पवित्र करने वाले हैं। याज्ञवल्क्य-स्मृति के अनुसार प्रायश्चित और ज्ञान ही भूतात्मा को शुद्ध बनाते हैं।

६२०. अनेककोटिब्रह्माण्डजननी

असंख्य ब्रह्माण्डों की जननी। एक ब्रह्माण्ड में ३ लोक चौदह भुवन। एक ब्रह्माण्ड में वैकुण्ठलोक, इन्द्रलोक, चन्द्रलोक, सूर्यलोक, वरुणलोक सात लोक स्वर्गादि ऊपर के तथा पातालादि नीचे हैं। ऐसे अनेकों ब्रह्माण्डों को पैदा करने वाली माता। अनेक करोड़ ब्रह्माण्ड तक उसकी पावनता व्याप्त है।

६२१. दिव्यविग्रहा

उज्ज्वल प्रकाशयुक्त शरीर यानी विग्रह है जिसका। दिव्य अर्थात् मृत्युलोक में नहीं, दिव्य देवलोक में दिव्य मूर्ति है जिनकी। यह विराट, स्वराट और सम्राट के रूप में संसार को संचालित करती है। मातृत्व के रूप में दिव्यमूर्ति है। सांसारिक माताओं के रूप में जो गुण, उनमें भरण-पोषण का है, वह परमेश्वरी की ही दिव्यता व्याप्त है। पृथ्वी में उत्पादकता है, इससे जो कुछ उत्पन्न होता है वह उसकी ही चेतना है। भगवती के इस दिव्य रूप को दिव्य-विग्रहा कहा है।

६२२. क्लींकारी

यह कामबीज को उत्पन्न करने वाली। यही काम बीज कृष्ण मंत्र का भी बीज है, यही सम्मोहन मंत्र है। श्री कृष्ण ने बांसुरी बजाई उसमें यही मंत्र बोलकर ब्रज-सुन्दरियों को बंशीवट पर बुलाया या सम्मोहित किया। ऐसा भागवत स्क. १० में है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

क्लींकार शिवकाम है और क्लींकारी उनकी पत्नी जो क्लींकार बीज की उत्पादक हैं। यह बीज तीन अक्षरों के संयोग से बना है क, ल व ई। ये क्रमशः काम, कला व विलास के परिचायक हैं। षट्चक्र दर्शन में क-काकिनी स्वाधिष्ठान में, ल-लाकिनी मणिपूर तथा ई-याकिनी नामक योगिनी बनकर सहस्रार कमल में यह संयोग स्वीकारती है, यहीं तीनों बीज अपना संपूर्ण और समग्र रूप पाते हैं। एक अर्थ में क शरीर, ल मन और विंदु संयुत ई आत्मा का प्रतीक माना जा सकता है। यह बीजाक्षर सकल कलात्मिका श्रीमाता को साकार करने वाला बीजाक्षर-संयोग सिद्ध होता है।

६२३. केवला

एकमात्र आप ही हैं, केवल आप, आपके अतिरिक्त कोई भी नहीं। शिव सूत्र में "त्रद्विमुक्तस्तु केवली" कहा है, वही मात्र मुक्त है। आत्मतत्व-रूपा देवी ही केवला है, शेष सब पार्थिव है। जब संसार के बंधनों से मुक्त होता है, तो जो कुछ अविनश्वर विमुक्त तत्त्व बचा रहता है, केवल वही है अपना।

६२४. गुह्या

गुप्त। भगवती को गुह्यकाली भी कहा जाता है। यह गुरु द्वारा ही प्रकट, केवल शिष्य को बताई जाती है। गुप्त रूप में। इसको समझना जानना कठिन है। देवी के दर्शन भी कठिन हैं। और उसे समझना जानना भी या उसे स्पष्ट करना भी कठिन है। उसके समझने के लिये तो अन्तर्दृष्टि होनी चाहिए। देखने पर भी उसे बखाना नहीं जा सकता है।

६२५. कैवल्यपददायिनी

जो उसका साक्षात्कार अन्तर्मन से कर पाते हैं, उन्हें कैवल्य-पद मिल जाता है। कैवल्य यानी मोक्ष पद। मोक्ष देने वाली। मोक्ष का अर्थ मृत्यु नहीं अपितु परमानन्द की प्राप्ति है। जीवात्मा परमात्मा का भेद समाप्त होने पर मिलता है। गीता में- "यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः" कहा है। इससे बढ़ कर कोई लाभ नहीं है। यह योग साधना का चरम ध्येय है। यहां पहुंच कर आत्मा फिर संसार में वापस नहीं आती यह परम धाम है। सिद्धि के चार सोपान हैं-सालोक्य, सामीप्य, सायुज्य और सारूप्य। इनसे परमेश्वरी का सामीप्य प्राप्त किया जा सकता है। वह मोक्ष प्राप्त हो सकता है।

६२६. त्रिपुरा

तीन पुर। ब्रह्मा, विष्णु, शंकर, तीन काल, तीन दिन रात व

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
संध्या, तीन देवी ब्राह्मी, लक्ष्मी व पार्वती। त्रिपुरासुर के बध करने से त्रिपुरारी शिव का नाम है। त्रिपुरा देवी का नाम गंगा, यमुना, सरस्वती। तीन कूट जिनका शरीर है। मन बुद्धि चित्त। ध्यान, ध्यातृ, ध्येय। ज्ञान ज्ञाता ज्ञेय। तीन लोक। तीन नेत्र, अग्नि सूर्य चन्द्र, स्त्री पुरुष, नपंसुक। देवानां त्रितयं त्रयी हुतभुजां शक्तित्रयं। त्रिस्वरा, त्रैलौक्यं, त्रिपुरी, त्रिपुरष्करमथ, त्रिब्रह्म, वर्णास्त्रयः। यत्किंचिज्जगति त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्गा त्मकं। तत्सर्वं त्रिपुरे-तिनाम भगवत्यन्वेति ते तत्वत। लघुस्तव

त्रि-पुष्कर, ओम-प्रणव में तीन अक्षर अ उ म, वेदत्रयी ऋग, यजु, साम। धर्म, अर्थ, काम तीन। इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना। सारा संसार त्रयी का समाहार है और इसकी अधिष्ठात्री इसकी सूत्रधारिणी त्रिपुरा कही गई है।

६२७. त्रिजगद्वन्द्या

पाताल पृथ्वी, स्वर्ग आदि तीनों जगत की वन्दनीया। पाताल-वासी, पृथ्वी, स्वर्ग के देवता सभी, जिसको नतमस्तक होकर प्रणाम करने योग्य। तीनों लोकों से वन्दनीय।

तीन जगत या तीन पुर या शरीर में स्थित इडा, पिंगला और सुषुम्ना तीन नाडियां, कामानल, जठरानल और योगानल नामक तीन अग्नियां अथवा मन, वाणी, कर्म नामक त्रिकरण और या भूलोक, भुवर्लोक और स्वर्लोक नाम के तीन लोक अर्थात् सब लोकों की वन्दनीय मात्र श्री माता ही है। वही सर्वोच्च सत्तासीन हैं।

६२८. त्रिमूर्ति

यह एक विशद अर्थ वाला नाम है। त्रिमूर्ति से तात्पर्य ब्रह्मा, विष्णु और महेश ही नहीं, वह तीनों रूपों में तो है ही बल्कि महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती स्वरूपा भी है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश जो सृष्टि, स्थिति और लय करते हैं, वह भी भगवती के बल से।

देवी भगवती पुराण के अनुसार शांभवी जो श्वेत वर्ण की हैं, श्रीविद्या जो रक्तवर्णा है और श्यामा जो श्याम वर्ण वाली है, तीनों के एक रूप में त्रिमूर्ति है। त्रिपुरार्णव के अनुसार : ३ नाडी सुषुम्णा, पिंगला, इडा तथा ३-मन, बुद्धि, चित्त ३-तत्व भिन्न रूपों, स्थितियों, ध्यान योग, संसार, पीठ, बीज, वेद, अग्नि, ऊर्जा , पंचदशी के भग, पुर। इसी प्रकार लघुस्तव में तीन देव, तीन स्वर, तीन नगर, पवित्र झील, या सरोवर, जाति, दुनिया की सभी चीज तीन भागों में विभक्त है। कालिका पुराण के अनुसार ग्लोब तिकोना है। धौम्य के अनुसार

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
तीन वर्ष की कन्या को त्रिमूर्ति कहा जाता है। तीन शक्ति, ३ वामा आदि हैं इच्छा आदि। देवी के तीन रंग दिये हैं तीनों रंग सात्विक, राजस और तामस तत्व के बोधक हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु और महेश के तेज रूप हैं।

६२९. त्रिदशेश्वरी

देवताओं को त्रिदश भी कहा गया है क्योंकि वे तीस साल के ही होते हैं उनकी ईश्वरी। तेरह अक्षर के मंत्र वाली त्रिदशेश्वरी। तैंतीस गुणों वाले ईश्वर की ईश्वरी।

६३०. त्र्यक्षरी

तीन अक्षर जिनके बीज मंत्र हैं। पंचदशी मंत्र के भी तीन कूट हैं जो कि वाग्भव, मध्य या कामराज तथा शक्ति कूट है। वाग्भव कूट में वागीश्वरी शक्ति है, जिसे ज्ञान शक्ति कहते हैं, यह मुक्ति प्रदायिनी है। कामराज कूट या मध्य कूट में क्रिया शक्ति है, शक्ति कूट में इच्छाशक्ति यहां की शासिका है। इच्छाओं का शासन तथा उनका पूरा किया जाना यहीं से चलता है। इच्छा शक्ति शिव रूप में है। त्र्यक्षरी को शुद्ध विद्या, कुमारी मंत्र या बाला मंत्र भी कहते हैं। वर्णों को तीन भागों में विभक्त किया है ये युगाक्षर, मासाक्षर तथा नित्याक्षर हैं।

६३१. दिव्यगन्धाढ्या

सुन्दर गन्ध के परिपूर्ण। जिसकी सुगन्ध से अनेक ब्रह्माण्ड सुगन्धित हैं अथवा दिव्य गन्धों से जिनका अर्चन किया जाता है। तीन अक्षरों में समा जाने वाली (मंत्राधीनं तु दैवतम्) के शब्द मात्र पार्थिव नहीं अपितु दिव्य हैं। दिव्य शक्तियों से ओत-प्रोत हैं। श्रीसूक्त में "गंधद्वारा" कहा है। गंध अर्थ उपासना का संयम भी है।

६३२. सिन्दूरतिलकांचिता

सिन्दूर से जिनका शिरोभाग चर्चित हो रहा है। सौभाग्यवती सिंदूर से मांग भरती है, उसको सिंदूर का तिलक भी कहते हैं। परमेश्वरी तो अखण्ड सौभाग्यवती है और उसके इन सौभाग्य चिन्हों की ही करामात है कि जो परमेश्वर हलाहल-पान भी कर लेते हैं तो वे नीलकण्ठेश्वर होकर भक्तों को अमर होने का वरदान दे देते हैं। सागर-मंथन में स्वयं विषपान किया और अमृत देवताओं को पीने के लिये दे दिया।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

एक अर्थ के अनुसार सिन्दूर हाथी को और तिलका हथिनी को तथा अंचित अर्थात् अर्चित। तात्पर्य कि हाथी तथा हथिनी से अर्चित श्रीमाता।

विष्णु भागवत पुराण के अनुसार नन्द का पुत्र कृष्ण जिसने ब्रज भर की गोपियों का मन हर लिया था उसका प्यार रोके नहीं रुकता था, ऐसे पति को प्राप्त करने के लिये नारियां भगवती का उपवास रखती हैं, स्नान करती हैं यमुना के जल में नग्न होकर अपनी इच्छा की पूर्ति के लिये स्नान करती हैं और मांगती हैं "हे कात्यायनी, ओ महामाया, ओ महा योगिनी देवी हमें कृष्ण पति के रूप में दो। हम तेरी पूजा करती हैं।'' मंत्र जपती हुई गोप कन्याएं देवी-पूजन करती हैं इस प्रकार का प्रसंग रुक्मिणी के विवाह के समय है कि जब वह कृष्ण के आगमन की बड़े उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही है और यदि घड़ी टल गयी तो वह किसी और के साथ ब्याह दी जायेगी कृष्ण के आने में देर होती देख कहती है "भाग्य भी मेरे विपरीत हो गया और विधाता भी। महेश्वर के साथ देवी भी मेरे प्रतिकूल हो गयी। हे हिमनन्दिनी, आज़ तू भी मेरे अनुकूल नहीं है। इस प्रकार विषाद युक्त राजकुमारी रुक्मिणी को उसकी सहेलियां भगवती पार्वती के पूजन के लिये मंदिर ले जाती है ताकि वह उनके चरणों को पूज सके। उसने इधर पूजन किया और उधर कृष्ण रथ वेग से लाये और उधर ले गये रथ में बैठा कर।

भगवती जब देती है तो पूरा सोचने भी नहीं देती और जितना वह सोच पाता है उससे कहीं अधिक उसको मिल जाता है। क्या किया था रुक्मिणी ने मां पार्वती को सिंदूर चढ़ा कर ही नमन तो किया था। वह सिंदूर के तिलक से अर्चना स्वीकार कर लेती है।

६३३. उमा

पार्वती। जिसकी चित्त की वृत्ति उत्तम हो उसे उमा कहते हैं। उमा षड्वार्षिकीमता। छह वर्ष की कन्या को उमा कहते हैं। "ॐ'' कार का ही नाम उमा है। ब्रह्म और उमा एक ही है। "उ'' शिव का भी नाम है "मा'' तो मां है ही, मां लक्ष्मी का भी नाम है। उमा का उ, म अ ही अ उ म हैं जो प्रणव है, यह अति रहस्यात्मक नाम है। प्रणव की शक्ति है। उ अर्थात् आमंत्रण तथा मा यानी ना यह विरोधाभास सब जगह मिलता है। जब उमा शिव को पति रूप में प्राप्त करने के लिये तपस्या को निकली तो उनकी माता ने विरोध किया, समझाया "मा'', परन्तु उसकी इच्छा अत्यधिक बलवती थी अर्थात् "उ'' आमंत्रण। किसी भी कार्य की विरोधी शक्ति अवश्य होती है। अंग्रेजी में कहावत है "एव्री ऐक्शन हैव इट्स आपोजिट रिऐक्शन'' अतः उपासकों को इसे समझना चाहिए उमा को उ यानी उच्च मा यानी निश्चित

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मानसिक परिवर्तन भी है। उमा योगियों की इच्छाशक्ति को कहते हैं। पद्मपुराण के अनुसार उमा वह देवी है जिसकी पूजा विनायक और सिन्धुवन में होती है।

६३४. शैलेन्द्रतनया

पर्वत राज की पुत्री होने के कारण उसका नाम शैलेन्द्रतनया पड़ा। देवीपुराण के अनुसार पर्वतों के राजा के यहां जन्म लिया, अत: शैलों के इन्द्र की तनया कहलाई। उसने सात्विक साधना की जिसके फलस्वरूप इस गिरिराज की बेटी को शिव की अर्द्धांगिनी होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

६३५. गौरी

गौर वर्ण वाली। निर्मल श्वेत चमकीला। विद्युद्दाम बिजली का प्रकाशवान। महा वाशिष्ठ के अनुसार पीला रंग होने के कारण उसे गौरी कहा है। गौरी दस वर्ष की कन्या को भी कहते है इस नाम की एक नदी भी है। देवी पुराण के अनुसार दक्ष पुत्री सती के यज्ञ कुण्ड में स्वयं को भस्म कर लेने के बाद पुन: वह गिरिराज के यहां जन्मी उसका रंग शंख, चमेली और चन्द्रमा की तरह श्वेत हुआ, अत: वह गौरी कहलाई। पद्म पुराण में भी कान्यकुब्ज (कन्नौज) की देवी को गौरी नाम से पूजा जाता है।

६३६. गन्धर्वसेविता

गन्धर्वों के द्वारा सेवित। गंधर्व देवताओं के गायक हैं, ये सब भगवती के गुणों का गान बड़े मधुर स्वरसे करते हैं। गाते हैं। विश्ववसु आदि। कहीं इसे गौरी-गंधर्व सेविता एक ही नाम से बताया है कि गौरीगंधर्वों से सेवित है। विवाह से पूर्व कन्याएं भी गौरी पूजने जाती हैं, जो सौभाग्यकांक्षिणी होती है। वह मां गौरी से सौभाग्य के साथ प्रेम निष्ठा, सात्विकता, धर्मपरायणता का वरदान लेती है।

६३७. विश्वगर्भा

सारा संसार जिसके गर्भ में है। अथवा जिसके गर्भ से सारा विश्व पैदा होता है। ज़गत का प्रसव करने वाली। वह जगन्माता है समस्त चराचर, जड़-चेतन, अविनश्वर, नश्वर सब उसी परमेश्वरी के ही गर्भ से निकले हैं। श्रीमाता ही हिरण्यगर्भा है। माता की प्रसव-पीड़ा श्रीमाता का सुख है। वह इस पीड़ा में सुखानुभूति करती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

६३८. स्वर्णगर्भा

सोने की खान पृथ्वी में है। पृथ्वी रूप भी वही है क्योंकि उसी से हिरण्य-गर्भ पैदा है। अतः अपने गर्भ में स्वर्ण को धारण करने वाली है। हिरण्य-गर्भ ब्रह्मा को भी कहा जाता है, श्रीमाता उनको भी जन्म देने वाली है, अतः स्वर्ण-गर्भा है। स्वर्ण से तात्पर्य मात्र सोने से नहीं बल्कि स्वर्णिम आभा से भी है, उसके गर्भ में स्वर्णिम आभा है क्योंकि वह स्वर्णाक्षरों यानी मंत्रों से भरा हुआ है। सु और अर्ण की सन्धि से स्वर्ण बना है, और इन दोनों शब्दों का अर्थ सु यानी उत्तम अर्ण यानी आभा या मंत्र तथा गर्भा का अर्थ चमकने से है अर्थात् मंत्रों से उसकी महानता, उत्तमता चमक रही है।

वायु पुराण में "हिरण्यमस्या गर्भोऽभूद् हिरण्यस्यापि गर्भजः।
यस्माद्धिरण्यगर्भः स पुराणेऽस्मिन्निरुच्यत।।"
अर्थात् गर्भ में मंत्र हो।

६३९. अवरदा

जिसके दांत कान्तियुक्त हैं। कान्ति मन्तोरदा दन्ता। या असुरों और अपवित्र मनुष्यों को दण्ड देने वाली। इसे "वरदा" भी कहा जा सकता है, क्योंकि वह भक्तों को वर देने वाली है। यह भी कहा जा सकता है कि वह ऐसा वरदान देने वाली है जो कोई नहीं दे सकता।

६४०. वागधीश्वरी

वाणी की अधीश्वरी। वाणी सरस्वती की ईश्वरी। मनुष्य के पास वाणी ही एक ऐसी शक्ति है, जिसके बल पर शत्रुओं को भी मित्र बनाया जा सकता है। वाणी से ही राजा के हृदय पर कवि और गायक राज करते हैं। वाणी से ही ज्ञान का प्रकाश होता है। शब्द-ब्रह्म, वह शब्द चाहे जिह्वा से निकला हो या हृदय से माता सबको सुनती है तथा अनुकूल वर देती है।

६४१. ध्यानगम्या

ध्यान से ही गम्य। ध्यान से ही जानने योग्य। प्राप्त होने वाली। श्रुति कहती है 'ते ध्यानयोगानुगता अपश्यन् देवात्मशक्तिं स्वगुणे निगूढाम्''। ध्यान मुख्य वस्तु है, इसी से मनका संयम होता है और फिर मन परमात्मा तत्व में स्वतः लीन होता है। ध्यान से ही भक्तजन भगवती की कृपा प्राप्त कर सकते हैं, अतः भगवती ध्यानगम्या है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

६४२. अपरिच्छेद्या

देश काल से जो परे हैं या अपरिच्छेद्य होती है। ध्यान योग से ही इस अपरिच्छेद्य शक्ति को आत्मसात् करना संभव है। भगवती भावना गम्या है अतः उस अलौकिक शक्ति की भावना अपने हृदय में करने पर ही वह मिलती है और वह किसी समय विशेष या स्थान विशेष पर उपलब्ध नहीं होती। वह तो भक्त के अधीन है कभी और कहीं भी मिल सकती है अभक्त को कभी और कहीं भी नहीं।

६४३. ज्ञानदा

ज्ञान देने वाली। ज्ञानमय ही जिनका शरीर है। ज्ञान प्रकाश का नाम है-प्रकाशवान् भगवती का स्वरूप है। भगवत निर्मल ज्ञान है, उसके सामने श्रद्धा भक्तियुक्त होकर प्राणी आता है तो उसका अज्ञान या तम अंधकार नष्ट हो जाता है। जैसे तुलसीदास जी ने "सन्मुख होहि जीव मोहि जब ही, जन्म कोटि अघ नाशहुं तब ही'' कहा है। ध्यान करने से भगवती ज्ञान प्रदान करती है। क्योंकि वह स्वयं ज्ञानमूर्ति है, अतः ध्यान तो साधन है साध्य तो ज्ञान ही है। सांसारिक ज्ञान तो नश्वर और मानसिक मात्र है, आत्मा के बारे में वह कुछ नहीं जानता, अतः आध्यात्मिक ज्ञान ही अलौकिक अनंत होता है।

६४४. ज्ञानविग्रहा

ज्ञान ही जिनकी देह है। ज्ञान रूपिणी। भगवती परब्रह्म-रूपा है। ज्ञान ब्रह्म का स्वरूप है। ब्रह्म का पर्याय ज्ञान है। गीता में "न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते'' ज्ञान के समान पवित्र कुछ भी नहीं है "सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म'' आदि कहा है। वह संसार की ज्ञानात्मा है-ज्ञान रूपा है। विग्रह मूर्ति को भी कहते हैं और विस्तार को भी ।

६४५. सर्ववेदान्तसंवेद्या

वाराहपुराण में कहा है "एषा त्रिशक्तिरुद्दिष्टा नय-सिद्धान्त गामिनी, एषा ज्ञानात्मिका शक्तिः सर्ववेदान्त गामिनी।'' सर्ववेदान्त का जो तत्व है, सार है, अथवा रस है, वही ईश्वरी की महाशक्ति है त्रिआनंद का रस है। "रसोवैसः'' वेदों का जो सिद्धान्त है, वही महात्रिपुर सुंदरी है।

वेदान्त जो दर्शन है उनका चरम लक्ष्य ईश्वर को जानना है, यह उपनिषदों का निचोड़ है, आध्यात्मिक ज्ञान है, इससे सत्य का ज्ञान होता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

६४६. सत्यानन्दस्वरूपिणी

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वह सत्य स्वरूप और आनंद स्वरूप है। और जो कुछ दृष्ट वस्तु है, वह नाशवान् होने से मिथ्या है। ईश्वर तत्व सत्य है, क्योंकि वह अविनाशी है। नाश नहीं होने वाला है। इसी प्रकार मिथ्यानन्द यथा धन-सम्पत्ति, परिवार का मोह परमात्म-शक्ति को भुला देता है और विषय-सुख में मन भ्रमित कर देता है, यह लौकिक-सुख क्षणिक है। परमसुख और परमधन अखण्ड-आनंद नित्य-आनंद परमात्मा की उपासना है। यह आत्यन्तिक सुख है। गीता में कहा है "सुखमात्यन्तिकं यत्तत् बुद्धि ग्राह्यमतीन्द्रियम्।" सत्य और आनंद ईश्वर का स्वरूप है।

कुछ ज्ञानी इस नाम को दो भागों में विभक्त करते हैं सत्य और आनन्दस्वरूपिणी। यहां सत्य जीवन का सर्वस्व है, सत्य प्राणशक्ति का प्रकाश है। स यानी प्राण (सत्) "त" अन्न अर्थात् प्राणशक्ति का भोजन तथा "य"सूर्य। यह एक रहस्य है कि सत्य सूर्य की भांति प्रकाशित होने वाला आध्यात्मिक आलोक है।

आनन्दस्वरूपिणी, वेदान्त सूत्र के अनुसार चरम सुख या पूर्ण सुख और ब्रह्म आनंद है। परन्तु यह नाम एक बताने वाले का मत है कि सत्य से प्रसूत आनंद ही परमेश्वरी के स्वरूप को साधक के अंतस्तल में अंकित कर देता है।

६४७. लोपामुद्रार्चिता

अगस्त्य मुनि की पत्नी लोपामुद्रा के द्वारा अर्चित। मां श्री ललिताम्बा की उपासकों में साध्वी-स्त्रियों की अग्रगण्या लोपामुद्रा है। भगवान् हयग्रीव, अगस्त्य मुनि को ललिता सहस्रनाम का उपदेश कर रहे हैं तथा इस नाम से यह बता रहे हैं कि आपकी पत्नी ने जिस तत्त्व को पहचान लिया है, उसे आप अभी पहचान रहे हैं। एक अर्थ में लोपामुद्रा एक विद्या है, जिसके माध्यम से सामने की चीज के अस्तित्व और नाम के होते हुए भी उसे लोप माना जाता है अथवा कर दिया जाता है, उसकी भक्ति व प्रेम को आत्मसात् किया जाता है। नश्वर की उपेक्षा कर अविनश्वर की उपासना ही लोपामुद्रा की अर्चना है।

६४८. लीलाक्लृप्त ब्रह्माण्डमण्डला

लीला अर्थात् खेल ही में जब इच्छा शक्ति जागती होती है, वह सभी असंख्य ब्रह्माण्डों को पैदा करती है, रचती है। जैसे कुंवारी कन्याएं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

गुडिया-गुड्डों को बनाती हैं और उन्हें नष्ट करती हैं या उन्हें नए वस्त्र पहनाती हैं। ऐसे ही ललिताम्बा भी करती है। देवीस्तव में कहा है कि शिव भी संसार को पैदा करने की शक्ति नहीं रखते या उनके पालन व लय करने की शक्ति ब्रह्मा विष्णु में भी उनकी कृपा-शक्ति के बिना नहीं है, लेकिन हे माता, आप तों खेल ही खेल में इस ब्रह्माण्ड-मण्डल को नियमित करती रहती हैं।

६४९. अदृश्या

जो दिखती नहीं। इसलिये अदृश्या है। तात्पर्य है कि इन चर्म-चक्षुओं से नहीं दीखती, वह तो ज्ञान-चक्षुओं से दीख पाती है। "चर्म चक्षु न पश्यन्ति, पश्यन्ती ज्ञान चक्षुषा"। वह सबको देखती है, उसे कोई नहीं देख पाता। बताते हैं कि सभी दृश्यवान् वस्तु नश्वर हैं। परन्तु वह तो शक्ति है, अनश्वर है, अविनाशी है, दिखाई न देने वाली है। सच्चा ज्ञान इसी में है कि नश्वर में अविनश्वर का बोध हो या दृश्य में अदृश्य का बोध हो।

६५०. दृश्य-रहिता

व्यावहारिक दृष्टि से रहित अत्यन्त सूक्ष्म होने से वह केवल गुरु द्वारा दिखाए मार्ग से दीखती है वह प्रकाश देते हैं, जिससे ज्ञान होता है, तब वह दीखती है अर्थात् ज्ञान दृष्टि से देखने योग्य। आन्तरिक दृष्टि या ज्ञानवान को दीखने वाली बाहरी ज्ञान या दृष्टि से न दीखने वाली।

६५१. विज्ञात्री

विशेष जानने वाली। वह स्वयं वेद-स्वरूप है "विद्-ज्ञाने।" अन्तर और बाह्य, सबको जानने वाली।

६५२. वेद्यवर्जिता

जो सब कुछ जानने वाली है, परन्तु जिसको जानने के लिये कुछ भी नहीं। उसको जानना किसी के बस की बात नहीं।

६५३. योगिनी

योग-शक्ति वाली। विष्णु-पुराण में "ज्ञानेन्द्रियाणि सर्वाणि निगृह्य मनसा सह एकत्व भावना योगः क्षेत्रज्ञ परमात्मनोः। गीता में भी "तं विद्याद् दुख संयोगं वियोग योग-संज्ञितम्। "पतंजलि ने चित्त की प्रवृत्तियों के निरोध को योग कहा है-मंत्र योग, ज्ञानयोग, कर्मयोग, लययोग, हठयोग, राजयोग अथवा डाकिनी आदि योगिनी। अथवा ब्रह्म तथा जीव का योग अथवा आकस्मिक

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

योग दो वस्तुओं का मिलना योग कहलाता है। तो इन "दो'' फिर वे चाहे कुछ भी क्यों न हों, को मिलाने वाली। आत्मा का मन से योग ही परमेश्वरी तक पहुंचाने में सक्षम है।

वृहदारण्यक के अनुसार "विज्ञातारमरे केन विजानीयात् अर्थात् सब कुछ जानने वाले को कैसे जाना जाये। इसका उत्तर केनोपनिषत् में इस प्रकार दिया है "अविज्ञाते विज्ञानतां विज्ञातम् अविजानताम्'' अर्थात् जानने वाला इसको नहीं जानता, पर न जानकर ही जानने वाला इसको जान जाता है, क्योंकि वह इस हेतु में प्रयासरत रहता है।

६५४. योगदा

योग देने वाली। जो वस्तु नहीं मिली उसे मिलाने वाली। ब्रह्म प्राप्ति अथवा शान्ति देने वाली या योग दाता। वह ज्ञानी को ज्ञेय से जोड़ने वाली है और वही योग की क्षमता प्रदान करने वाली योग दाता है।

६५५. योग्या

योग देने वाली। सब कुछ करने योग्य। सबसे अधिक योग्य। ध्यान करने योग्य। जप करने योग्य। या स्तुति योग्य। योगियों को योग-साधना के उपयुक्त योग्यता प्रदान करने वाली।

उपर्युक्त तीन नाम योगिनी, योगदा और योग्या एक दूसरे से जुड़े हैं। योगिनी आनंद लेने वाली है, योगदा आनंद देने वाली और योग्य आनंद का तत्व है।

योगसूत्र में मानसिक चित्तवृत्ति को शुद्ध बनाए रखने को योग कहा है। योग के चार प्रकार दिये हैं मंत्र, लय, हठ और राज। राज के तीन खंड हैं सांख्य, तारक व अमनस्क।

६५६. योगानन्दा

शिव और शक्ति के योग में आनंदित रहने वाली। योगानंद का अर्थ योग-निद्रा है, जो भी आनंद मय होता है।

६५७. युगन्धरा

युगों को धारण करने वाली। सतयुग आदि युगों को धरने वाली या योग में आनन्दित रहने वाली अथवा योगनिद्रा में आनंदित रहने वाली।

६५८. इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्तिस्वरूपिणी

वैसे तो शक्ति के असंख्य स्वरूप हैं, किन्तु मुख्य तीन शक्ति हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ये तीन पुर हैं जिससे भगवती को त्रिपुरा कहा गया है। ये ही राधा, ललिता, विशाखा या गंगा, यमुना और सरस्वती ये ही इच्छा, ज्ञान और क्रिया नामक शक्तियां हैं। "इच्छाशिरः प्रदेशश्च ज्ञाना च तदधोगता। क्रियापदगताह्यस्या एवं शक्ति त्रयंवपुः।" इच्छाशक्ति सिर, हृदयादि ज्ञान और अधोभाग क्रियाशक्ति हैं। ऐसा संकेतपद्धति में उल्लेख है। क्रिया के पांच प्रकार हैं-स्पंद, परिस्पंद, प्रक्रम, परिशीलन और प्रचार।

६५९. सर्वाधारा

सब की आधार। अनेक ब्रह्माण्डों को धारण करने वाली।

६६०. सुप्रतिष्ठा

सुन्दर प्रतिष्ठा है जिसकी। सबमें सुप्रतिष्ठित अर्थात् विराजमान है जो।

६६१. सदसद्रूपधारिणी

सद्रूप और असद्रूप दोनों ही जिनका स्वरूप है। जिस तरह भगवती ने स्वयं को "अहं विज्ञाना अविज्ञाने" कहा है। सद् यानी सत्य ब्रह्म या परमात्मा असद् रूप माया यानि संसार दोनों ही जिनका स्वरूप हैं। यह एक दार्शनिक तत्व है। सत्य की छाया असत है। तैत्तिरीय उपनिषद् में "सत्यंचानृतं च सत्यमभवत्" कहा है। अर्थात् सत्य और असत्य दोनों मिलकर आगे चल कर वे गंगा ही कहलाते हैं। ईश्वर का स्वरूप भी ऐसा ही कुछ अजीब है, यह सत्य है।

६६२. अष्टमूर्ति

आठ वसु ही आपकी मूर्ति है। आठ चिर जीवी-अश्वत्थामा आदि या आठ प्रकृति जैसा कि गीता में -"भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेवच अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृति रष्टधा" लिखा है। अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन बुद्धि और अहंकार ये बाह्य और अन्तिम तीन आंतरिक तत्वों के बोधक हैं। विष्णु पुराण में इन पंच तत्वों के अलावा सूर्य चंद्र और जीव ये आठ तत्व हैं। वैसे गीता के मन, बुद्धि और अहंकार ही ये चन्द्र सूर्य और जीव ही हैं क्रमशः। मत्स्य पुराण में भगवती की आठ मूर्तियों का उल्लेख है, ये हैं- लक्ष्मी, मेधा, धरा, पुष्टि, गौरी, तुष्टि, प्रभा और द्युति। ये सभी सरस्वती का स्वरूप हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

६६३. अजाजैत्री

जिसका जन्म न हो। आदि अन्त या मध्य से रहित अथवा लोहित शुक्ल को भी अजा कहते हैं। कई स्थान पर अजाजैत्री एक ही नाम दिया है।

जीतने वाली। जो भगवती के सामने युद्ध के लिये आया, उसी को उसने जीत लिया। इतना ही नहीं अपितु जो श्रीजी की उपासना करने वाला हो उसको विवाद में युद्ध में जिताने वाली है। अज्ञान और अविद्या को नाश करने वाली है।

जो इन दोनों नामों को एक कर देखा जाये तो अर्थ स्पष्ट होता है कि अजा यानी तीन रंग लाल, सफेद और काली इनकी मिश्रित प्रभा ही है भगवती की। वेदों में इसे "अजामेकां लोहितां शुक्ल कृष्णां'' कहा है ये भौतिक जीवन में हमें प्रातः की लालिमा दिन की श्वेत प्रभा और रात की कालिमा के रूप में देखते हैं। जैत्री अर्थ जीतने से है तो लालिमा पर श्वेत की विजय होती है, प्रातः के बाद दिन और दिन के बाद रात की कालिमा की विजय होती है और यह प्रक्रिया सदैव चलती ही रहती है, अतः कुछ विद्वान इसे एक नाम मानते हैं।

६६४. लोकयात्रा विधायिनी

चौदह भुवनों और लोकों की यात्रा का विधान करने वाली अर्थात् पैदा (सृष्टि) करने वाली पालन और संहार करने वाली। अथवा लोक जो संसार है इसमें यात्रा द्वारा आती जाती रहती है। भक्तों की पुकार पर आती रहती है। अपना काम करके चली जाती है। अथवा मनुष्यों में माया ममता, रागद्वेष, प्रवृत्ति-निवृत्ति आदि परस्पर विरोधी भावनाओं को जगाकर लोक का प्रशासन चलाती है।

जीवात्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा, निर्मलात्मा, शुद्धात्मा, ज्ञानात्मा, महात्मा तथा भूतात्मा आठ आत्मा हैं। उमा, सुकेशी, अपर्णा, शिव, स्वाहा, दिति, दीक्षा और रोहिणी ये सूर्य, जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु, आकाश, ब्रह्मा, साधक और चन्द्रमा ये आठ जिनकी देह हैं, उनकी पत्नियों का नाम है, ऐसा विष्णु पुराण में उल्लेख है, तथा उनके पुत्र है- शनि, शुक्र (वीनस), लोहितांग, मनोजव, स्कंद, स्वर्ग, सन्तान और बुद्ध। समयचक्र स्मृति के अनुसार ये हैं "गणिका, सौन्दिका, वैवर्ती, राजकी, तक्रकारी, कर्मरी, मतंगी और पुंश्चली।

६६५. एकाकिनी

अकेली। वह एकमात्र है जो सब कुछ करने वाली है। सृष्टि,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
स्थिति और संहार करने वाली वह एक ही शक्ति है। भक्त भी अकेला रहकर ही उपासना करने में आनंद मानता है। ऐसा श्रीमद्भागवत में कहा है- "वासो बहूनांकलहोभवेद्वार्ताद्वियोरपि, एकएवचरेत्तस्मात्कुमार्याइव कंकण:'' गीता में "विविक्त सेवी '' एकान्त में रहने वाली भक्तों को भी एकान्त में प्राप्त होने वाली। देवी पुराण में भी "एकेन लोकान् ग्रसति, एकैव स्थापयत्यपि, एकैव सृजते विश्वं तस्मादेकाकिनी मता'' कहा है।

६६६. भूमरूपा

परम सुख देने वाली। भूमा जिज्ञासा को भी कहा जाता है। भूमा ब्रह्म रूपा भी है। ऐसा वेदान्त सूत्र में उल्लेख है।

६६७. निर्द्वैता

द्वैतभाव से रहित। गुरुदेवात्मानंए एकीकृत्य अहं देवी नचान्योस्ति ब्रह्मैवाहंनशोकभाक् भूमा शब्द से भी दो नामों का भान होता है भू और मा भू देवी जो लौकिक सत्ता की अधिष्ठात्री है, तथा मा श्रीमाता और वह अलौकिक सत्ता की अधिष्ठात्री है और परमार्थ देने वाली है।

६६८. द्वैतवर्जिता

दूसरे से वर्जित। वह एक ही है। दूसरा कोई नहीं है, जैसा भगवती ने स्वयं कहा "एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा-दुर्गासप्तशती। क्योंकि वह जीवात्मा और परमात्मा दोनों ही है अत: उसे अलग-अलग नहीं कहा जा सकता। वस्तुत: वह एक ही है द्वैत नहीं। शंकराचार्य ने भी अद्वैतवाद का प्रतिपादन किया है। कि जो मनुष्य मरणशील है, उसमें ही अमर आत्मा विद्यमान है, देरी केवल ज्ञान के यानी प्रकाश के होने की है. जिससे इसे 'द्वैत'' के भ्रम को तोड़ा जा सकता है।

६६९. अन्नदा

अन्न देने वाली। इसी का दूसरा नाम अन्नपूर्णा है। ब्रह्म का कार्य प्राणियों को अन्न देना है। ब्रह्म-स्वरूपिणी वह अन्नदाता है। पृथ्वी देवी से अन्न, वस्त्र, रत्न आदि पैदा होते हैं। अन्नदा ऐसा श्रुति कहती है। 'येअन्नं ब्रह्मोपासते'' तैत्तिरीयोपनिषद् का वाक्य है। भगवती अन्नपूर्णा है।

६७०. वसुदा

धन देने वाली। धन अनेक प्रकार के होते हैं। सोना, चांदी,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
जवाहरात आदि से गोधन, हाथी, घोड़ा या पुत्र-पौत्रादि परिवार भी धन माना गया है। सबको वसुधा में यानी लोक में दौलत देकर उन्हें प्रसन्न करने वाली है।

६७१. वृद्धा

संसार को बढ़ाने वाली। सबकी वृद्धि करने वाली। वृद्धि का अर्थ बढ़ाना ही है। वृद्धा ज्येष्ठा यानी आद्या को भी कहते हैं। वास्तव में अन्न ही ब्रह्म है तथा समस्त चराचर में अन्न व्याप्त है, ब्रह्म व्याप्त है।

अन्न ही ब्रह्म है, अन्न प्रत्येक प्राणी में किसी न किसी रूप में होता है, जिससे वह जीवित रहता है, तो ब्रह्म का अंश सर्वव्याप्त हुआ।

६७२. ब्रह्मात्मैक्यस्वरूपिणी

एक अद्वितीय ब्रह्म रूप वाली। एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म- अर्थात् ब्रह्म एक ही है। अथवा जीव और ब्रह्म की एकता या आत्मा पर परमात्मा की एकता हंस-मंत्र स्वरूपिणी। जीव स्मरण करता है, मैं वह हूं अर्थात् ईश्वर एवं मैं एक हूं। एक ही सबका स्वामी या मालिक है, उसे ही कोई ईश्वर और कोई कुछ और कहता है। कोई माता पिता को ईश्वर और कोई घर आए अतिथि को ईश्वर मानता है। सबमें वह एक ही विद्यमान है। नाम और स्वरूप का ही अन्तर है। परमतत्त्व तो सबमें एक ही है।

६७३. बृहती

महान् श्रेष्ठ अथवा बृहती छन्द भी है। गीता में "वृहत्साम तथा सम्नाम्" है। बृहती को बढ़ना भी कहते हैं। ब्रह्म-आनंद जितना मनन करो, उतना बढ़ता जाता है। ३६ अक्षरों का एक छन्द है।

६७४. ब्राह्मणी

ब्रह्म को ब्रह्म ही जानता है। अर्थात् ब्राह्मणी ही उसको जानने वाली है। "ब्रह्म जानातिब्राह्मण।" ब्रह्म को जानने वालों को ब्राह्मणी का ही सहारा होता है। ब्राह्मण की पत्नी को ब्राह्मणी कहते हैं। कई उपनिषदों के अनुसार शंकर ब्राह्मण हैं, जिन्हें जानने वाला और कोई नहीं बल्कि ब्राह्मणी ही है।

६७५. ब्राह्मी

ब्रह्म की शक्ति। ब्रह्म ईश्वर है। परमात्मा है। सर्वेश्वर है। अनेक ब्रह्माण्डों को पैदा करके फिर उनका पालन-पोषण करता है। फिर

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
उसे स्वयं में समाहित कर लेता है। वैसे ही शक्तिवान् ब्रह्म एक होते हुए भी शक्ति शक्तिवान् लीला करने को एक से दो प्रतीत होते हैं। जैसे समुद्र और समुद्र की लहरें अलग नहीं, वे अलग न होते हुए भी अलग नामों सें जानी जाती हैं। ब्रंह्मज्ञान की मूर्ति ब्राह्मी जीवात्मा को चैतन्य पथ पंर अग्रसर करती है।

६७६. ब्रह्मानंदा

ब्रह्मानंद में मग्न रहने वाली। ब्रह्म ही जिसका आनंद है। ये आनंद ही अनादि अनंत है। और जो तुच्छ विषयानंद है, वह नाशवान् है।

६७७. बलिप्रिया

पूजा का एक प्रयोग है बलि, जो वाममार्ग द्वारा आराधना करने वाले साधक करते हैं। अर्थात् बलि जिसको प्रिय है। भगवती त्रिगुणात्मक है, उसे तम यानी अंधकार दूसरे अर्थ में काम, क्रोध, लोभ, मोह, अभिमान रूपी पशु की बलि ही प्रिय है। बलिदान करने के लिये वाममार्ग में तलवार की आवश्यकता होती है, दक्षिण मार्ग में वह तलवार है ज्ञान की। बलि का विधान प्रत्येक यज्ञ में होता है, इससे ही पूर्णाहुति होती है। श्रीमद्भागवत् (१० स्क० ५०) में श्रीकृष्ण ने कहा है "गिरये दीयतां बलिः'' अर्थात् शरणागत ही स्वार्त्मबलि है।

"मोहन जागि हो बलि गई''-एक ब्रज काव्य से। बलि जाना यानी वारी जाना या न्यौछावर होना है। हम किस पशु की बलि देने को लायें। जब हम ही अपनी बलि स्वयं चढ़ा रहे हैं। उस बलि को भगवती प्रेम से ग्रहण करती है। यहां श्रीमाता का नाम "बलिप्रिया'' है। कहते हैं भगवान् गर्वाहारी है। वह गर्व का ही आहार करता है, भगवती उसकी शक्ति है वह अपनी शक्ति से तम आदि को बलि ही पसंद करती है, अतः उसे बलिप्रिया कहा है। यहां साधक स्वयं को ईश्वर में खो देता है और उसमें समा जाता है- वह कहीं जाता नहीं परन्तु उसमें खो कर ही उसे पा जाता है। 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा''- ईशावास्य उपनिषद। कुछ खो करके ही कुछ पाया जा सकता है। प्रेम की महिमा में भी ऐसा है । "यह तो घर है प्रेम का खाला का घर नाहिं, सीस उतारे भुई धरे, तब आवे घर माहिं।'' त्याग के बिना तो भोग भी संभव नहीं है। हालांकि त्याग और भोग विरोधाभासी शब्द हैं। तो क्या त्यागें, वह तम आदिक ही, उसकी ही बलि भगवती को प्रिय है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

६७८. भाषारूपा

जैसे प्राणियों के रूप अलग हैं, वैसे ही उनकी वाणी भी अलग है तथा भाषा भी अलग है। स्वभावत: एक ही बात को अलग-अलग व्यक्ति अपने ही शब्दों में कह सकता है। देश-देशानतरों की भाषा अलग है तथा पशु-पक्षियों की भी भाषा अलग है। शास्त्रों में "शब्द ब्रह्म'' कहा है। भाषा भी ब्रह्म है और भगवती भाषा-रूपा ही है। सरस्वती की मूर्ति भी भाषा रूपा है। उसी के दिये हुए शब्दों से हम उसी की स्तुति करते हैं।- त्वदीयाभिर्वाग्भि: तव जननि वाचा स्तुतिरियं। हे माता, तेरी ही दी हुई वाणी से मैं तेरी स्तुति कर रहा हूं। भगवती सर्वव्यापी है। वस्तुत: आराधक भी वही है और उसकी भाषा भी वही है।

६७९. बृहत्सेना

बड़ी है जिसकी सेना। यह कौनसी सेना है जो चतुरंगिणी है-पृथ्वी, आकाश, जल, व्योम, लोक सर्वत्र जिसकी सेना है उसकी शक्ति फैली हुई है। प्राणी मात्र उसकी सेना है। जैसे सेना को आज्ञा दे या जिस सिपाही को आज्ञा दे वह वैसे ही करने लगता है। और जिसकी आज्ञा से ये सेना चलती है उसे ही बृहत्सेना कहते हैं।

एक अर्थ में डाकिनी, राकिनी, साकिनी आदि ६४ योगिनी ही सैनिकों का स्थल है।

६८०. भावाभावविवर्जिता

भाव और अभाव से रहित। जो सर्वत्र है, इसलिये कहीं भी कभी भी अभाव नहीं है। भाषा ही को लें इसका क्या मोल है अर्थात् बोलो तो मोल रहित है और न बोलो तो भी वह मोल रहित है। भाव अभाव या माधुर्य और मान अथवा व्यक्त या अव्यक्त से परे जो मधुमयी की भाव-भूमिका है, इस पर भगवती का एकाधिपत्य चलता है।

६८१. सुखाराध्या

सुख से आराधन करने योग्य। कायं-क्लेश के बिना जिसकी सुखपूर्वक आराधना की जा सकती हो। कूर्म-पुराण में भगवान ने हिमवान को सुख पूर्वक आराधन करने का उपाय बताया है, क्योंकि बिरले ही उसके आन्तरिक तत्व का ध्यान कर सकते हैं। आराधना सुख पूर्वक हो "सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:...'' यही भगवत् प्राप्ति का सबसे सरल उपाय है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

६८२. शुभकरी

सबका शुभ करने वाली। वह किसी का बुरा नहीं करती। माता अपने बालक का बुरा होने ही नहीं देती। सबका भला करती है, चाहे वह उसका आराधक हो अथवा न हो। सुख की भावना से ही शुभ मिलता है।

६८३. शोभनासुलभागतिः

शोभायमान। सुन्दर। शोभायुक्त। जिसकी शोभा-सौन्दर्य संसार में भी दीखती है। सारा संसार सौन्दर्य पर आसक्त होता है। चाहे वह मनुष्य हो चाहे कुछ और वस्तु। सत्यं शिवं सुन्दरम् सबमें व्याप्त है।

जिसकी आराधना से दुर्गति नहीं, सद्गति ही सुलभ है। जिसकी उपासना से अच्छा ही अच्छा होता हो। अथवा जिसकी आराधना बड़ी ही सरल हो। तथा गति यानी उसके परिणाम, ज्ञान या मात्रा।

शोभना तथा "असुलभा गति" ब्रह्मपुराणमें त्रिशती में है कि जो इन पंचदशी के मंत्रों को धारण करता है, उसके लिये वह असुलभ यानी दुर्लभ गति देती है, जहां से वापस आना असंभव है। उस आराधक को पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता। क्योंकि वह सुखकरी और शुभकरी है ऐसी भावना से जो आराधक योग की राह पकड़ लेता है तो वह परमेश्वरी के रूप में अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है।

६८४. राजराजेश्वरी

राजाओं के जो राजा हैं उनकी ईश्वरी। जैसे स्वर्ग के देवताओं के राजा इन्द्र, जल का कुबेर, जिन्हें लोकपाल कहा जाता है। विष्णु ब्रह्मादि की आराध्या। पृथ्वी के राजा तो पृथ्वी के बहुत छोटे हिस्से के राजा हैं परन्तु भगवती समस्त ब्रह्माण्ड जिसमें सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, तारे इत्यादि हैं, सबकी ईश्वरी है।

६८५. राज्यदायिनी

राज्य देने वाली। पृथ्वी का राजा तो बहुत छोटी बात है, वह तो वैकुण्ठ का साम्राज्य देती है, अपने भक्तों को। कैलास का राज्य देती है स्वभक्तों को। और ये सब राज्य तो क्षुद्र हो जाते हैं, जब कविता का बौद्धिक विलास राजाओं के मन को जीत लेता है। इससे भी बड़ा आध्यात्मिक साधना के बल पर प्राप्त किया गया सच्चा और सर्वश्रेष्ठ आनंद है। यह साम्राज्य सर्वोत्कृष्ट है और यह मानव देह से ही प्राप्त है, ऐसी दुर्लभ मानव देह का साम्राज्य देने वाली माता ही हो सकती है, वही राज्यदायिनी हो सकती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

६८६. राज्यवल्लभा

राज्य का आधिपत्य करने वाली और राजाओं की उपास्य देव। राज्य की स्वामिनी। पुनश्च, राज्य पार्थिव शरीर, पृथ्वी के एक टुकड़े का क्षणभंगुर राज्य अथवा ब्रह्माण्ड का साम्राज्य। या वैकुण्ठ का राज्य अथवा सर्वोत्कृष्ट आध्यात्मिक आनंद का अखंड राज्य। माता सभी राज्यों की वल्लभा है।

६८७. राजत्कृपा

जिसकी मूर्ति कृपामय है। साक्षात् कृपा विराजमान है जैसे कृपावती या दयावती। वह अपने भक्तों पर कृपा बरसाने के लिये सदैव आतुर रहती है। मंगलमूर्ति मां जिस प्रकार अपने शिशु पर वात्सल्य की वर्षा करती रहती है, उसी प्रकार भगवती अपने कोमल हृदय से कृपा बरसाती है।

६८८. राजपीठनिवेशितनिजाश्रिता

राजपीठ यानी राजगद्दी पर अपने भक्तों को आसीन करने वाली। भगवती जिस पर कृपा करे उसे वह सर्वशक्तिमान् और सम्पन्न बना देती है।

६८९. राज्यलक्ष्मी

राज्य में लक्ष्मी आप ही हैं। लक्ष्मी ही राज्य की शोभा होती है। लक्ष्मी एक है किन्तु उसके अनेक रूप हैं- राज्यलक्ष्मी, विजय-लक्ष्मी, लक्ष्मी-नारायण, गणेश-लक्ष्मी, महालक्ष्मी इत्यादि। संतानलक्ष्मी, वीरलक्ष्मी, ऐश्वर्य-लक्ष्मी, धान्य लक्ष्मी। इनके आठ प्रमुख रूप हैं। सभी में राजलक्ष्मी रूपान्तर से विद्यमान है।

६९०. कोशनाथा

भगवती खजानों की स्वामिनी है। कोश पांच माने जाते हैं- अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय तथा आनंदमय कोश। इनके अनन्तर और भी जो कोश हैं, स्वर्णकोश, रत्नकोश, शब्दों का अमरकोश ये सब कोशों की स्वामिनी है।

६९१. चतुरंगबलेश्वरी

चतुरंगिणी सेना की बल (ताकत) शक्ति। ये चारों अंग, हाथी, घोड़ा, रथ और पैदल सेनाओं की शक्ति इनकी सेनापति। अथवा युद्ध में जितने

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

भी साधन हैं उनकी अधिष्ठात्री। चार व्यूहों की ईश्वरी। इन्हें चतुरंगबला कहते हैं। वैष्णव, वासुदेव, शैव और शाक्त ये चार व्यूह हैं। मनुष्य के शरीर में भी चतुरंगिणी सेना का बल है जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय अवस्थाएं हैं, इनमें उसका यही बल काम आता है।

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

६९२. साम्राज्यदायिनी

अपने उपासकों को सम्राट बनाने वाली। जो राजसूय यज्ञ करे या माता जिसे अपनी कृपा दे। साधक की श्रद्धा और प्रेम, निष्ठा इसको साम्राज्य की भला क्या लालसा, वह तो क्षणभंगुर है। भक्त को भगवती की मधुर मुस्कान की इच्छा हो सकती है, उसे साम्राज्य, मोक्ष से क्या लेना "न मोक्षस्याकांक्षा''।

६९३. सत्यसन्धा

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म- जिसकी सन्धन शक्ति है। सत्य ही ईश्वर का स्वरूप है। सारे ब्रह्माण्डों को सत्य के द्वारा धारण करती है। और सत्य के द्वारा ही जिसकी प्राप्ति होती है। जब तक झूठ, छल, कपट रहता है, तब तक वह नहीं मिल सकती। जैसा कि रामायण में भी श्रीराम ने कहा है "निर्मल मन जन जो मोहि पावा, मोहि कपट छल छिद्र न भावा।'' वह अपने शब्दों की पक्की है और सत्य से अपने आप को उसने बांध रखा है। सत्य के बल पर ही अपना शासन चलाती रहती है। मनुष्य कितनी भी झूठ बोल ले, परन्तु मन में वह जानता ही है कि वह झूठ बोल रहा है, सत्य क्या है?

६९४. सागर-मेखला

समुद्र जिसकी मेखला जैसे सोने-चांदी, जवाहरात के गहने वैसे ही कमर पर लिपटने वाली कंधिनी या तगड़ी जो है, वह समुद्र की तगड़ी, उसे आभूषण के रूप में धारण किये हुए है "समुद्रवसने देवि, पर्वतस्तन मण्डले. ..'' पृथ्वी के चारों ओर समुद्र का वस्त्र ही लिपटा है।

६९५. दीक्षिता

दीक्षा देने वाली अथवा स्वयं दीक्षिता हैं। जिसके द्वारा दीक्षा दी गई। तंत्र में दीक्षा प्राप्ति के बिना किसी को दीक्षा देने का अधिकार नहीं है। भगवती को शिव जी ने ज्ञान दिया है, कहीं देवी ने शिव को ज्ञान दिया है। सबको सदाचार की दीक्षा देती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

६९६. दैत्यशमनी

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्रजा को सताने वाले या हिंसा करने वाले जो दैत्य हैं, उनका शमन करने वाली उनका अन्त करने वाली। भंडासुर दैत्य को मारने वाली। भगवती जिसे सदाचार की दीक्षा देती हैं उसकी आसुरी भावनाओं को पहले हरण् कर लेती हैं।

६९७. सर्वलोकवशंकरी

सारे विश्व और लोकों को अपने वश में रखने वाली। सब लोकों की स्वामिनी। लोकों की शासिका उनके पोषण करने के कारण है, वह उनका शोषण नहीं होने देती।

६९८. सर्वार्थदात्री

सब अर्थों और कामनाओं को देने वाली। ये धर्म, अर्थ, काम या मोक्ष ही हों या अन्य "यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्''

६९९. सावित्री

सावित्री सविता यानि प्रकाश करने वाली या प्रसव करने वाली या पैदा करने वाली। गायत्री को भी सावित्री कहते हैं। इसे सौर ऊर्जा भी कह सकते हैं। सूर्य के ही तेज से पृथ्वी पर जीवन संभव है, पृथ्वी का जल वाष्प बन कर बादल बन कर बरसता है, जिससे जीवन मिलता है। ब्रह्मा की पत्नी ब्रह्माणी भी सावित्री है। वेदमाता गायंत्री भी सावित्री है। भारद्वाज-स्मृति के अनुसार सूर्य को आलोक प्रदान करने वाली या तेज प्रदान करने वाली सावित्री हैं, जिससे तेज का प्रवाह बहे, उसे सावित्री कहते हैं। पुष्करपीठ में जिस देवी की पूजा हो।

७००. सच्चिदानन्दरूपिणी

सत्, चित् और आनन्द रूप वाली। सत्य रूप श्रीजी, जिससे यह विश्व स्थित है, चित् चैतन्य जिससे सूर्य, चन्द्र आदि तेजवान हैं जगत में इससे सब चलायमान है तथा आनंद सबका लक्ष्य है। संसार भर के मंनुष्य जीव जन्तु सभी आनंद की खोज में भटकते रहते हैं। किंसी को खाने में किसी को अन्य भोगों के भोगने में आनंद आता है और कुछ जो भगवद् भक्त हैं, उन्हें परमानन्द ही अच्छा लगता है।

यहां आठवीं "भोगदा'' नाम की कला का समापन होता है।

इन तीनों को वेदांती अस्ति, भाति और प्रियम् कहते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

७०१. देशकालापरिच्छिन्ना

देश और काल से परिच्छेद नहीं होता है। देश काल जिसका अंग है। 'देशत: कालतश्चापि, ह्यनन्तो वस्तुत: स्मृत:।

वह सार्वदेशिक और सार्वकालिक है। योगसूत्र में भी कहा है कि उसे प्राचीन समय में भी कभी परिभाषित नहीं किया जा सका था। अत: वही गुरु है। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि उसका प्रादुर्भाव अमुक समय हुआ या वह अमुक स्थान पर ही है, अमुक पर नहीं, क्योंकि वह देश-काल-अपरिच्छिन्ना है।

७०२. सर्वगा

सब जगह जाने वाली। सब जगह ही उसकी गति है। भक्त जहां भी उन्हें बुलाते हैं, वहीं पहुंच जाती है। सार्वदेशिक। वाराहपुराण में जब देवी श्वेतगिरि पर सृष्टि शक्ति के रूप में तपस्या कर रही थी, तब ब्रह्मा ने कहा कि वरदान मांगो। देवी बोली कि मैं एक स्थान पर नहीं रह सकती, अत: यह वरदान मांगती हूं कि सब स्थानों पर एक ही समय में स्थित रहूं अर्थात् सर्वव्यापी होऊं। ब्रह्मा ने तथास्तु कहा और और कहा कि तुम सभी रूपों में सर्वव्यापी होओगी। सब रूपों का अर्थ सभी पदार्थों से हैं, अत: वह सबमें विद्यमान है और इसलिये वह सब स्थानों में विचरणशील है।

७०३. सर्वमोहिनी

सबको मोहित करने वाली। वह तो त्रैलोक्यमोहन चक्र-स्वामिनी है। सारा संसार उसने अपने रूपों से मोहित कर रखा है। शिव को उसी ने मोहित किया। सागर-मंथन में उसने सब सुर-असुरों को मोहित कर लिया। संसार मात्र उसकी छाया से मोहित है। जैसे प्रकाश की और सब प्राणियों का ध्यान स्वभावत: आकृष्ट होता है, पेड़-पौधे भी प्रकाश की ओर बढ़ते हैं। ऐसा ही सभी जीव और पदार्थों में आकर्षण होता है। पृथ्वी सूर्य के चारों और परिक्रमा करती रहती है, चन्द्रमा पृथ्वी की। सारा नक्षत्र-मंडल एक-दूसरे से आकर्षित है। पृथ्वी में गुरुत्वाकर्षण शक्ति है। मनुष्य रूप में जीव मनुष्य के स्वरूप से ही मोहित है, प्रकृति की बनावट, लक्ष्मी से, विंभिन्न कलाओं से ही मोहित है।

७०४. सरस्वती

यह भगवती का ज्ञान स्वरूप है। वाणी की अधिष्ठात्री देवी है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

ये ही महाविद्या-भारती-संगीत की अधिष्ठात्री है। वीणा पुस्तक धारिणी है।
Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
जहां वह अज्ञान से ज्ञान को आवृत कर देने वाली मोहिनी है वहीं यह मोह का परदा हटाकर सत्य को प्रकाशित करने वाली भी है सरस्वती रूप से। ज्ञान के द्वारा ही विभिन्न वस्तुओं, स्थान, ऋतु, गंध, राग, आवाज, लय, संगीत और विज्ञान आदि के भेदों का आभास होता है। धौम्य के अनुसार सरस्वती दो वर्ष की कन्या का नाम है। भारद्वाज-स्मृति के अनुसार जिह्वा पर यह भाषण की शक्ति के रूप में विद्यमान हैं।

७०५. शास्त्रमयी

सद्शास्त्रों में जो रहती है। शास्त्रों के द्वारा जानी जाती है। शास्त्र ही जिसका शरीर हैं। शास्त्र ज्ञान देता है, इसीलिये वह ज्ञानमयी है। ब्रह्मपुराण के अनुसार शक्ति ने अपनी श्वास से चारों वेद बनाए, अनेक महान मंत्र उसके अभिमान से पैदा हुए,उसकी मधुर वाणी से कविता और संगीत, कलाओं की रचना हुई। उसकी जिह्वा से सरस्वती पैदा हुई। उपनिषद उसकी ठोडी से तथा गले के अग्रभाग से मीमांसा, न्याय-शास्त्र, पुराण, धर्मशास्त्र पैदा हुए हैं। गले के मध्य भाग से औषधि विज्ञान, धनुर्विद्या, नीचे के हिस्से से चौंसठ विद्या, विज्ञान तथा शेष अंगों से अन्य तंत्र तथा स्कन्ध से प्रेम का विज्ञान जन्मा।

७०६. गुहाम्बा

गुह स्कन्दकुमार का नाम है उनकी माता। गुहा अथवा गुफा में रहने वाली जैसे वैष्णों देवी गुफा में विराजमान है। अथवा हृदय रूपी गुफा में रहने वाली। गुह्यता या गोपनीयता माता की प्रकृति है। तारक दैत्य को मारने को देवताओं ने प्रार्थना की तो शिव-शक्ति के स्नेह का तेज निकला। इसके रोके जाने से शिव क्रोधित हुए और शाप दिया तब उनके वीर्य को गंगा और सरकण्डे के खेत ने संभाला और इस प्रकार गुह यानी स्कन्द का जन्म हुआ।

७०७. गुह्यरूपिणी

गुप्त रहने वाली। हृदय भी गुप्त स्थान है, जिसे कोई दूसरा देख नहीं सकता। छुपा कर रखने योग्य क्योंकि धन को छुपाकर ही रखा जाता है। जिसमें भगवती तो महाधन-श्री शुकव्यास प्रकट नहिं भाख्यौ जान सार को सार, परमधन राधा नाम अधार।'' कूर्मपुराण में देवी के तेज का वर्णन करते हुए बताया है कि उपनिषदों में वह "गुह्योपनिषद'' है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७०८. सर्वोपाधिविनिर्मुक्ता

सब उपाधियों से मुक्त, वह नित्य-मुक्त-स्वरूपा है। किसी के बन्धन में नहीं है। किसी प्रकार की उपाधि से अलग है। वह सब कुछ है और कुछ नहीं। वह सभी सीमाओं से मुक्त है। न उसे कोई स्वार्थ या लालसा है, अतः कोई लौकिक उपाधि परिभाषित नहीं कर सकती है।

७०९. सदाशिवपतिव्रता

सदाशिव की पतिव्रता पत्नी। इसका भाव यही है कि शिव शक्ति से अलग नहीं है। शक्ति सदा शिव में निवास करती है। प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत् सदा ही शिव में लीन रहने वाली। इन्हीं की अंशावतार है- अनुसूया, सीता, सावित्री आदि, जिन्होंने बहुत कठिन तप करके अपने पतिव्रत धर्म की रक्षा की। इनके सतीत्व से प्रभावित होकर ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव को पुत्र बनना पड़ा। वह सदाशिव की अनन्य अनुरागिनी है। शिव यानी भलाई, अर्थात् वह सदैव भलाई करने वाली है सदाशिव को परमंगुरु माना गया है।

७१०. सम्प्रदायेश्वरी

सम्प्रदाय की ईश्वरी। श्री विद्या के ज्ञानार्जन की गुरु परंपरा है और भगवती इसकी अधिष्ठात्री है उससे दिव्यौघ ब्रह्मा, विष्णु, महेश ने तथा उनसे सिद्धौध-वशिष्ठ तथा सनक, सनन्दन को यह विद्या मिली, इस तरह व्यास से वर्तमान तक यह चल रही है। इसे परंपरा या संप्रदाय भी कहा है। शिष्य को दीक्षित करना, ज्ञान देकर अपनी शक्ति के द्वारा संपद्राय में आने की आज्ञा देकर मंत्र दीक्षा देना। "योगिनीहृदय'' में पंचदशी को संप्रदाय कहा है। शिव योग्य हैं और शिवा योग्यता। दत्तात्रेय संहिता और वरिवस्यारहस्य में भी कादि विद्या को ही संप्रदाय कहा है, जिसकी ईश्वरी या अधिष्ठात्री है।

७११. साध्वी

साधुता, पतिव्रता, या जो साधु स्वभाव की हो उसे साध्वी कहा जाता है। जिसका स्वभाव भी सुन्दर हो, वह शांत रहने वाली हो। वह इस संप्रदाय की अधिष्ठात्री होने के नाते इसकी भलीभांति देखभाल करती है। अतः इसे साध्वी कहा गया है।

७१२. ई

"ई'' एक रहयस्मय अक्षर है। यह शक्त्यात्मक है। श्रीसूक्त में

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
इसे "तां पद्मिनीमीम् शरणमहं प्रपद्ये" में पद्मिनीम् ईम कहा है। जैसे ओम् कार शिव वाचक है ई कामकला वाचक है। कुछ विद्वान इसकी विभक्ति करते हैं- अ और ई में। अ शिव वाचक और ई विष्णुवाचक है, ब्रह्माण्ड की रचना का पार्थिव कारण है। ज्ञानार्णव में यह अक्षर लाल रंग का है। विष्णुपुराण, कामकलाविलास, तथा शंकराचार्यकृत सौंदर्यलहरी में इसका वर्णन है।

७१३. गुरुमंडलरूपिणी

इस परम रहस्यमयविद्या को धारण करने वाले गुरुओं के समूह को गुरुमंडल कहा जाता है। भगवती इनकी प्रेरक शक्ति है। योगिनीहृदय के अनुसार यह विद्या निर्बाध रूप से कानों के द्वारा चली आ रही है। गुरु मंडल में माता प्रथम गुरु है, यह निर्विवाद सत्य है, परमगुरु आदि गुरु है परमेष्ठी गुरु अथवा श्रीनाथादि गुरुत्रयं "वन्दे गुरु मण्डलम्" अथवा

सदाशिवादिमारभ्यभैरवाचार्य मध्यगाम्।
अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम्।"

गुरु दीक्षा देने वाला ही है, किन्तु माता पिता आदि गुरु हैं तत्पश्चात् ज्ञान देने वाला गुरु प्रकाश पुंज है, वह अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करता है, वही ब्रह्मज्ञान कराता है।

७१४. कुलोत्तीर्णा

कुल यहां इन्द्रियों को कहा है। अर्थात् इंद्रियों से न जानने योग्य जैसे नेत्रों को नेत्रों से नहीं देखा जा सकता। गीता में श्रीकृष्ण के रूप में भगवती ने अर्जुन से कहा है- दिव्यं ददामि ते चक्षु पश्य मे योगमीश्वरम्। अर्थात् तू आंखों से मुझे नहीं देख सकता। दिव्य चक्षु से ही देख सकता है। दिव्य आंख ज्ञानरूपी चक्षु है जो कि गुरु द्वारा ही खोली जा सकती है।

ज्ञान के समूह को ही कुल कहा है। दूसरी ओर विभिन्न अंगों से बने इस शरीर को तंत्रशास्त्र में कुल कहा है। वह इस कुल में रहते हुए भी इससे परे है, वह निर्लिप्त है और इस कुल का उद्धार करती है, अंतः कुलोत्तीर्णा कहा है।

७१५. भगाराध्या

भग अर्थात् सूर्य। सूर्य में जिसकी आराधना होती है। यथाः बालांबालादित्य-मण्डल मध्यथां" गायत्री ध्यान में आता है। भगवती का ध्यान प्रातः कालीन सूर्य में किया जाता है।

ऋग्वेद में मंत्र है "सौर सूक्त" अथवा भग द्वारा उपासित।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

भग एवं भगवान भगवत्त्वं प्रकाश। दूसरा भग एकार, वाग्भव कूट द्वारा आराध्य।

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७१६. माया

प्रत्येक धर्म में प्रकाश की किसी न किसी रूप में आराधना होती है। मनुष्य आराधना तभी कर सकता है, जब माया की छाया से दूर हो। यह माया वह महामाया है, जिसके भ्रमजाल को मानव सत्य मान बैठा है। और भूलभूलैयां में भटक रहा है। यह एक शक्तिशाली ऊर्जा है, शांडिल्यसूत्र में इस शक्ति को ईश्वर की शक्ति कहा है। यही शक्ति विश्व का निर्माण करती, पालन करती और अपने में समेटती रहती है।

इसके अनेक अर्थ हैं, इसको जानना असंभव है। वेद भी इसे नेति-नेति कह कर चुप हो जाते हैं। माया का स्वरूप वायुपुराण में वर्णन किया है। "विचित्र कार्य करणा अचिन्तित फलप्रदा। स्वप्नेन्द्र जालवल्लोके माया तेन प्रकीर्तिता।" वह अत्यन्त विचित्र कार्य करती रहती है।

गीता में "अहंकार विमूढात्मा कर्ताहमितिमन्यते।" मनुष्य सौन्दर्य, पार्थिव वैभव या ज्ञान के कारण ही स्वयं को प्रतिष्ठित समझता है। माया के आवरण के कारण ही मानव ज्ञान, प्रकाश और सत्य से दूर रहता है।

देवी पुराण के अनुसार यह एक शक्तिशाली अस्त्र है। वाराहपुराण में भी विष्णु पृथ्वी से कहते हैं कि ये मेरी ही माया है (शक्ति है) जिससे बादल पानी बरसाते हैं, मेरी ही माया से चन्द्रमा घटता बढ़ता रहता है। यह शक्ति भ्रमित करने वाली मेरी माया ही है।

७१७. मधुमती

मधुमय जिनका स्वरूप है। मधु शहद को भी कहते हैं। मधु से ज्यादा कोई मीठी वस्तु नहीं हो सकती। इसी प्रकार उनके सौन्दर्य का माधुर्य इतना मीठा है कि उससे बढ़कर दूसरा कोई है ही नहीं।

दूसरे अर्थ में मधुमती नाम की एक विद्या भी है। किन्तु यहां परमानन्द पान के महामिष्ट को प्राप्तकर फिर कुछ मीठा रस शेष नहीं रह जाता। योगसूत्र में यह तारक बुद्धि की स्थिति में लाने वाली है।

उपनिषदों में सूर्य को देवताओं का मधु कहा गया है और वह इसमें ही प्रतिष्ठित है। योगसूत्र में चार प्रकार के योगी बताए हैं, इनमें से चौथा अतिक्रान्त भावना वाला होता है। वह ध्यानावस्था में सात भूमिकाओं में बदल सकता है सातवीं भूमिका मधुमती होती है। यह वह भावना है जब मनुष्य माया

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

से परे जाकर अपने-पराये को भूल कर ज्ञान की पराकाष्ठा में पहुंच जाता है। मधुमती नाम की नदी भी है।

७१८. मही

मही नाम पृथ्वी का है, अत: पृथ्वी उसी शक्ति का एक विशाल स्थूल रूप है। इसीलिये इसे पृथ्वी माता कहते हैं। जैसे मां उत्पन्न करती है फिर अपने आंचल में पालती है, वैसे ही जीवमात्र इस मही की ही संतान हैं, वही सबको अपनी गोद में पालती है अन्न, दूध, फल इत्यादि देकर उनके पेटों को भरती है। इसीलिये प्रात:काल उठकर यह प्रार्थना बोली जाती है।

७१९. गणाम्बा

गणों की माता। गण देवगण, दैत्यगण, मनुष्य गण आदि सभी गणों की माता अथवा गणेश जी की माता। गण समूह का नाम है। गण हर जीव मात्र के साथ लग जाता है।

७२०. गुह्यकाराध्या

गुह्यक स्वर्ग में रहते हैं, देवताओं का ही भेद है। उनकी उपास्य। गुह्य नाम गुप्त रूप से उपासना करना भी है कि एकान्त में गुप्त रूप से उपासना की जाये। इसे मूलाधार भी कहते हैं। मानव शरीर के गुहा नाम के गुप्त स्थान में यह रहस्यमय शक्ति अतिसूक्ष्म रूप में विद्यमान हैं।

७२१. कोमलांगी

यह सुकुमार अंग वाली और अत्यन्त कोमल है। जैसे कमल में कोमलता होती है वही मुख कमल, हस्त कमल, चरण कमल आदि।

७२२. गुरुप्रिया

गुरु की प्रिया या गुरुपत्नी भगवान् सदाशिव आदि गुरु हैं, उनकी प्रिया। गुरु की शक्ति उनकी विद्या, उनका ज्ञान ही गुरुप्रिया है।

७२३. स्वतन्त्रा

वह सब तन्त्रों में रहते हुए सबसे स्वतंत्र है। "स्वतंत्रं ते तंत्रं" स्व यानी अपना आप, यह परमशिव है, तंत्र यानी आश्रय, आश्रित। संसार में जो तंत्र है उसमें सब एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं व एक दूसरे पर रूपान्तर से

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

श्रित हैं। स्वतंत्र तो परमेश्वर ही है। कालिका पुराण में उत्तर पूर्व हिमालय पर्वत में भगवान शंकर भगवती के साथ रास क्रीड़ा करते हैं, उसकी गोद में रहते हुए।

७२४. सर्वतन्त्रेशी

सब तन्त्रों की ईश्वरी। सभी तंत्र भगवती की ओर इंगित करते हैं। सभी तन्त्रों में श्रीविद्या का प्रतिपादन है। इसलिये सर्व तन्त्रों की ईश्वरी। तंत्र चौंसठ होते हैं।

७२५. दक्षिणामूर्तिरूपिणी

भगवान शिव दक्षिणामूर्ति हैं उनकी अर्धांगिनी होने से ये दक्षिणामूर्ति-रूपिणी है। जैसे पत्नी के नाम पर पति के नाम को जोड़ा जाता है- यथा विष्णु की पत्नी वैष्णवी। ब्रह्मा की ब्रह्माणी ऐसे ही दक्षिणामूर्ति की दक्षिणामूर्ति रूपिणी। दक्षिण दिशा की ओर मुख किये हुए बैठे शिव जो ब्रह्मा, विष्णु को अनुदेश, उपदेश कर रहे हैं और जिनके मंत्र तन्त्रों में विद्यमान हैं।

७२६. सनकादिसमाराध्या

सनक, सनन्दन, सनातन सनत्कुमारों द्वारा जिनकी आराधना की गई। ये श्री विद्या के उपासक हैं, इसीलिये इनकी गुरु परम्परा में गणना है। ब्रह्मपुराण के अनुसार उसकी कलाकारी अनादि है, समस्त चरित्र कारण और परिणाम के रूप में आपकी उपासना में लगे हैं।

७२७. शिवज्ञानप्रदायिनी

शिव, कल्याण, करने वाले, ज्ञान को देने वाली। अथवा शिव को ज्ञान देने वाली। शिव को अपनी ज्ञान शक्ति से ज्ञान प्राप्त होता है या विद्या प्राप्त होती है तभी तो वे विद्या और ज्ञान के अधिपति हैं। इसीलिये ये श्रीमद्भागवत के स्क० २ में हैं- "विद्याकामस्तु- गिरीशं" अर्थात् विद्या को कामना हो तो शिव की आराधना करे। वशिष्ठ पुराण में जिस तरह से कि गति से हवा का ज्ञान होता है, आग से गर्मी का ज्ञान, यह ज्ञान ही शिव है और यह भगवती की शक्ति के बिना नहीं होता।

सनक आदि ऋषियों को जब परमतत्व समझने में कठिनाई हो रही थी तब शिव सोलह की आयु के बालक का रूप धारणकर दक्षिण की ओर मुख कर मौन होकर बैठ गये, इससे ऋषियों की जिज्ञासा शांत हो गयी। परमेश्वरी की उपदेश की विधि ही यह है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७२८. चित्कला

चैतन्य शक्ति, जिससे सारा विश्व चलता है। मनुष्य चैतन्य शक्ति के बल पर ही कार्यरत है। जीव मात्र में चैतन्य शक्ति है। हाथ-पैर मन बुद्धि इन्द्रियों में चैतन्यशक्ति रहती है। चैतन्य-शून्य जीव मृत या मृत तुल्य होता है। गीता में "ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः चित्तेषु चित्कला नाम शक्तिः सर्वशरीरिणाम्।'' संसार में जीवमात्र में मेरा ही अंश है। पद्म पुराण में देवी के विभिन्न रूपों की व्याख्या करते हुए बताया है कि शरीरधारी जीवों के मस्तिष्क में जो ऊर्जा या शक्ति रहती है वह चित्कला है। अन्य कलाओं की तरह एक कला भी है यह।

७२९. आनन्दकलिका

आनन्द रूपी कली। यह आनन्दमयी कला है जोकि भक्त के हृदय में खिलकर पल्लवित हो जाती है। फिर वह आनंदमय गंध से भक्त के हृदय को आनन्द के सरोवर में पहुंचाती है, जहां दुख-शोक जरा-व्याधि नहीं पहुंच सकती। कला के बिना जीवन नीरस हो जाता है, कला आनंद का मार्ग है। कला का मूल कलिका है जब कली होती है तभी वह पुष्प बनती बनती है। भगवती मनुष्य के हृदय में आनन्द की कलिका के रूप में रहती है और जब मनुष्य आनन्दित होता है तो यह कली खिलती है।

७३०. प्रेमरूपा

रसमय हृदय में प्रेम यानी स्नेह पैदा होता है, इससे आनंद की प्राप्ति होती है। श्री मद्भागवत में अत्यन्त सुन्दर उदाहरण है- कृष्ण मथुरा छोड़ जब द्वारिका में चले गये तब विछोह से दुखित गोपियों की विरहाग्नि शांत करने को उन्होंने उद्धव जैसे ज्ञानी मित्र को भेजा। उनका ज्ञान गोपियों के प्रेमाश्रुओं में धुल गया। गोपियों ने तो कृष्ण को प्रेम से ही प्राप्त किया था। प्रेम एक मनः स्थिति एक भावना या संवेदना अथवा मनोविकार है- इसका विशद वर्णन हो सकता है परन्तु "ढाई आखर प्रेम को पढ़े सो पंडित होय'' इससे सूक्ष्म में समझना है कि प्रेम से ही प्रेम मिलता है। मानव-प्रेम भगवती की कृपा का विस्तार है।

७३१. प्रियंकरी

सबका प्रिय करने वाली। जो जिसको प्रिय है वह उसे प्राप्त करता है- उसे उसकी प्रिय वस्तु प्राप्त कराने वाली प्रियंकरी है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७३२. नामपारायणप्रीता

भगवती के नाम का पारायण करने वाले से भगवती सन्तुष्ट होती हैं। पारायण के भी कई भेद हैं- नाथ पा०, घटी पा०, नित्या०, तत्व पा०। पारायण का तात्पर्य पाठ करने से ही नहीं, अपितु उसकी गहराई जानने से है।

७३३. नन्दिविद्या

नन्दीश्वर ने जिस विद्या की उपासना करी है, वह श्री विद्या। भक्तिसूत्रों में इसे आनंद ही आनंद के अनुभव की विद्या कहा है।

७३४. नटेश्वरी

चिदम्बर के नटराज की पत्नी या उसका अनुसरण करने वाली नटिनी। आनंद में मस्त होकर नाचने वाली नटेश्वरी। अथवा नट का कार्य करने वाली। यह एक लीला है कि सृष्टि, पालन संहार करके संसार के प्राणियों को ऐसे नचाती है- जैसे कठपुतली हो।

७३५. मिथ्याजगदधिष्ठाना

सच्चे आनंद को प्राप्त कर लेने पर यह जगत मिथ्या लगने लगता है। फिर उसका सच्चिदानन्दमय स्वरूप, संसार को सौन्दर्य, प्रेम और आनंद का सत्य प्रतिभासित होने लगता है। यह एक बहुत गहन अर्थ वाला नाम है। श्रुति कहती है-"ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या'' ईश्वर या परमात्मा ही सत्य है। जगत तो झूठा है क्योंकि यदि जगत सत्य है, तो नष्ट क्यों होता है, परमात्मा सत्य है, तो अविनाशी है। यहां शंका होती है कि यह जगत भी तो ब्रह्म का ही रूप है क्योंकि ब्रह्म को संसार से अलग कहना ही गलत है। भेद करना गलत है। अद्वैतवाद ही सही है कि संसार में सब कुछ वही तो है। द्वैतवाद तो माया है जो अन्तर पैदा करती है आश्रय दाता और आश्रित में अन्तर पैदा करने की बुद्धि ही द्वैतवाद है। देवी भागवत में भी है कि सब कुछ मैं ही हूं मेरे अलावा कहीं कुछ नहीं-अहं ब्रह्मस्वरूपिणी....'' मिथ्या जगत, अधिष्ठ यानी आधार अन यानी जीवन। यानी उसका जीवन ब्रह्ममय है जिसके आधार पर सारा ब्रह्माण्ड है।

यह शंका-समाधान ब्रह्म-ज़िज्ञासा का रूप है। मानव ब्रह्म चिन्तन नें लगा रहे यही इसका तात्पर्य है। वेद भी नेति-नेति कह कर शांत हों जाते हैं तो मनुष्य भला उसकी महिमा कैसे जान सकता है? तत्वतः

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
श्रीमद्भागवत में कहा है-'येनकेन प्रकारेण भगवान् हरिरीश्वरः, श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च ध्येयःपूज्यश्च नित्यदा।''

७३६. मुक्तिदा

मुक्ति देने वाली। जब श्रीमाता की उपासना में प्राणी लग जाता है, तब ही उसका जीवन मुक्त हो जाता है। शिव पुराण में कहा है कि भूल से भी परमेश्वर का नाम लेने से शिव मुक्ति प्रदान कर देते हैं तो इससे अधिक क्या कहा जाये। ब्रह्म पुराण में भी आत्म ज्ञान को ही मुक्ति कहा है। पार्थिव शरीर में जब अपार्थिव आत्मतत्व पहचानते ही मनुष्य मुक्त हो जाता हैं, क्योंकि उसे सत्य का पता चल जाता है।

७३७. मुक्तिरूपिणी

वह शक्ति सब में रह कर भी सबसे अलग है। यही उसका मुक्ति का स्वरूप है। अविद्या के दूर किये जाने से अथवा पांचवी अवस्था में यानी ध्यानावस्थित होने से ही मुक्ति प्राप्त नहीं हो जाती अपितु स्वयं के प्रसन्न रहने से मुक्ति प्राप्त होती है।

७३८. लास्यप्रिया

लास्य यानी विलास-नृत्य, नृत्य नाचने को कहते हैं। भगवती को नाचना अच्छा लगता है, इसीलिए शंकर भगवान का प्रदोषकाल में ताण्डवं नृत्य देखकर भगवती प्रसन्न होती हैं और उसमें आनंद-अतिरेक में विभोर होकर भक्तों को अभीष्ट पद देती हैं। संसार भर में भगवती का लास्य पैदा हुआ है, जिसे प्राकृतिक सुषमा कह सकते हैं। वह चाहे प्रातः की लालिमा हो या पुष्पों का प्रस्फुरण अथवा वन में मयूर का नृत्य सब उसका ही लास्य है।

७३९. लयकरी

संगीत, नृत्य, वाद्य, ताल और लय मिलते जुलते हैं। चित्त की स्थिरता को भी लय कहते हैं। एक नाम गान लोलुपा है। संसार में भी एक लय है, सब अपनी-अपनी लय पर चल रहे हैं सूर्य, चन्द्र, धूप, छांव, रात, ऋतुएं सब संगीत के लय पर ही चल रही हैं।

७४०. लज्जा

लज्जा है रूप जिसका। लज्जा बीज भुवनेश्वरी के मन्त्र भी हैं। लज्जा के कारण मनुष्य बहुत से दुष्कर्मों से भी बचता है। स्त्री का रूप लज्जा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

है। लज्जा के कारण मनुष्य बुरे कर्म से बचता है। दुर्गा सप्तशती में भी "लज्जा रूपेण संस्थिता'' कहा है (मार्कण्डेय पुराण)।

७४१. रम्भादिवन्दिता

रंभा, उर्वशी, मेनका आदि अप्सराओं से पूजित, निषेवित। भगवती सर्वाकर्षिणी शक्ति है। वह अपनी शक्ति संसार में भी बिखेरती है, उक्त अप्सराओं में भी प्रचुर मात्रा में प्रदान की है। जिससे देवतागण उनसे आकृष्ट।

७४२. भव-दाव-सुधा-वृष्टि

भव यानी संसार रूपी दावानल अर्थात् तपे हुए या बेचैन लोगों पर सुधा यानी अमृत की वृष्टि करके शान्ति प्रदान करने वाली। एक अन्य अर्थ में भव नाम शिव का है जो कल्याण करने वाले हैं, भगवती वसुधा सम्पत्ति और मोक्ष देने वाली है। (भव=शिव, दा=देने वाली, वसु=सम्पत्ति, वसुधा, दा=देने वृष्टि=दोनों।) रूद्रयामल और मंगलराजस्व दोनों में है कि जहां सांसारिक सुख है वहां मोक्ष नहीं और जहां मोक्ष है वहां सांसारिक सुख नहीं, परन्तु भगवती के चरणों में दोनों ही सुलभ हैं।

७४३. पापारण्य-दवानला

जिस प्रकार से जंगल की आग दूर-दूर तक जंगलों को नष्ट करती चली जाती है, उसी प्रकार पाप रूपी जंगल के लिये भगवती दावानल के समान नष्ट करती चली जाती है। श्री राजराजेश्वरी के नाम से, ध्यान से, या जप से समस्त पाप भस्म होते चले जाते हैं। ब्रह्मपुराण में है कि हे देवेन्द्र ! यह परम रहस्य है, जिससे समस्त पाप तुरन्त नष्ट हो जाते हैं तथा श्रद्धा-भक्ति प्राप्त होती है कि स्नानोपरान्त गंगा जल में खड़े होकर एक हजार आठ बार पंचदशी के जाप करने तथा शक्ति के पूजन से सब पाप नष्ट होते हैं।

७४४. दौर्भाग्यतूलवातूला

दुर्भाग्य रूपी रुई को उड़ा कर सौभाग्य देने वाली है। क्योंकि वह तो प्रणत जन सौभाग्य की जननी है। भगवती के चरणों में समर्पित होते ही दुर्भाग्य इतनी जल्द दूर हो जाता है।

७४५. जराध्वांत-रविप्रभा

जरा यानी जर्जर बुढ़ापा दूर करके युवावस्था देने वाली। बुढ़ापे

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

रूपी अंधेरे को सूर्य के समान प्रकाश देने वाली। बुढ़ापे के कारण जो जीवन में अंधकार छा जाता है, उसे सूर्य की प्रभा के समान दूर करती है।

७४६. भाग्याब्धि-चन्द्रिका

भाग्य रूपी समुद्र को चन्द्रमा की कान्ति (चांदनी) के समान चमका देने वाली। अर्थात् भक्तों के भाग्य को विकसित करने वाली, उन्हें अभीष्ट देने वाली। जिस प्रकार पूर्णिमा के चन्द्र को देख कर समुद्र में हिलोरें उठती हैं, ऊंची-ऊची उसी प्रकार भाग्य रूपी समुद्र के लिये पूर्णिमा का चन्द्रमा है।

७४७. भक्त-चित्त-केकि-घनाघना

भक्त का हृदय मयूर (मोर) जैसे मेघ को देखकर नाचता है, प्रसन्न होता है, वैसे ही भक्त के मन-मोर के लिये वह घना बादल है।

७४८. रोगपर्वत-दंभोलि

रोग रूपी पर्वत को अपने वज्र से चूर-चूर कर देने वाली। पहाड़ों को केवल वज्र से ही तोड़ा जा सकता है। राजराजेश्वरी की दृष्टि-मात्र से ही जिससे वह अपने भक्तों को रोगी रूप में देखले तो उसकी निगाह ही भक्त के पहाड़ जैसे रोग के लिये वज्र के समान है। उसके रोग टूट जाते हैं। वह अपने भक्तों के प्रेम से वशीभूत होकर रक्षा करती है। जब तक कोमल दृष्टि है तब तक पहाड़ खड़ा है जहां उसकी कठोर दृष्टि हुई नहीं कि पहाड़ खिसका।

७४९. मृत्यु-दारु-कुठारिका

जिसे प्रकार से कुल्हाड़े की चोट से काष्ठ के टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं। भगवती अपने भक्तों की मृत्यु रूपी लकड़ी के लिये कुल्हाड़े के समान है। इस नाम के अन्तिम दो शब्द र, क क्रमश: २ और ८ को प्रतिनिधित्व करते हैं, ऐसा वररुचि विधान है, अर्थात् २८ प्रकार के दर्द हैं उनके लिये तथा मृत्यु के लिये दूर करती है। यहां भाव यह है कि उपासक कभी मरता नहीं है क्योंकि वह अमृत तत्व को पहचान गया होता है "अमृतत्वाय कल्पते" देवता ओर उपासक में भेद नहीं होता। उपासक देवता की तरह ही अमर हो जाता है। वह पार्थिव शरीर में अपार्थिव आत्मतत्व को पहिचान जाता है, यह ही परम तत्व है, मोक्ष है, दुर्लभ है, भक्तों के लिये सुलभ है।

उपरोक्त आठ नाम भक्तों के लौकिक दुख दूर करने वाले हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७५०. महेश्वरी

ईश्वरों की ईश्वरी। सबसे महान। ईश्वरी तो जैसे विद्येश्वरी, धनेश्वरी, प्राणेश्वरी आदि परन्तु महेश्वरी इन सब की अधीश्वरी है। अच्छे-बुरे सब उसकी ही सन्तान हैं, उसी की शक्ति के अंग हैं अत: सबकी ईश्वरी।

७५१. महाकाली

महाकाल शिव अवन्ति (उज्जैन) में है उनकी शक्ति महाकाली। काली के असंख्य रूप और नाम है जैसे कृष्णकाली, भद्रकाली आदि इस सबमें श्रेष्ठ महाकाली है, यही आद्या विद्या है। मार्कण्डेय पुराण में इसी का प्रथम स्तवन है। भगवती जहां अपने भक्तों को ललिता बनकर पालती है, वहीं उनके दुखों को हरने के लिये उसे कठोर भी होना पड़ता है। महाकाल तो काल का भी काल है, उसकी अधिष्ठात्री शक्ति महाकाली।

७५२. महाग्रासा

सारे ब्रह्माण्ड को एक ही ग्रास यानी कौर (अर्थात् भोजन का वह अंश जिसे हम एक बार में मुंह में रखकर निगलते हैं) में निगलने वाली। जैसे माता लड्डू बनाती है और उसे एक ही ग्रास में मुंह में रख कर निगलते हैं, वैसे ही शक्ति सृजित करती है, पालन करती है और उसका महाग्रास ग्रहण कर जाती है।

७५३. महाशना

महा अश यानि अनन्त भोजन करने वाली। उसका भोजन सामान्य नहीं है, जबकि प्रजा को असंख्य भोजन देती है, तो उसके महाग्रास कीं कल्पना क्या हो सकती है।

७५४. अपर्णा

वह मात्र महाग्रासा ही नहीं अपितु अपर्णा भी है जो खाना भी छोड़ दे वह अपर्णा। हिमसुता ने शिव को पतिरूप में प्राप्त करने के लिये तप किया, जिसमें उन्होंने सब भोजन तक त्याग दिया तब मात्र गिरे हुए पत्ते खाने लगी फिर और कठिन तप किया और वे उन पत्तों को भी खाना छोड़ देती हैं, इस लिये उनका नाम अपर्णा पड़ा। एक अर्थ में जिस पर कोई ऋण न हो। अर्थात् वह ऋण को अदा कर देने वाली है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७५५. चण्डिका

चंडि का तात्पर्य क्रोध से है। जो भक्तों को कष्ट देता है, सताता है, उन पर क्रोध करने वाली। जिसके क्रोध के भय से सब देवता कार्यरत हैं। क्योंकि भय के बिना शासन नहीं चलता, अत: सभी अपने-अपने कार्य में रत हैं। देवी-भागवत पुराण में सात वर्ष की आयु की कन्या को चण्डिका कहते हैं।

७५६. चण्डमुण्डासुर-निषूदनी

चण्ड और मुण्ड नामक राक्षसों को नष्ट करने वाली दुर्गा। इसे चामुण्डा भी कहते हैं। मार्कण्डेय पुराण में कहा है क्योंकि तुमने चण्ड और मुण्ड जैसे दैत्यों को मारा अत: आप चामण्डा के नाम से जानी जाएंगी।'' हालांकि वाराह-पुराण में चामुण्डा उसे कहा गया है जो रुरु नामक दैत्य के सिर को काटकर एक हाथ में ले लेती है तथा दूसरे में चर्म। अमर कोष में कर्णमोटि को ही चामुण्डा, चर्चिका और चर्ममुण्डा कहा गया है।

७५७. क्षराक्षरात्मिका

क्षर और अक्षर दोनों ही उसके स्वरूप हैं। वह दोनों में है। क्षर नाशवान है तथा अक्षर अविनाशी है। "क्षर: सर्वाणि भूतानि कूटस्थोक्षर उच्यते'' अर्थात् क्षर सब नाशवाणी प्राणी है। मनुष्य देह भी नाशवान् है, यह अन्तत: पंचतत्व में विलीन हो जाती है, परन्तु इसी शरीर में अक्षर भी है, वह आत्मा जो अविनाशी है तथा शक्ति दोनों में है।

दूसरे अर्थ में वह एक अक्षर भी है अनेक अक्षरों में भी जो हमारी सबकी भाषा के अक्षर हैं। अन्य स्थान पर सत् और असत् दोनों क्षर और अक्षर हैं।

७५८. सर्वलोकेशी

सब लोकों की स्वामिनीं या ईश्वरी। तीन लोक चौदह भुवनों पर शासन करने वाली। जो कुछ दिखाई देता है, सबकी वही अधीश्वरी है।

७५९. विश्वधारिणी

विश्व को धारण करने वाली। यह सारा विश्व उसी का रूप है। श्रीमद्भागवत में कहा है-"खं वायुमग्निं सलिलं महींश्च ज्योतींषि सर्वाणि दिशोद्रुमादीन्, सरित्समुद्रांश्च हरे: शरीरं, यत्किंच भूतं प्रणमेदनन्य:'' वही सब

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
विश्व में व्याप्त है, ऐसा जान कर सीयाराम मय. सब जगजानी करहुं प्रणाम जोर जुग पानी। सारा ब्रह्माण्ड उसी के सहारे पर है। जिस प्रकार मां गर्भ में अपने बालक को धारण करती है, श्रीमाता संसार के प्राणियों को धारण करती है, बड़े प्रेम और आत्मीयता से।

७६०. त्रिवर्गदात्री

धर्म, अर्थ और काम तीन वर्ग पुरुषार्थ देने वाली। मोक्ष यहां इसलिये नहीं कहा है कि मोक्ष तो उसी दिन हो जाती है जिस दिन उसके कान में मन्त्र रूपी बीज गुरु द्वारा रोप दिया गया है अथवा जब मनुष्य भगवती की शरण में गया, तभी जीवनमुक्त हो गया। वस्तुतः मुक्ति देने-लेने की वस्तु नहीं अपितु अनुभव की है तथा उपर्युक्त त्रिवर्ग सांसारिक पुरुषार्थ।

७६१. सुभगा

जो सौभाग्य प्रदान करती है। पांच वर्ष की कन्या को भी सुभगा कहा जाता है। विश्वकोष में ऐश्वर्य महात्म्य, ज्ञान-वैराग्य, योनि, कीर्ति, वीर्य प्रयत्न, इच्छा सश्रीकता, धर्म, सूर्य और मुक्ति भग शब्द के ही भेद हैं, इसे आधार भी कहते हैं। हमारे हाथ ही भगवान हैं तथा भगवान से भी बढ़कर है क्योंकि ये ही अच्छे बुरे कार्य करते हैं, भगवान तो उनका यथोचित पक्ष देता है। भगवती इन सभी ऐश्वर्यों को प्रदान करने वाली है। भगवान विष्णु तीन वेदों के रूप में सूर्य में स्थित हैं। प्रातः ऋक, मध्य में यजुर तथा सायं सामवेद के रूप में।

७६२. त्र्यंबका

तीनों का अम्बिका। तीनों हैं ब्रह्मा, विष्णु और महेश। सबकी जननी। वह एक ही परमात्मशक्ति तीन रूपों में विभक्त है। सूर्य, चन्द्र और अग्नि देवी के तीन नेत्र हैं, अंबक अर्थात् नेत्र। त्रि+अंबका।

७६३. त्रिगुणात्मिका

तीन गुण सत्, रज और तम को धारण करने वाली और तीनों से परे भी वही है, तभी वह तीनों गुणों से अतीत रहकर इनको समान रूप से देखती है और अपने भक्तों को भी इस अवस्था में पहुंचा देती है।

७६४. स्वर्गापवर्गदा

स्वर्ग सुख का ही नाम है परन्तु वह अनित्य है तथा अपवर्ग, अर्थ

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri

मोक्ष जो नित्य सुख है। वो भगवती दोनों ही सुख प्रदान करने वाली हैं। वह सांसारिक भोग भी देने वाली हैं और मोक्ष भी-"श्रीसुन्दरी पूजन-तत्पराणां भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव।" ब्रह्म में लीन हो-जाना ही स्वर्ग है। ईश्वर और जीव का सम्बन्ध होने पर परम शान्ति मिलती है। जैसा पहले भी स्पष्ट किया है, मोक्ष अनुभव से मिलता है, जब वह जीव ईश्वर संबंध को जान लेता है, तभी उसे मोक्ष मिल जाता है।

७६५. शुद्धा

वह शुद्ध सत्य स्वरूपा है। वह अपनी शक्ति अपने अनेक रूपों में विभक्त करती है- सत्व, रज, तम। वह अविद्या के पाप से रहित है, सात्विक और निर्मल है।

७६६. जपापुष्प-निभाकृति

जपाकुसुम एक लाल रंग का पुष्प है, जिसकी आकृति और निभा है भगवती की। लाल रंग प्रतीक है शक्ति का, इसीलिये प्रातः संध्या में ब्रह्म का शक्ति के रूप में ध्यान किया जाता है। शक्ति का लाल वर्ण, ब्रह्म का श्वेत वर्ण दोनों मिलकर गुलाबी बन जाता है। शक्ति का लाल, शक्तिमान का श्वेत।

अन्य अर्थ यह भी है कि इस नाम में सन्धि है अजपा और पुष्प निभाकृति का। अजपा एक मंत्र है जो बिना जपे ही चलता रहता है यह दक्षिणामूर्ति द्वारा प्रदत्त है। पुष्प यानी फूल, कुबेर रथ सारथी अथवा पुष्पों का मौसम। निभा तेज आकृति स्वरूप।

७६७. ओजोवती

भगवती ओज का समुद्र है। जिस प्रकार तेज बाह्य होता है, ओज आंतरिक तेज होता है, जैसे ओजस्वी भाषण। मनुष्य देखने में तेजवान दीख सकता है परन्तु उसके अन्दर जो ओज है, वह बोलने से ही मालूम हो सकता है। भगवती ओंज का केन्द्र है, उसकी के ओज से ससांर में ओज फैला, यह मात्र भाषण नहीं प्रेम रूप में भी कृष्ण और भक्ति के रूप में देखा जा सकता है।

७६८. द्युतिधरा

जिसका प्रकाश सर्वत्र है। प्रकाश का केन्द्र है, यही तेज भी है।

तीन नेत्र वाली। सूर्य, चन्द्र और अग्नि रूपी तीन नेत्र। अग्नि को विद्युत् भी कहा है। विद्युद्दाम समप्रभा....।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७६९. यज्ञरूपा

यज्ञ ही जिनका रूप है अथवा जो यज्ञस्वरूप है। श्रुतियों में यज्ञ विष्णु का ही नाम है-"यज्ञो वै विष्णु"। विष्णु व्यापक का नाम है। वेद- यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः...। गीता- तस्मात् सर्व गतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्। यहां यज्ञ से ज्ञानयज्ञ से तात्पर्य है। यज्ञ "यज्" यानी उद्गत को जानने का प्रयास है।

७७०. प्रियव्रता

व्रत जिनको प्रिय हैं। अथवा व्रत करने वाले जिनको प्रिय हैं। व्रत तात्पर्य भगवती के पूजन का संकल्प हों सकता है, नवरात्रि व्रत भी, या अन्य सात्विक साधना के लिये बिना बाहरी दबाव या प्रलोभन के किया गया कार्य या उसके लिये किया संकल्प ही व्रत है। प्रियव्रत नाम राजा भी थे।

७७१. दुराराध्या

बहुत दुष्कर है जिसकी आराधना, ऐसी भगवती। चंचल बुद्धि वाला उसकी आराधना कर ही नहीं सकता। इन्द्रिय निग्रह, यम-नियम, व्रत, तीर्थाटन, ज्ञानार्जन, प्रातःस्नान, शीत-ग्रीष्म आदि में हवन करना आदि अनेकानेक कष्ट भोग करे, जो मन को एकाग्र करे, हृदय को निर्मल रखे, ऐसा सब अत्यन्त दुःसाध्य है कर पाना। आराधना के लिये भोगा गया दुख तप है। मन को बस में रखे बिना कुछ संभव नहीं।

७७२. दुराधर्षा

तपस्या द्वारा कठिनता से समाराधित होकर आराधना करने वाले को इच्छित वर प्रदान करने वाली। दुर् यानी कठिनता से तथा आघर्ष अर्थात् नियंत्रण करना। जो प्राप्त न की जा सके। उसे पा लेना कठिन है।

७७३. पाटली-कुसुमप्रिया

पाटल गुलाब का पुष्प कहलाता है। यह गुलाब सब पुष्पों का राजा है। पुष्पराज यह पाटली फूल भगवती को क्यों प्रिय है इसलिये कि भगवती की निधि भी इसी वर्ण की है। शिव को बेल-वृक्ष के पत्र-पुष्प प्रिय हैं और पार्वती को पाटल गुलाब। गुलाबी रंग लाल और श्वेत वर्ण का मिश्रण है, जैसा पहले भी स्पष्ट किया गया है, लाल शक्ति का द्योतक है तो वह उत्तेजक है परन्तु श्वेत सात्विकता का प्रतीक है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सबसे बड़ी। सबसे महान। महतो महीयान्-श्रुति। नारद की वाणी भी महती।

७७५. मेरुनिलया

मेरुपर्वत के शिखर पर वास करती है। श्रीचक्र में भी तीन प्रस्तार हैं- भू, कैलास और मेरु। भू-प्रस्तार में वशिनी आदि वाग्देवताएं, कैलास में मातृकाएं तथा मेरु में सोलह नित्याओं के ऊपर इन सबकी आत्माओं के रूप में वास करती है। अथवा मेरुदण्ड पीठ के बीच कुण्डलिनी शक्ति मार्ग से सहस्रार में जाने वाली मेरुदण्ड पीठ की बीच वाली हड्डी को बेधती है, जिसके साथ अत्यन्त सूक्ष्म रन्ध्र वाली नस षड्चक्रों को बेधती हुई सहस्रार में पहुंचती है।

ज्ञानार्णव के अनुसार मेरु नौ अक्षरों के मंत्र को कहते हैं, जो क्रमश: भूमि, चन्द्र, शिव, माया, शक्ति, मदन, अर्धचन्द्र व विन्दु को इंगित करते हैं तथा निलय अर्थात् निवास।

७७६. मन्दार-कुसुमप्रिया

मन्दार देवदारु अथवा श्वेतार्क वृक्ष को भी कहते हैं। भगवती को मन्दार के पुष्प बहुत प्रिय हैं। शिव जी पर आक, धतूरा, अर्क, आक, मदार आदि वन्य पुष्प निवेदन किये जाते हैं। कुछ स्थानों पर मन्दार हारश्रृंगार के श्वेत व रक्त वर्ण के सुगंधित पुष्पों को भी कहा है।

७७७. वीराराध्या

वीरों की उपास्य देवी। वीर वह है जो स्वत्व को जानता है, मन पर काबू रखता है साहसी और आत्म-शक्ति वाला है। वीर मात्र शरीरिक बल वाले व्यक्ति को ही नहीं कहते। शारीरिक बल तो पशुओं में भी होता है, उनमें और मनुष्य में थोड़ा अन्तर है कि उनमें ज्ञान का अभाव है। मनुष्य के रूप में भी पशु होते हैं-'येषां न विद्या न तपो न दानं, ज्ञानं न शीलं गुणो न धर्म, ते मृत्यु-लोके भुवि भार भूता मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति।'' जो मनुष्य आत्म स्वरूप को पहचानकर परमात्मा की आराधना करता है, वही ज्ञानी है।

७७८. विराड्-रूपा

वह विराट स्वरूप की है। २५६ वें नाम में विश्वरूपा कहा था, यहां विराट स्वरूप वाली कहा है। श्रीमद्भागवत में "खं वायुमग्निं सलिलं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
महींश्च ज्योतींषि सर्वाणि दिशो द्रुमादीन् सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरं यत्किंच भूतं प्रणमेदनन्यः।'' गीता में अहं सर्वेषु भूतेषु कहा है। ऋगवेद में ईश्वर सर्व भूतानां। जो सबमें व्याप्त है वह विष्णु ही शिव है और शिव ही विष्णु है। वह सबकी सूक्ष्म शक्ति है।

७७९. विरजा

भगवती रजोगुण रहित है। वि यानीं बिना रजा यानी राजस। उत्कल क्षेत्र की देवी। श्री यमुना को भी बताया है। चन्द्रमा के धवल प्रकाश को भी कहा है। मथुरा में श्री यमुनाजी श्यामवर्ण की है। श्याम सुन्दर की श्याम लताओं और नाम तो श्याम है ही। श्री जी यमुना तो कोटिक चन्द्र लजावत पूर्ण चन्द्रमुखी है परन्तु श्यामसुन्दर की श्यामाभा से उसमें श्यामलता दिखाई पड़ती है।

७८०. विश्वतोमुखी

वह संसार की ओर मुख किये हुए है। वह सबकी माता है अपने सभी बालकों की देखभाल करती है। वस्तुतः वह सर्वत्र है। संसार भर को वही देख रही है। हम सब जो देख रहे हैं, वह उसकी दृष्टि से ही तो देख रहे हैं। हम जब देखना शुरू करते हैं या यूं कहें कि हम जब किसी पर दृष्टिपात करते हैं, तो भगवती हमारी शक्ति वहां पहले ही पहुंच जाती है। सुना होगा पशु मानसगंध को दूर से ही पहचान जाते हैं- ओर हम यही सोचते हैं कि हम छुपकर दबे पांव जा रहे हैं परन्तु हमारी शक्ति वहां पहले ही पहुंच गई होती है, हमें इसका आभास ही नहीं होता। पुरुष सूक्त में भी "मुखो विश्वतो'' कहा है। "विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुतविश्वतस्पात्'' समस्त विश्व उसका मुख है। साधक जब उसके मुखमंडल को देखने के लिये आंख खोलकर या बंद करके देखना चाहे वह दिखाती है।

७८१. प्रत्यग्रूपा

भीतर अन्तरात्मा में देखने योग्य। भौतिक दृष्टि, जिससे हम बाहरी दुनिया को देखते हैं उसे बर्हिर्मुखत्व कहते हैं, इसके विपरीत जब हम अन्तरात्मा की ओर अनुभव करते हैं तो इसे अन्तर्मुखत्व कहा जाता है।

भगवती क्योंकि हृदय में बसती है। अतः अन्तर्मुख होने पर ही ज्ञात हो सकती है, इसके लिये इन्द्रिय-निग्रह, मन को बस में रखना आवश्यक है क्योंकि वह अपने बालकों को खेल खिलाती रहती है, जैसे माता जब रसोई में व्यस्त होना चाहती है तो वह अपने बालक को एक खिलौना दे देती है,
CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
वह उससे तब तक खेलता रहता है, जब तक उसे अपने मां की किसी दुख के कारण या किसी आवश्यकता यथा भूख-प्यास के समय याद न आ जाए। और जब याद शुरू हो जाये तो रोने लगता है, बाहरी दुनिया सब बेकार लगती है, खिलौनों से मन हट जाता है। ठीक यही गति साधक और साध्य की है कि जब साधक श्री माता के चरणों में मन लगाता है, वह जीवनमुक्त हो जाता है और तब उसे संसार नीरस लगता है।

७८२. पराकाशा

पर-आकाश में रहने वाली अर्थात् ब्रह्माकाश में जिसका निवास है। आकाश भी कई हैं भूताकाश, महाकाश, तत्वाकाश, सूर्याकाश, चिदाकाश आदि। ब्रह्मसूत्र में आकाश को ही उसकी पहचान बताया है। मनुष्य के कपाल से दो अंगुल ऊपर पराकाश है। जिस प्रकार आकाश बहुत हैं, भगवती का विस्तार भी ऐसा ही है और पुराणों आदि में विशद वर्णन है।

७८३. प्राणदा

प्राण देने वाली। जितने जीव सृष्टि में पैदा होते हैं उनमें प्राण वही देती है। प्राण पांच प्रकार के बताए हैं- ये सब वायु से हैं, अतः प्राणी की प्रत्येक सांस को ब्रह्म कहा है।

७८४. प्राणरूपिणी

वह प्राणरूपा है। ब्रह्मरूपिणी है। कं ब्रह्म खं ब्रह्म प्राण ब्रह्म। पांच प्राण हैं। जड़-चैतन्य सबमें प्राण होते हैं। प्राण को अस्ति माना जाता है, यानी "है"। नित्यतंत्र में सोलह नित्याओं को ही प्राण आदि कहा जाता है, क्योंकि श्वास-निःश्वास से ही दिन, महीना आदि मापे जाते हैं।

७८५. मार्तण्ड-भैरवाराध्या

मार्तण्ड नाम सूर्य का है, क्योंकि "मृते अण्डे येन संजातः" मरे अण्ड से उत्पन्न होने के कारण सूर्य का नाम मार्तण्ड है। मोक्ष दाता को भैरव कहते हैं। उन सूर्य के द्वारा जिसकी उपासना करके उनसे तेज (प्रकाश) को वरदान के रूप में मांगा और सूर्य तेजस्वी हुए।

स्कन्द पुराण के अनुसार मरे हुए अण्ड से पैदा होने के कारण मार्तण्ड नाम पड़ा। श्रीचक्र में बाईस व तेईसवीं पंक्ति पर मार्तण्डभैरव नाम के उपासक का स्थान है। भैरव बटुक को भी कहते हैं। शिवसूत्र में प्रयास को ही भैरव कहा है, भीरुः (औरत) को भी भैरव कहा है। मार्कण्डेय पुराण

CC-0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
के अनुसार आपतकाल में भैरव के याद करने से वह उनके भय को दूर करते हैं। एक अर्थ में उदय होते हुए सूर्य के समान भैरव भगवती की उपासना में लगे हैं।

७८६. मन्त्रिणी-न्यस्त-राज्यधू

मंत्र जपने वाला आराधक उस "मंत्रिणी" के ऊपर अपना सब राज का भार सौंप कर आराधना में लगा रहता है और वह उसके सभी मनोरथ पूर्ण करने में लगी रहती है। आराधक के जप करने से चित्त शुद्ध होता है, तभी परमतत्व हृदय में आता है। मंत्रिणी भगवती ललिता की एक शक्ति। शिवसूत्र के अनुसार विचार ही मंत्र है, प्रयास साधन, ज्ञान, शरीर तथा ध्यान समाधि ही मंत्र की गोपनीय वस्तु है। मंत्रिणी आसुरी प्रवृत्ति वाले विषंग का वध करने वाली है, जो आसुरी प्रवृत्ति साधक को श्रीमाता के पास जाने के मार्ग में बाधक है।

७८७. त्रिपुरेशी

तीनों पुरों की ईश्वरी। यह शरीर भी तीन पुरों का है। स्थूल, सूक्ष्म और लिंग। प्राण, आत्मा और जीव। मन बुद्धि अहंकार। स्वर्ग, पाताल और पृथ्वी। त्रिपुरेश्वर की पत्नी त्रिपुरेशी। श्रीचक्र में सर्वाशापरिपूरक चक्र की अधीश्वरी। भू, कैलास और मेरु को त्रिपुरा माना गया है। तीन कूट होते हैं- वाग्भव, मध्य और शक्ति तीनों की अधीश्वरी।

७८८. जयत्सेना

जीतने वाली सेना। जोकि राजसी, तामसी वृत्तियों पर विजय प्राप्त कराती है। जिसने भण्डासुर, महिषासुर आदि जो साधकों की साधना में रोड़ा बनता है, उन पर विजय करने वाली सेना की अधीश्वरी।

७८९. निस्त्रैगुण्या

जो तीनों गुणों से परे है। आप त्रिगुण-जननी होते हुए भी निर्गुण हैं। यही आपकी विशेषता है। गीता में कहा है- "त्रैगुण्य विषयावेदा निस्त्रैगुण्योभवार्जुन।"

७९०. परापरा

यह नाम बृहत् अर्थ वाला है। पर, अपर और परापर ये तीनों देवी के ही रूप हैं जो ब्राह्मी, लक्ष्मी या वैष्णवी तथा गौरी या माहेश्वरी के

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

नाम से संसार में सृजन, पालन और संहार करती है। पर यानी दूसरे अपरा अर्थात् अपना या स्वयं। ऐसे ही परा शत्रु का तथा अपरा अपने को कहते हैं, मित्र को कहते हैं। इस नाम की उपनिषदों वेदों में विस्तृत व्याख्या है, यह ब्रह्म नाम है, मंत्र है। यह विद्या है। परा को दूर और अपरा को पास कहा जाता है। गीता में कहा है, मैं न पास हूं, न दूर हूं तथा न मेरा कोई दुश्मन है न मित्र। लिंग पुराण के अनुसार दो प्रकार के ज्ञान या विद्याएं हैं- परा और अपरा। अपरा में ऋक्, यजु, सामवेद और अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प, निरुक्त, ज्योतिष आदि हैं; जबकि परा अविनाशी है, देखी नहीं जा सकती, जाति-रहित है और वह है स्वयं। प्रणव भी दो हैं, परा और अपरा। परा सर्वोच्च शक्ति है तथा अपरा स्वयं को धर्म। नित्य हृदय के अनुसार उपासना भी तीन प्रकार की है परा-अद्वैतवाद, अपरा-श्रीविद्या, श्रीचक्र विद्या व परापरा ज्ञान संबंधी। शब्द दो प्रकार के। होम भी दो हैं, अपरा होम भी दो भागों में बांटा गया है सम्पूर्ण और तेज। तेजहोम को जो मूलाधार में अग्नि है, उसे प्राणग्निहोत्र भी कहते हैं। पराहोम जो आंतरिक है, बिना ही ईंधन के सदा जलती रहती है, जो एक ही बार प्रज्वलित होती है और एक ही बार अस्त होती है, पुनः उसे प्रज्वलित नहीं किया जा सकता। इसे पंचदशी या षोडशी में जोड़ा जाता है, वह मंत्र है।

७९१. सत्यज्ञानानंद-रूपा

श्री जी सत्य, ज्ञान व आनंद स्वरूपा है। सत्, चित् आनंद। सत से सारे ब्रह्माण्डों को धारण करती है। चित् चैतन्य स्वरूप है, इससे सर्वत्र कार्यरत करती रहती है और आनंद तो सभी प्राणी चाहते हैं। सांसारिक आनंद क्षणिक और परमानन्द शाश्वत होता है।

७९२. सामरस्य-परायणा

शिव-शक्ति में समरसता। "साम्य अवस्था में रहने वाली। हमेशा एक ही अवस्था में रहने वाली जो न घटती है न बढ़ती है, जिसे न सुख है न दुख। सत्-असत्, प्रकाश अंधकार जीवन या मृत्यु जिसको प्रभावित न कर पाते हों। गीता में समः सर्वेषु भूतेषु, प्राणी मात्र समान भाव से ईश्वर को देखने वाला है। "सुख दुःख समे कृत्वा''

७९३. कपर्दिनी

कपर्दी भगवान शिव, उनकी पत्नी कपर्दिनी। कौड़ी की माला धारण करने वाले शिव की गृहिणी। क यानी जल या गंगाजल पर यानी बहना दा यानी पवित्र होना। बहता पानी निर्मला। भगवान शिव की जटाओं में गंगा होने के कारण वे कपर्दी हैं, उनकी अर्द्धांगिनी।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

७९४. कलामाला

चौंसठ कलाओं की माला धारण करने वाली। गीता-"मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणि गणा इव'' जितने भी ब्रह्माण्ड हैं, उस सब की माला पहनने वाली, क्योंकि असंख्य ब्रह्माण्डों को अपनी कला से रचा है, ऐसी कलामाला।

७९५. कामधुक्

कामधेनु जो चाहो वही वर दे देती है। अतः कामना पूर्ण करने वाली श्रीमाता कामदुघा हैं। राजराजेश्वरी का पृथ्वी भी रूप है। इस पृथ्वी ने राजा पृथु को सभी इच्छित पदार्थ दिये। इसलिये भक्तों की कामना पूर्ण करने में आप अद्वितीय दानी हैं।

७९६. कामरूपिणी

यथेच्छ स्वरूपा। काम नाम शिव का है, उनकी पत्नी मनोरथ पूर्ण करने वाली अथवा कामेश्वरी का ही नाम है। जैसा हम चाहते हैं, वैसा ही हम मां से मांग लेते हैं। अब मां को हम याद ही तब करते हैं। जब हमें इच्छापूर्ण कराना हो, इच्छाएं अनगिनत हैं, और हम प्रतिपल उसके मुख की ओर ही देखते रहते हैं कि वह पूर्ण करेगी तो उसका स्वरूप हमें कामनापूर्ण करने वाली जैसा लगता है।

७९७. कलानिधि

कलाओं की निधि (मूर्ति) यथा चन्द्रमा की १६ कलाएं होती हैं और भगवती ६४ कलाओं की निधि तथा उनका उत्पत्ति स्थान है। शिवसूत्र में कला शरीर को कहा है, कर्म को भी ।

७९८. काव्यकला

काव्य, कविता, छन्द, श्लोक आदि बनाना ही काव्य कला है। जैसे ऋषि वाल्मीकि ने रामायण महाकाव्य की रचना की। व्यास जी ने महाभारत काव्य और अठारह पुराणों की संरचना की। शुक्राचार्यजी की मृतसंजीवनी-विद्या को काव्य कहा। गीता-"कवीनामुशनाकविः'' यह काव्य-कला जिसकी उपासना से प्राप्त होती हो। आदिशंकराचार्य की आनंदलहरी।

७९९. रसज्ञा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

रसों को जानने वाली। इसमें शृंगार रस आदि नव रस एवं

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

षट्रस (व्यंजन), परमानंद रसरूपा- रसोवैस:। वह ब्रह्म रसरूप है।

८००. रस-शेवधि

रसों में सर्वोत्कृष्ट रस ब्रह्मानंद रस। भगवती ब्रह्मानंद रस की मूर्ति हैं, इससे शान्ति-रस का बोध होता है, न कि रौद्र या वीभत्स का। रसएव परब्रह्म रसएव परागतिः। रसोहि कान्तिदः पुंसां रसोरेतइतिस्मृत:।। रसोवै रस संलध्वा ह्यानन्दी भवतीत्यपि।''

८०१. पुष्टा

पुष्टियुक्ता। पुष्टिवर्धन:- ऋग्वेद। जिसका सब कुछ पुष्ट (चुस्त-दुरुस्त) है। इसका तात्पर्य तन्दुरूस्ती से भी है। पूर्ण सुन्दर भी तभी है, जब पुष्ट है, उसका शरीर पुष्ट, चरित्र पुष्ट, नियम भी पुष्ट। पुष्टि का तात्पर्य यह भी कि जो ईश्वर को अपने इष्ट को सबमें देखे, वह पुष्टिमार्गी है। जो भेद करता है, वह अपुष्ट है। ३६ तत्वों से पुष्ट।

८०२. पुरातना

क्योंकि वह अनादि काल से चली आ रही है, सबसे पुरानी है। इसके पूर्व कोई नहीं हुआ। समस्त सृष्टि इसी की बनाई गई है, अत: पुरातना है।

८०३. पूज्या

सबकी पूज्य है। पूजने योग्य है, क्योंकि सब इसकी ही सन्तति हैं, अत: सबकी पूज्य है। वह सब पर कृपा करती रहती हैं।

८०४. पुष्करा

पुष्कर जिनके नेत्र हैं। नेत्रों की कान्ति से ही भक्तों का पोषण होता है। अन्य अर्थ वह सदा पूर्ण है, परिपूर्ण है। पुष्कर तीर्थ की देवी।

८०५. पुष्करेक्षणा

कमल जैसे नेत्र हैं जिनके। कमल पुष्कर को कहते हैं। पुष्कर में एक सरोवर है, जो हमेशा जल से परिपूर्ण रहता है। पुष्कर शब्द के और भी अनेक अर्थ हैं जिसमें तेजोवह तत्व, आकाश, जड़ीबूटी खड्गपल आदि हैं। श्रुतियों में एक अर्थ यह भी है कि यानी भगवती जल है जो चार प्रकार का है- देव, मानव, पशु व असुर। पद्मपुराण में बताया है कि सूर्य विशाखा नक्षत्र

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

में आता है तथा चन्द्र कृतिका में तो ऐसा दुर्लभ अवसर पुष्करतीर्थ में महत्वपूर्ण है। पुष्कर वट वृक्ष को भी कहते हैं।

८०६. परमज्योतिः

श्री जी ही सबसे महान् प्रकाशमय है, जिनके अंश से ही सूर्य, अग्नि, चन्द्र, विद्युत में प्रकाश विद्यमान है। वह भर्गोदिवस्य है, ज्योति सूर्यो सूर्योज्योति, अग्निर्ज्योति ज्योतिरग्नि०- वेद। ज्योतिषां ज्योति। यह आठ अक्षरों का मंत्र भी है।

८०७. परमधाम

वही सर्वश्रेष्ठ धाम है। "नतद्भासयते सूर्यो न शशांको न पावका:। यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम। श्री कृष्ण ने कहा है। वेद में भी "तद्विष्णो परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरय:" कहा है जोकि आनंद धाम है, जहां से लौटकर प्राणी नहीं आता। धाम का अर्थ प्रकाश-पुंज भी है तथा निवास भी। कौन भला ज्ञान के प्रकाश को प्राप्त करने के बाद अज्ञानी बनना चाहेगा या कौन एक निवास का स्वामी होने के बाद सड़कों पर सोना चाहेगा। उसके धाम से वापस कोई नहीं आता। एक अर्थ है कि वह समाधि स्थिति से परे है।

८०८. परमाणुः

वह अतिसूक्ष्म रूप में है। इसे आंखों से नहीं देखा जा सकता है। यह उसके सर्वव्यापकता की पराकाष्ठा है। "अणोरणीयान्"- श्रुति। ब्रह्माण्ड में वह बृहत् रूप में है तथा पिंडाण्ड में सूक्ष्म रूप में विद्यमान है। वह परम अणु यानी परम मंत्र है।

८०९. परात्परा

वह पराविद्या है। सबसे परे है। परब्रह्म-रूपा है, परम तत्व है। वह ब्रह्मा, विष्णु व रुद्र के ऊपर है, उनसे भी परे है।

८१०. पाशहस्ता

जिनके वाम हस्त में पाश है। दुष्टों को बांधने को या संसार को राग या विषयसुख में भुलाए रखने का पाश है। गीता में "आशापाश शतैर्बद्धा" वह आशा रूपी पाश है फांसी है, जिससे मनुष्य बंधा रहता है। वह राग-स्वरूप पाशाढ्या है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८११. पाशहन्त्री

यह पाश यानी डोरी अथवा फांसी उसका अजेय अस्त्र है, जिसमें फंसाना या उससे छुड़ाना उसकी ही इच्छा पर है। जो भक्त उसकी शरण में जाता है उसको इस फांसी से मुक्ति भी वही दिलाती है। लज्जा, घृणा, भय, शोक, जुगुप्सा, कुल, शील तथा जाति ये आठ पाश हैं।

८१२. परमन्त्र-विभेदिनी

पराये अर्थात् शत्रु के मंत्र को विभेदित करने वाली यानी उसको निष्प्रभ करने वाली। मंत्र की कई प्रकार की शक्ति होती है, इनमें मारण, मोहन, उच्चाटन, विद्वेषण, स्तम्भन आदि। इनमें से किसी प्रकार का प्रयोग यदि कोई भक्त पर करता है, तो उसे वह भेदती है या काटती है। परमंत्र, पराशक्ति, परब्रह्म का तात्पर्य होता है। मंत्र के आठ प्रकार हैं, मंत्रशक्ति कई हैं। इनमें तीन- प्रभुशक्ति, मंत्रशक्ति व उत्साहशक्ति है। हरिवंश पुराण में इन्द्र प्रद्युम्न को शत्रु के शस्त्रास्त्रों को काटने के लिये भगवती का स्मरण करने के लिये कहते हैं। विभेदिनी इसको बारह भागों को विभक्त करती है- ये तंत्र है- मनु, चन्द्र, कुबेर, लोपामुद्रा, मन्मथ, अगस्त्य, अग्नि, सूर्य, नन्दी, स्कन्द, शिव व क्रोध-भट्टारक या दुर्वासा ये बारह देवी के उपासक हुए हैं। या पर मंत्र अवि, भेदनी यानी जो भगवती को ध्यान करता है, उसके पापों को करने वाली।

८१३. मूर्ता

मूर्तिमान, साकार, जिनके अनेक रूप और अनेक नाम हैं। मूर्ति रहस्य-सप्तशती में "निराकारा च साकारा'' कहा है। जहां भक्त जिस भावना से स्मरण करता वहां उसी रूप में मूर्तिमान हो जाती हैं। जो कुछ चर-अचर दीखता है, वह उस सब को उसी की मूर्ति समझना चाहिए। हममें उसे देखने की दृष्टि नहीं है, अतः हम समझ बैठते हैं कि वह है ही नहीं, ऐसा नहीं है।

८१४. अमूर्ता

जो निराकार है। जिसका कोई रूप नहीं है। श्रीमद्भागवत् में सर्वे देवासुर मर्त्यलिंग नस्त्री नषण्ढ नपुमान् न जन्तुः अष्टमस्कन्ध। पंचतत्त्वों में तीन-जल, पृथ्वी व अग्नि मूर्त हैं, हम देख सकते हैं तथा शेष दो अमूर्त हैं, देख नहीं सकते हैं- वायु तथा आकाश। ब्रह्म भी दो रूप में है मूर्त व अमूर्त।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८१५. अनित्य-तृप्ता

वह नित्य सन्तुष्ट रहने वाली हैं। वह नित्य और अनित्य दोनों पदार्थों में समान रूप में रहती है, अत: वह नित्यतृप्ता या अनित्य तृप्ता कही गई है। वह सदैव सबके प्रति दयालु हैं। सबसे प्रसन्न है।

८१६. मुनि-मानस-हंसिका

मनन शील मुनियों के मन में या मुनियों के मन रूप मानसरोवर में हंस के रूप में सदैव रहने वाली। उपासकों का मन उनका घर है। उसी मानसरोवर में श्री जी हंस के रूप में रहकर मुनियों को आनंदित करती हैं।

८१७. सत्यव्रता

सत्य ही उसका निवास है। उसकी समस्त लीला सत्य है। सत्यव्रत ही है वह। रामायण में राम भी अपने भक्तों की रक्षा के लिये सत्य व्रत यानी सत्य प्रतिज्ञा लेते हैं। सत्य ही उसको, व्रत यानी प्रिय है। उसकी एकमात्र प्रतिज्ञा सत्य है।

८१८. सत्यरूपा

सत्य उसका स्वरूप है। ऋग्वेद में कहा है कि सत्य और असत्य दो विरोधाभासी हैं सत्य को शिव-शक्ति पालते हैं, उसकी रक्षा करते हैं तथा असत्य को नष्ट करते हैं।

८१९. सर्वान्तर्यामिणी

प्राणी मात्र के भीतर हृदय में रहने वाली। सबके अन्त:करणों में निवास करके सबके हृदय की बात जानने वाली। सबमें व्याप्त। सबके हृदय में सच्चाई होती है, यह सत्यरूपा का ही निवासस्थान है। हृदय की बात सच होती है।

८२०. सती

वही सर्वोपरि पतिव्रता है। पतिव्रताओं में सर्वोपरि धर्म को देने वाली है। सती क्या नहीं कर सकती, सीता, अनुसूया, सावित्री, अहिल्या, द्रौपदी, आदि। दक्ष की पुत्री शिव की अर्द्धांगिनी सती।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८२१. ब्रह्माणी

ब्रह्माजी की शक्ति, ब्रह्मस्वरूपा। जीवन दायिनी अत: वह ब्रह्म की जननी है। वस्तुत: ब्रह्म का अर्थ बढ़ने से है। तथा शब्द और आनंद ज्यों-ज्यों बढ़ते हैं वे औरों के लिये भी बल प्रदान करते हैं। अत: शब्द ब्रह्म कहा है, शब्द से मंत्र बना है तथा मंत्र को जानने वाला ब्राह्मण होता है, उसकी शक्ति है।

८२२. ब्रह्म

वह स्वयं ब्रह्म है यानी आनंद है या वह शब्द है दूसरे अर्थ में मंत्र है।

८२३. जननी

सबकी जननी है। समस्त ब्रह्माण्ड उसी से पैदा हुआ है। सबकी माता है। जननी का अर्थ है माता, दया।

८२४. बहुरूपा

उसके बहुत से रूप है। "मुररिपु व्राहस्य भवती, विष्णुः कृष्णो हृषिकेशो।" वही बाला के रूप में, कन्या रूप है, वही भगिनी, पत्नी, माता या भद्र महिला के रूप में है। वह अकेली भण्डासुर को मारने के लिये अनेक रूप धारण कर लेती है। जड़ और चेतन में भी वही है। वही बोलने की शक्ति भी है। मनन करने की विलास और आनन्द की शक्ति भी वही है। श्रुतियों में वह अनेक रुद्रों की पत्नी भी वही है। मंत्रों में प्रत्येक मंत्र में भी वही है। रौद्री यानी चामुण्डा नौ करोड़ है। वही वैष्णवी, राजसी स्वरूप से अट्ठारह करोड़ शक्तियों को विभेदित करती है। त्रिपुरासिद्धान्त में वही लोपामुद्रा, शुद्धविद्या, हयारूढा, परा षोडशी, श्यामला, नाम से पराशिव या सदाशिव की पत्नी है, वही लक्ष्मी, कामकला, रूप में विष्णुपत्नी और अन्नपूर्णा रूप में शिव की। वाग्वादिनी और बाला रूप में ब्रह्मा की पत्नी है। इस प्रकार वह बहुरूपा है।

८२५. बुधार्चिता

बुद्धिमानों से पूजित ज्ञानी-जन उसे पूजते हैं। वे इस रहस्य को जानते हैं कि शक्ति सर्वव्यापी है। गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन से कहा है कि ज्ञानी मनुष्य मुझे चार प्रकार से पूजते हैं, एक वे जो आपत्तिकाल में होते हैं, एक जिन्हें ज्ञानार्जन की इच्छा होती है, तीसरे जिन्हें धन की आकांक्षा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

है तथा चौथे बुद्धिमान मनुष्य जिज्ञासा से उपासना करते हैं।

८२६. प्रसवित्री

समस्त ब्रह्माण्डों को अपने प्रसव से पैदा करने वाली। सविता सूर्य का भी नाम है। प्रजानां च प्रसवनात्, सवितेति निगद्यते। अथवा सूर्य को, प्रकाश की प्रसव, पैदा करने वाली। समस्त सृष्टि को जन्म देने वाली यह सविता है।

८२७. प्रचण्डा

कोपयुक्त। जितनी यह सौम्य है, उतनी ही रौद्र भी है, किन्तु उसका यह स्वरूप भक्तों के कष्टों, क्लेशों को हरने के लिये, दुष्टों को नष्ट करने के लिये है। जो दुराचारी भक्तों या सज्जनों को कष्ट देते हैं, उनके लिये वह प्रचण्ड है। यह भयकारी है, श्रुति कहती है उसके भय से ही हवा चलती है।

८२८. आज्ञा

आज्ञा नाम देवी का है। लिंगपुराण में वर्णन है- "पुरा मदाज्ञा मद्वक्त्रात् समुत्पन्ना सनातनी"। आज्ञा चक्र में रहने वाली हाकिनी नाम की योगिनी। अथवा सूर्य, चन्द्र, वायु, अग्नि आदि देव जिनकी आज्ञा से ही कार्यरत हैं। ज्ञ शब्द के कई अर्थ हैं जिनमें ज्ञान भी है, वह मनुष्य जो गुणों का आनंद लेता है, मृत्यु की मृत्यु, ज्ञान की पराकाष्ठा है। आज्ञा चक्र सात चक्रों में छठा है, जो समस्त क्रियाओं को संचालित करने की प्रेरणा देता है।

८२९. प्रतिष्ठा

समस्त ब्रह्माण्ड की नाव उसी पर प्रतिष्ठित है। प्रतिष्ठा कला नाम की एक शक्ति है। प्रतिष्ठा से तात्पर्य सम्मान। सभी देव, नर, किन्नर आदि जिसकी प्रतिष्ठा करते हैं। सर्वत्र, सबसे प्रतिष्ठित। षोडशी मंत्र को भी प्रतिष्ठा कहते हैं।

८३०. प्रकटाकृतिः

ये प्रकट योगिनी है। जिसका प्रथमावरण में पूजन होता है। अथवा प्रकट यानी वह प्रत्यक्ष है आकृति जिसकी। पृथ्वी, पर्वत, सूर्य, चन्द्र, तारे, विद्युत आदि सब प्रकट आकृति हैं। वह मूर्त अमूर्त दोनों रूपों में है। श्रीचक्र में प्रथम वृत्त। अप्रकट यानि जल, प्रकट यानी विद्यमान।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८३१. प्राणेश्वरी

प्राण ही बल हैं।"प्राणौ वै बलमिति"। प्राणों की ईश्वरी या स्वामिनी। केनोपनिषद के अनुसार वह प्राणों की प्राण है, समस्त जीवों को प्राण देने वाली प्राणनाडी है। जिसे वेद विश्लेषित करते हैं।

८३२. प्राणदात्री

वही समस्त जीवों को प्राण देने वाली है। जैसे सत्यवान् के जब प्राण निकल गये, तो पुनः उसकी पत्नी/सती सावित्री द्वारा देवी की प्रार्थना करने पर प्राणदान मिला और पुनर्जीवित हुए। सात प्राण बताए गये हैं।

८३३. पंचाशत्पीठरूपिणी

भगवती की इक्यावन पीठ हैं जहां भगवती सती के देह के अंग गिरे हैं। वही सिद्ध पीठ हुई है। इक्यावन ही अक्षर हैं, ये पंचविधिन्यास में आते है। ये सब तीर्थस्थल है। सोलह स्वर, पच्चीस वर्गाक्षर, चार अन्तस्थ, तीन ऊष्म (श, ष, स) दो "ह" दूसरा विसर्ग सूचक महाप्राण मिलकर पचास पीठ बनती हैं। इन पचासों को ही इक्यावन पीठों में गिना जाता है। षोढान्यास में इक्यावन पीठन्यास आते हैं। सुन्दरी महोदय में पीठ पचास ही हैं परन्तु "क्ष" को इसमें शामिल नहीं किया जाता है। ज्ञानार्णव में पीठ मातृकाओं के अनुसार हैं।

८३४. विशृंखला

जिसकी कोई शृंखला या बंधन या परिधि नहीं है। प्राणों की परिधि है यह शरीर की वस्त्र इत्यादि। भगवती शृंखलाओं से मुक्त है। प्राण शरीर से निकलने के बाद मुक्त होता है।

८३५. विविक्तस्था

जहां कोई दूसरा व्यक्ति न हो, एकान्त हो, उसे विविक्त कहते हैं। अर्थात् एकान्त में प्राप्त होने वाली। आत्मज्ञान एकान्त में ही प्राप्त होता है। जो स्व ओर स्व से परे यानी पर में भेद नहीं करता, उसमें रहने वाली।

८३६. वीरमाता

वीरों की माता। वीरों को उत्पन्न करने वाली। वीर वह है, जो उपासना में आने वाली विघ्न-बाधाओं से युद्ध कर उन पर विजय प्राप्त

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

कर। तथा उपासनारत रहें। गणेशजी भी वे कहे जाते हैं, उनकी माता। आत्मज्ञान के उपासक अधिकारी वीर कहे जाते हैं।

८३७. वियत्प्रसू

आकाश आदि तत्वों को उत्पन्न करने वाली। अथवा शरीर के अंदर भी आकाश तत्व है उसकी जननी। आत्मा से ही आकाश पैदा होता है, आत्मनः आकाशः संभूतः। अव्यक्त आत्मा से व्यक्ताव्यक्त आकाश और उससे अन्य चार तत्व पैदा होते हैं।

८३८. मुकुन्दा

मुकुन्द श्री कृष्ण का नाम है। जोकि मुक्ति देने वाले हैं वह मुकुन्द स्वरूपा कृष्ण है जैसा कि पद्मपुराण में भी कहा है।-"कदाचिदाद्या ललिता"- पुरुषा कृष्ण विग्रहा" गोपालमंत्र में भी ललिता कृष्ण के शरीर में अवतरित होती है फिर वही गोपियों के रूप में उनसे क्रीड़ा करती है।

८३९. मुक्तिनिलया

मुक्ति का निलय या भण्डार या निवास। मुक्ति के चार भेद हैं। सारूप्य, सामीप्य, सायुज्य और सालोक्य। कुछ पांच प्रकार की मुक्ति बताते हैं। सब प्रकार की मोक्ष का स्थान वही है।

८४०. मूल विग्रह रूपिणी

सबकी मूल अर्थात् जैसे दस महाविद्या हैं काली, तारा, छिन्नमस्ता, श्रीमाता, श्रीभैरवी, पीताम्बरा, शक्ति भुवनेश्वरी, धूमा, मातंगी- इन सबकी मूल कारण है। जैसे जड़ से वृक्ष, उस पर प्रकार-प्रकार की शाखाएं, पत्ती, फूल और ऐसे ही अनेक देव नर आदि। सभी शक्तियों का उद्गम।

८४१. भावज्ञा

भावों को जानने वाली। भाव अन्तस्करण हृदय में होता हैं, उसे वे ही जानने वाली हैं, यहां भक्ति भाव से तात्पर्य है। गो० तुलसीदास ने रामायण में "जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी कहा है। "भावे विद्यते देवः।"

८४२. भवरोगघ्नी

भव रोग को नष्ट करने वाली। भव सागर में जन्म-मृत्यु

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
शुभाशुभ कर्म यह सब संसार के बंधन हैं, भव रोग है, इस रोग को नष्ट करके वह स्वभक्तों को मुक्ति प्रदान करके करती है। जन्म-मृत्यु के बंधन से छुड़ाने वाली। शिव पुराण में भी लिखा है-"व्याधीनां भेषजं यद्वत् प्रतिपक्ष स्वभावतः, तद्वत्संसार-रोगाणां प्रतिपक्षः शिवः।

८४३. भवचक्रप्रवर्तिनी

संसार रूपी चक्र को प्रवर्तन करने वाली, चलाने वाली। यह सब चक्र ही तो है जो सूर्य, चन्द्र तारे आदि चलते दीखते हैं। इन को चलाने वाली। कर्म-अकर्मों के पक्ष देना भी उसका कार्य है। अनाहत चक्र जो कि हृदय में है उसकी प्रवर्तिका।

८४४. छन्दःसारा

सब छन्दों का सार। गायत्री छन्द का भी सार पंचदशी महाविद्या। छन्द का अर्थ विस्तृत है, इसमें सभी वेद, उपनिषद, आदि रचनाएं। सारगर्भित सभी नियमबद्ध रचनाएं भी छंद हैं। गायत्री, अनुष्टुप आदि छंद हैं। समस्त प्राचीन विद्या जो त्रिपुरा उ०प० में "कामोयोनिः कमला वज्रपाणिर्गुहा हसा, मातरिश्वाभ्रमिन्द्रः पुनर्गुहा सकला मायया च पुरुच्येषा'' कादिविद्या हैं। इन सबका सार, छन्द, अर्थ, इच्छा भी है। इच्छाशक्ति उसी का स्वरूप हैं।

८४५. शास्त्रसारा

सभी शास्त्रों का सार, उनका तत्व। वेदों से ही शास्त्रों का प्रादुर्भाव हुआ है। तंत्रशास्त्र में जो विधि है, वे ही शास्त्र हैं। छंद का हृदय से संबंध है, तो शास्त्र बुद्धि को विनियमित बनाता है, इसका संबंध ज्ञान से है।

८४६. मन्त्रसारा

सभी मंत्रों का सार है। श्रीमाता ही सभी मंत्रों का तत्व है, रहस्य है। मंत्र आत्मा को तेज प्रदान करता है। अनन्त प्रकाश देने वाला होता है यह वेद और तंत्र दोनों में है।

८४७. तलोदरी

तल में है उदर जिसका। तल अर्थ पाताल भी है, हथेली भी। पतला पेट, कृशोदरी होना स्त्रियों का शुभलक्षण है। तल में अ आगे जोड़ा जाये तो अतल उदरी होगा अतल लोक भी उसी में है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८४८. उदारकीर्ति

बड़ी है कीर्ति या यश जिसका। आपका चरित्र उदार है, आपका वरदान उदार है, महत्तर कीर्ति है, उत्कृष्ट कीर्ति है आपकी। आपके यशगान से मनुष्य के कष्ट दूर हो जाते हैं तथा आनंद प्राप्त होता है, मुक्त होता है। उदार शब्द के कई अर्थ हैं, जिनमें वह देवताओं आदि की माता है। जो उसको ध्यान करता है, उसकी उन्नति, यश वृद्धि होती है।

८४९. उद्दामवैभवा

सीमा रहित वैभव है जिनका। जिनका विभव बहुत ऊँचा है या पुनः आवर्तन नहीं होता। उसका धाम।

८५०. वर्णरूपिणी

पाणिनीय-शिक्षा में ६४ वर्ण माने गये हैं। वे सब आपका ही स्वरूप हैं। वर्ण अक्षर जिनसे मन्त्र बनते हैं, शब्द बनते हैं-शब्दब्रह्म। मंत्र सर्व-समर्थ है। मन्त्राधीनास्तु देवताः। देवता भी जिनके अधीन है। यही वाग्देवी है।

८५१. जन्ममृत्युजरातप्तजनविश्रान्तिदायिनी

यह जीव ब्रह्म से अलग होकर जन्म-मरण दुख-रोग-बुढापा-चिन्ताओं से तपे हुए प्राणियों को विश्रान्ति अर्थात् विराम (आराम) देने वाली है। हरेक जीव प्राणी शन्ति की खोज में रहता है। कोई धन कोई भोजन की शक्ल में शान्ति को समझाता है, परन्तु वह इस मृगतृष्णा में पड़ा रहता है शान्ति के लिये प्रथम तो मानव जीवन तत्पश्चात् सद्बुद्धि आवश्यक है।

८५२. सर्वोपनिषदुद्घुष्टा

सब उपनिषदों का सार। सब सिद्धान्तों का सार-"यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा तदेव वीर्यवत्तरंभवति।"-श्रुति। उपनिषदों की उपासना आत्मा के साथ एकाकार होना है।

८५३. शान्त्यतीतकलात्मिका

शाश्वत शान्ति देने वाली। निर्वाणानन्द बोधदा। उपनिषदों से जो आत्मज्ञान प्राप्त होता है, वह शाश्वत शान्ति का अधिकारी होता है ऐसा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

कठोपनिषद कहता है। वह ऐसी कला की जननी है, जो मनुष्य को शान्ति के अतीत ले जाती है।

८५४. गम्भीरा

महाह्रदय को गंभीर कहते हैं। जैसे समुद्र गंभीर होता है। उसमें नदियों का पानी आता रहता है, बाढ़ का पानी भी। परन्तु समुद्र में कोई घट-बढ़ दिखाई नहीं देती। वह गंभीरता लिये है। विशालता लिये है। नदी क्षुद्र भी होती है। शीघ्र ही उच्छृंखल भी हो उठती है या सूख भी जाती है। गंभीर के एक अर्थ गणपति की बीज मंत्र (गं), भी से भय तथा रा से दूर भागना। वह उन गणपति की माता है जिसके ध्यान करने से ही भय दूर हो जाता है।

८५५. गगनान्तस्था

सबसे ऊँचा जो गगन (आकाश) है, वहां रहने वाली। जिस प्रकार बाहर अनन्त आकाश है, उसी प्रकार अन्दर भी दहराकाश है, शरीर में भी है। उसमें भी देवी का निवास है, गगन यानी आकाश या तेजोवह, अन्त यानी उसके अन्त में, स्थ अर्थात् रहने वाली। अर्थात् यदि गगन का अन्त भी हो, उसके बाबजूद वह रहती है।

८५६. गर्विता

विश्वाभिमानिनी। अर्थात् विश्व का निर्माण अहंकार से ही होता है। इसे व्यक्तिभाव में अहंता और समष्टिभाव में पराहन्ता कहते हैं। यह सात्विक अहं है, जिससे जीव का कल्याण होता है। जैसे अद्‌भुत करुणा का मद उसकी आंखों में है, यह मद कल्याण कारी है, ऐसे ही यह गर्व ब्रह्माण्ड का प्रजनन करता है।

८५७. गानलोलुपा

गायन सुनने की लोलुपा (चाउली)। भगवती रसमय गायन सुनने की इच्छा रखती है। स्वामी हरिदास जी ने गायन से ही श्यामाश्याम को रिझाकर उनका साक्षात्कार किया था। "स रे ग म प ध नि रतां तां वीणाहस्ता प्रसाधितकेशाम्। वन्दे समन्द हसितां ईषद्धास्यां वराभय दधतीम्।" समस्त ब्रह्मांड एक सुमधुर ध्वनि ताल पर चलता जा रहा है, इसका आनंद वह ले रही हैं, गायन दो प्रकार का है सामवेद तथा गांधर्व जो मनुष्य गाते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८५८. कल्पनारहिता

जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती। संकल्प, विकल्पों से परे। कल्प: प्रलय, नर: ब्रह्म या मनुष्य, हिता: हितैषी मित्र अर्थात् जो प्रलय उपरान्त भी हमारा मित्र है, वह ब्रह्म। जन्म और पालन के समय तो वह हितैषी है ही। उसकी महानता के इतनी स्वरूप हैं कि उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

८५९. काष्ठा

समय का अतिसूक्ष्म हिस्सा। "सा काष्ठा सा परागति:। अठारह मिनट की समयावधि को भी काष्ठा कहते हैं। काष्ठ यानी लकड़ी। यह वेदान्त की शिक्षा भी है। सदाशिव की पत्नी भी काष्ठा है, जिसके पुत्र का नाम स्वर्ग है। वायु और लिंग पुराण में उल्लेख है। वह स्वयं समय को निर्मित करने वाली है, क्षण-क्षण में वही व्याप्त है। गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है"कालोऽस्मि लोकक्षय कृत् प्रविद्धो'' अर्थात् जिसका कल्प नहीं है, कल्प में तो सबका अन्त हो जाता है, परन्तु यह ही ऐसी है, जिसका अन्त कभी नहीं होता। समय-वाचक नाम है।

८६०. अकान्ता

अक यानी पाप या दु:ख का अन्त करने वाली।

८६१. कान्तार्धविग्रहा

कान्त नाम है सदाशिव का उनकी अर्द्धांगिनी। अर्द्धनारीश्वर। जिनका आधा विग्रह शिव तथा आधा श्रीमाता का है। का, अन्त अर्थात् का शब्द के बाद में "ख'' आता है, जिसका अर्थ स्वर्ग है। भगवती के शरीर का एक हिस्सा स्वर्ग है। कान्त यानी शिव के आधे शरीर में रहने वाली इनकी स्वयं की कान्ति है।

८६२. कार्यकारणनिर्मुक्ता

न जिसका कोई कार्य है न कारण वह सबसे परे है। "न तस्य कार्यं कारणं विद्यते:''-श्रुति। संसार में प्रत्येक कार्य के पीछे कोई कारण होता है परन्तु श्री जी का कोई कार्य नहीं न ही कारण है, वह क्या करती है, किसके लिये, क्यों करती है, इसका कोई उत्तर नहीं है।

८६३. कामकेलितरंगिता

भगवान शंकर की क्रीड़ा-विलास रूपी समुद्र की तरंग। कामेश्वर

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

की काम-केलि। यह साधारण जीवों का विलास नहीं, अपितु उनकी तरंग से सब आनंदित हैं।

८६४. कनत्कनकताटंका

सोने के कर्णाभूषण जोकि कानों में पहनने के गहने हैं, वह देदीप्यमान हो रहे हैं। कानों में ये आभूषण चमक रहे हैं।

८६५. लीलाविग्रहधारिणी

बिना ही प्रयास के अनायास जो लीला करने की इच्छा मात्र से ही शक्ति विग्रह यानी शरीर धारण करती हैं जैसा कि सौंदर्यलहरीं में शंकराचार्य ने कहा है "मुररिपु वराहस्य भवती" कभी वह पुरुष रूप धारण करती है। दुर्गासप्तशती में है-"विष्णु कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दन। उमागौरी सती चण्डी सुन्दरी सुभगा शिवा।" उसे जैसी लीला करने की इच्छा होती है, वैसा ही स्वरूप धारण कर लेती है।

८६६. अजा

जिसका जन्म न हो। जिसका जन्म होता है उसकी मृत्यु भी निश्चित है तथा प्रकृति उसे पुन: जन्म भी देती है परन्तु समस्त संसार को जनमने वाली स्वयं इससे निर्लिप्त रहती है, अजन्मी है।

८६७. क्षयविनिर्मुक्ता

क्षय यानी मृत्यु। बुढ़ापे में शरीर का क्षय या ह्रास होना, जिसके नहीं होता, वह सदा एक सी रहती है, क्षय का अर्थ घर भी है, जो घर से विनिमुक्त हो चुका है, तथा जिसने मुक्ति प्राप्त कर ली है, उसके लिये वह नहीं व्यापता।

८६८. मुग्धा

जो कि बहुत सुन्दर है।

८६९. क्षिप्रप्रसादिनी

शीघ्र ही प्रसन्न होने वाली। आशुतोष की अर्द्धांगिनी है। वह क्योंकि हृदय में ही रहती है अत: तत्काल फल देने वाली है, जैसा कुछ हम सोचते हैं उसका प्रसाद तुरन्त मिल जाता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८७०. अन्तर्मुखसमाराध्या

भीतर के मन से आराधने योग्य। तात्पर्य है कि मानसिक पूजा से संतुष्ट रहने वाली। जैसा कि सौंदर्य-लहरी में आचार्य शंकर ने कहा है। "जपोजल्पः शिल्पं सकलमपि मुद्रा विरचनाः"। जैसा कि कहा है कि अण्डे तद्ब्रह्माण्डे अर्थात् जो कुछ बाहर दीख पड़ता है वह अन्दर भी है, तो बाहर उसको खोज पाना मुश्किल है क्योंकि अनेक कठिनाई हैं लम्बा रास्ता है, जबकि अन्तर्मुख होकर आसानी से उसे पाया जा सकता है, हालांकि यह भी साधारणतः कम कठिन नहीं है।

८७१. बहिर्मुखसुदुर्लभा

बाहरी वृत्तियों से उसकी उपासना कठिन है। दिखावटी पूजन भी उपासना तो है लेकिन उसका लाभ तभी है जब वह अन्तर्मन से हो। बाहर से खोजने में वह दुर्लभ है। मनुष्य के शरीर के नौ द्वार ही उसके बहिर्मुखी व्यक्तित्व के परिचायक हैं इनसे सर्वव्यापी परमेश्वर की भावना के साथ ही उपासना करके उसे प्राप्त किया जा सकता है, जबकि अन्तर्मुखी उपासना में इन द्वारों के करने पर एकाग्र मन से उपासना की जाती है।

८७२. त्रयी

वह तीन रूप धारण करने वाली है। ब्रह्मा-विष्णु-शिव, ऋक्-यजु-साम-वेद-त्रयी ,रात्रि-दिवस और संध्या, माता, पिता और पुत्र, काली, लक्ष्मी, सरस्वती, स्थूल देह, सूक्ष्म देह, और लिंग देह, बाल-युवा और वृद्धावस्था गंगा-यमुना, और सरस्वती, इडा, पिंगला, सुषुम्ना, कूटत्रय; वाग्भव, मध्य, शक्ति।

८७३. त्रिवर्गनिलया

तीनों वर्गों का निवास स्थान, धर्म, अर्थ और काम। चौथा वर्ग भी है मोक्ष और वह गुरुकृपा प्रसाद के रूप में प्राप्त होता है मंत्र द्वारा। "चरमे जन्मनि श्रीविद्यापासको भवेत्।"

८७४. त्रिस्था

तीन में रहने वाली जैसा कि पूर्व नाम त्रयी में वर्णित है। पृथ्वी, स्वर्ग, नरक। तीन विद्या, तीन अग्नि, तीन तेज, तीन इच्छा, भूत, भविष्य, वर्तमान, समय, तीन स्थितियां-जाग्रत, स्वप्न सुषुप्ति, सत, रज, तम, अ, उ, म। तीन प्रकार के मंत्र मंत्रराज श्रीचक्र में त्रिपुर की पूजा होती है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८७५. त्रिपुरमालिनी

श्रीचक्रराज में अन्तर्दशार चक्र में त्रिपुरमालिनी का पूजन होता है।

८७६. निरामया

रोगों से रहित। निर्विकार। शरीर स्वस्थ होगा तो अन्तर्मुखी की आराधना की जा सकती हैं।

८७७. निरालम्बा

अवलम्बन रहिता। उसे किसी सहारे की जरूरत नहीं, वह ही सबका सहारा है। अनन्त ब्रह्माण्डों को धारण करने वाली।

८७८. स्वात्मारामा

अपने आप में रमण करने वाली। ब्रह्मा और ब्रह्माण्डों की रचना करके स्वयं आनंदमग्न रहने वाली। आनंद का केन्द्र वही है। वही शिव-शक्ति रूप में मनु-शतरूपा अथवा माता पिता के रूप में है। अन्य स्थान पर भी कहा है। ब्रह्मोपनिषद् में उल्लेख है कि अकेले उस शक्ति को जब आनंद की कमी खली, तो उसे किसी दूसरे की इच्छा की। क्षण में ही दूसरा सामने था, यह युगल अब पति-पत्नी रूप में था।

८७९. सुधास्रुतिः

श्री चरणों में अमृत की धारा बहती है, जिनसे कुण्डलिनी शक्ति अपना भोजन प्राप्त करती है। कुण्डलिनी शक्ति जीवात्मा का शुद्धस्वरूप है उसका सीधा सम्बन्ध परमात्मा से है। सहस्रार में परब्रह्म रूप गुरु का निवास है जिनके चरणों से दो धारा निकलती हैं, अमृत की तथा दया की। सहस्रार से चन्द्रामृत निकलकर साधक के अंग-प्रत्यंग को आप्लावित करती है।

८८०. संसारपंकनिर्मग्नसमुद्धरणपण्डिता

संसार रूपी दलदल में फंसे हुए प्राणियों का उद्धार करने वाली अर्थात् आवागमन जन्म-मृत्यु रूपी कीचड़ से निकालने में चतुर पण्डिता। गीता में -"न मे भक्तः प्रणश्यति।'' जो उसकी शरण जाता है, उसका उद्धार करने वाली। कूर्म-पुराण में कहा है कि जो देवी का एक बार भी ध्यान कर लेते हैं, वे इस अन्तहीन संसार-सागर से पार आने के लिये सहारा प्राप्त कर लेते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८८१. यज्ञप्रिया

जिसको यज्ञ प्रिय है। यज्ञ नाम विष्णु का भी है। विष्णुप्रिया। अज्ञान से ज्ञान की ओर जाने को यज्ञ कहते हैं यह चलता रहता है।

८८२. यज्ञकर्त्री

स्वयं यज्ञ करने वाली। वही मनुष्य को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाती है, उसे ज्ञान का मार्ग बताती है।

८८३. यजमानस्वरूपिणी

स्वयं यजमान के रूप में यज्ञ करने वाली। यजमान नाम शिव का भी है। लिंग पुराण में सदाशिव के आठ स्वरूप दिये हैं, पंच तत्व, सूर्य, चन्द्र तथा स्वयं यह स्वयं की आत्मा है, जो सर्वोपरि है तथा यही यजमान है। मनुष्य जो कुछ करता है, अपनी आत्मा की प्रेरणा से करता है। भगवान शंकर ही दीक्षित हैं, दीक्षा उनकी पत्नी। वही यजमान है वही यज्ञ करने वाली है।

८८४. धर्माधारा

धर्म की निरन्तर धारा बहाने वाली। धर्मे सर्वं प्रतिष्ठतम्। वेदों के अनुरूप जो प्रत्येक देश में नियम और आचरण हैं, वे ही धर्म हैं। धर्म धरा का आधार है। सभी ग्रह-नक्षत्र भी स्वधर्म का पालन करते हैं, अपना कर्तव्य करते हैं।

८८५. धनाध्यक्षा

धन का अध्यक्ष कुबेर है उसकी शक्ति। आप ही धन की स्वामिनी हैं। कुबेर श्रीविद्या के उपासक हैं। उपासक और उपास्य में भेद नहीं रहता। यह पृथ्वी धन से परिपूर्ण हैं।

८८६. धनधान्यविवर्धिनी

धनधान्य बढ़ाने वाली। धनाद्धर्मं ततःसुखम्। यह पृथ्वी जीवमात्र के लिये अन्न प्रदान करती रहती है। धन और धान्य अर्थात् धान, चावल आदि भोज्य-पदार्थ की समृद्धि करती रहती है।

८८७. विप्रप्रिया

विद्याधारण करने वाले विप्र होते हैं। विद्वान जिसे प्रिय हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ब्रह्म-वैवर्त पुराण के अनुसार ब्राह्मण वे हैं, जो उस कुल में पैदा हुए हैं। द्विज वे हैं जिनका पुनर्जन्म हुआ है जिनका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ हो, जिन्हें शास्त्र और वेदों का ज्ञान हो, उन्हें क्षत्रिय भी कहते हैं। भगवती को वे प्रिय हैं।

८८८. विप्ररूपा

वह स्वयं विप्ररूपा है। विप्र विद्वान् ब्राह्मण को कहते हैं। भगवती कहती है ब्राह्मण ही मेरा रूप है। यदि ब्राह्मण की पूजा की जाये तो वे उसी तरह खाली हो जाते हैं जैसे गाय दूध दुहने के बाद परन्तु जिस तरह गाय पुनः घास चरने के बाद पुनः दूध से भर जाती है, विप्र भी मंत्र जाप और यज्ञ करने के बाद पुण्यों से परिपूर्ण हो जाता है। साधु इसीलिये अपने चरणों का स्पर्श करने से मना करते हैं।

८८९. विश्वभ्रमणकारिणी

जितने ब्रह्माण्डों की उसने रचना की है उन सब में भ्रमण करने वाली। पहिये की धुरी भी वही है और समस्त लोकों में घूमने वाली भी वही है।

८९०. विश्वग्रासा

समस्त ब्रह्माण्ड जिनका ग्रास है अर्थात् संहार करने वाली भी वही है। उसको पैदा भी वही करती है तथा एक ही कौर में सबको निगल जाती है।

८९१. विद्रुमाभा

विद्रुम की सी आभा है जिसकी। विद्रुम मूंगा को कहते हैं। यह लाल या सिन्दूरी रंग का होता है।

८९२. वैष्णवी

जो सर्वत्र व्याप्त रहकर सभी का पालन करती है वैष्णवी। विष्णुपुराण में है "ममैव पौरुषं रूपं गोपिका, जन मोहनम्।" देवी पुराण में गदा, पद्म, शंख चक्र धारण करने वाली वैष्णवी है। एक जगह विष्णु की माता वैष्णवी है। हरी, नामक दैत्य को मारने वाली वैष्णवी। विष्णुसहस्रनाम में विष्णु को ही विश्व और वैष्णवी भी उसे ही कहते हैं। उसके अनेक रूप हैं, सबका कार्य विश्व का पालन करना ही हैं। विंध्य पर्वतमाला में रहने वाली वैष्णवी। अनेक युगों में अनेक रूपों में प्रकट हुई वैष्णवी।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

८९३. विष्णुरूपिणी

विष्णु-रूपिणी होकर सबका पालन करने वाली। विष्णु रूप में वह महाशक्ति सबका पालन करती है। संसार की स्थिति उसी से हैं

ब्रह्म पाराशर स्मृति के अनुसार आनंद से दुर्गा, कात्यायनी, वाग्देवता की पूजा करता है, वह विष्णु लोक को प्राप्त करता है। वामन पुराण में है कि जो माघ मास की पूर्णिमा को देवी की नियम पूर्वक पूजा करता है, वह अश्वमेघ यज्ञ के पुण्य का भागीदार बनता है और विष्णुलोक में प्रसिद्ध होता है। कूर्मपुराण में हिमवान से देवी की प्रशंसा करते हुए कहा कि हे भगवती ललिता मैं आपके नारायण-स्वरूप को प्रणाम करता हूं, जिसके पास अनगिनत शक्तियां हैं, हजार मुख तथा हजार भुजाएं हैं, सदैव जल में रहते हैं।

८९४. अयोनि

अयोनि अथवा अजा विष्णु की योनि अर्थात् हिरण्यगर्भ, सबकी जननी, जिसका न कारण है न ही मूल है, जो स्वयं ही सबको पैदा करने वाली है। देव्यथर्वशीर्ष में विष्णुयोनिः कल्पयतु है, विष्णु की माता।

८९५. योनिनिलया

योनि में निलय है जिसका। योनि से ब्रह्म का बोध होता है। जिस योनि में विश्व का निलय हो। गीता में -"ममयोनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन् गर्भं दधाम्यहम्।" यानी त्रिकोण का भी नाम है। त्रिकोण में जिसका निलय है- यह श्रीचक्र में देखा जाता है। योनि को माया, प्रकृति भी कहते हैं, निलय का अर्थ सीमा से है। नित्य-हृदय के अनुसार पांच शक्ति तथा चार शिव की अग्नि के मेल से श्रीचक्र बना है। कुंडलिनी-शक्ति योनि में रहती है।

८९६. कूटस्था

सबके मूल में यही शक्ति रहस्यमय रूप लिये बैठी है। कूट में रहती है। त्रिकूटा भी यही है, तीन कूटों में रहने वाली- वाग्भव, शक्ति और मध्य कूट। विश्व समूह का नाम भी कूट है। गीता में भी कूटस्थ कहा है। कूट यानी शिखर तथा स्था यानी बैठने वाली। श्रीचक्र में त्रिकोण को कूट कहते हैं।

८९७ कुलरूपिणी

कुल यानी कौलाचार विधान। यथा देव, पितृ, ऋषि, मनुष्य,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
पशुपक्षी कीट आदि की पूजा अर्थात् सत्कार क्योंकि सारा विश्व उसी का कुल है किन्तु जो उसके कुल या परिवार के हैं। यह नाम उसको इंगित करता है, जिसको उसकी दीक्षा दी गई हो वह उस कुल का ही माना जाएगा। यह शरीर भी एक कुल है। ब्रह्माण्ड को प्रतिनिधित्व करने वाला पिंडांड। अतः कुलरूपिणी है।

८९८. वीरगोष्ठीप्रिया

वीरों की गोष्ठी यानी समुदाय जिसमें विनिमय हो विचारों आदि का ब्रह्मविचार, उपासना, शास्त्र का। सेवक भाव मानने वाले वीर कहते हैं; जो हमेशा श्री की सेवा में तल्लीन रहता है, वह वीर ही नहीं महावीर है। जिन्होंने भक्तिभाव से सेवा की हो, उन हनुमान को महावीर कहा जाता है, वीर पशु की भी व्याख्या है। उपासक को भी वीर कहते हैं। वीरचक्र पशु वह है जो ईश्वर को नहीं जानता और इसलिये उसकी उपासना नहीं करता।

८९९. वीरा

वीर्यवती। बल का खजाना। वीरों की उपास्य। वीर भगवती का नाम। नाममाला के अनुसार वीर उस महिला को कहते हैं, जो पति और पुत्रवती हो। ब्रज में भी वीर महिला को कहा जाता है।

९००. नैष्कर्म्या

जिसको कोई कार्य नहीं करना। जो सब कर्मों से रहित है। क्योंकि कर्म तो फल देते हैं उसे किस फल की लालसा है ! वह तो कर्म का फल देने वाली है। वह कर्म, अकर्म, पुण्य-पाप, दुख-सुख से परे है। गीता में नैष्कर्म्य-सिद्धि का वर्णन है। भक्त जब निष्काम कर्म करता है तो इसी की शक्ति से कर्मयोगी बनता है।

९०१. नादरूपिणी

नाद को शब्द या आवाज कहते है। यह शब्द या नाद ब्रह्म है। दो प्रकार का नाद- अनाहत नाद और आहत नाद। प्रणव "ओम" भी नाद है। इस पर अं की मात्रा को भी नाद कहते हैं। संगीत नाद है।

९०२. विज्ञानकलना

विज्ञान का उत्पत्ति-स्थान वही है। विज्ञान की कलन से सृष्टि

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

को ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त होता है। विज्ञान का अर्थ कूर्मपुराण के अनुसार १४ विद्याओं का ज्ञान है। विज्ञान की कलना या भावना का स्रोत वही है।

९०३. कल्या

उषा काल-स्वरूपा। प्रातः काल का समय अन्धकार को समाप्त करके प्रकाश की ओर ले जाने वाले समय का नाम है। प्रभाव। कल्या अर्थात् कल्याण करने वाली। कल्या ब्रह्म मुहूर्त है।

९०४. विदग्धा

मन को आकृष्ट करने वाली। प्रपंच-चतुरा का बोध होता है। विलक्षण चतुरता वाली। कलाकार है।

९०५ बैन्दवासिनी

विन्दु जिसका निवास स्थान है। श्रीचक्र में त्रिकोण के मध्य में बिन्दु है, उसमें जिनका निवास है। सौन्दर्य-लहरी में "मुखं विन्दुं कृत्वा'' कहा है। नौवें चक्र को सर्वानंदमय चक्र कहते हैं। इसी को बैन्दव कहते हैं। स्वच्छन्द-तंत्र में हाकिनी वृत्त में विन्दु को वैन्दव कहते हैं।

९०६. तत्त्वाधिका

तत्वों से अधिका या उनसे परे। परम तत्व। तत्व छत्तीस हैं, यह सब महाप्रलय में नष्ट हो जाते हैं किन्तु शिव-तत्व परम तत्व है, यह शाश्वत है, हमेशा रहने वाला है। सांख्य में २५ तत्व हैं।

९०७. तत्त्वमयी

तत्व जैसे दूध में घी का होना अथवा समुद्र में अमृत। आप इसी प्रकार समस्त वस्तुओं का तत्व हैं। इसी तत्व को प्राप्त करने में जीवन का लाभ है एक अर्थ है तत् त्वम्, अयि। जो तत्व उसमें है वही तुझमें है। दोनों में कोई अन्तर नहीं हैं, जीवात्मा और परमात्मा में कोई भेद नहीं हैं। तत्व तीन हैं- आत्म तत्व, विद्या तत्व, तथा शिव तत्व। वह सबमें है। उक्त तीनों माया, सदाशिव तथा शिव शक्ति से बने हैं। कुछ एक तत्व बताते हैं- तुरीय तत्व उक्त तीनों से मिल कर बना है। तीन तत्व सत, चित् और आनंद हैं। जो आगम जानते हैं वे शिव से पृथ्वी तक ब्रह्म के ३६ तत्व बताते हैं।

९०८. तत्त्वमर्थस्वरूपिणी

तत् और त्वम् आंप ही हैं, शिव भी आप हैं, जीव भी आप हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

९०९. सामगानप्रिया

सामवेद का गान जिनको प्रिय है। श्रीकृष्ण रूप में आपने ही कहा है 'वेदानां सामवेदोऽस्मि''।

९१०. सौम्यां

जिसकी सोम याग से पूजा की जाती है। भगवती का सौम्य स्वभाव है। वह सौम्य यानी सुन्दर स्वरूप वाली है- महासुन्दरी या सौन्दर्य का आलय-कोष या खजाना है अथवा सौन्दर्य का उद्‌गम स्थान है। उसका मुख-कमल सदा खिला रहता है, स्मेरमुखी है मुस्काती रहती है। जिनका धनुष भी ईख का है तथा बाण भी पुष्पों के हैं। यही सौम्यता का स्वरूप है।

९११. सदाशिव कुटुम्बिनी

सदाशिव की पत्नी। यह श्यामला, शुद्धविद्या या अश्वारूढा नाम की देवी भी हो सकती है। जिसके पुत्र गणेश व कार्तिकेय (स्कन्द) हैं, ऐसे शिव की कुटुम्बिनी। वह त्रैलौक्य कुटुम्बिनी भी है।

९१२. सव्यापसव्यमार्गस्था

वाम मार्ग और दक्षिण मार्ग दोनों ही के द्वारा सेवित। एक तीसरा मार्ग भी है जो मिश्रित है तथा दोनों को मिलाकर उपासना होती है। वाम मार्ग कर्म और दक्षिण ज्ञान का द्योतक है। वह देव है, इसलिये सव्य और पितृ भी है, इसलिये अपसव्य, दोनों प्रकार से प्रसन्न होने वाली है।

सव्य यानी दक्षिण, अपसव्य अर्थात् वाम तथा मार्गस्था यानी मध्य मार्ग। साधना आनंद प्राप्ति के लिये होती है, दक्षिण मार्ग में आराधक मन को आत्मा की ओर ले जाता है तथा निवृत्ति से आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त करता है । जबकि वामाचार या कौलाचार में वह इस शरीर से सभी भौतिक सुखों को भोगते हुए तथा पंच मकार- मांस, मदिरा, मत्स्य, मुद्रा तथा मैथुन के द्वारा संसार के सभी आनंदों में उसे लौकिक तरीके से भोगते हुए उसके द्वारा प्राप्त आनंद में श्रीमाता के दिये आनंद का ही एक भाग मानते हुए अपने मन को अपने शरीर की ओर ले जाता है। यह रास्ता लम्बा है, ऊपर से सरल लगता है परन्तु आराधक प्रायः इन्हीं में फँस कर अपने मुख्य लक्ष्य को भूल जाता है तथा विलास की भंवर में फंस जाता है। तीसरा रास्ता मध्य मार्गी है जोकि तप और तपस्या करते हुए समय अनुसार लौकिक कार्य कर साधना करता है।

शिवसूत्र में सव्य का अर्थ इड़ा नामक नाडी का है तथा अपसव्य

CC0: In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
पिंगला तथा 'स्था'' का मतलब है सुषुम्ना। ये तीन नाड़ी हैं, शरीर के मेरुदण्ड में जिनका सम्बन्ध मूलाधार से सहस्रार तक है। योगी लोग इनके द्वारा चरम लक्ष्य आनंद को प्राप्त करते हैं।

हमारे सौर-मण्डल में तीन पथ हैं। उत्तर, दक्षिण तथा मध्य। तीन नक्षत्र (अश्विनी, जैसा वायव्य पुराण में हैं कृतिका तथा भरणी) नागवीथी में है। रोहिणी, आर्द्रा व मृगशिरा गजवीथी में। पुष्य, अश्लेषा व आदित्या या पुनर्वसु ऐरावत वीथी में। हस्त, चित्रा व स्वाति गोवीथी में हैं। ज्येष्ठा, विशाखा व अरुन्धती जारद्गवी वीथी में आती हैं। ये तीन मध्यम मार्ग मृगवीथी में आती हैं। भद्रपद व रेवती वैश्वानर वीथी में आते हैं। ये तीन दक्षिण मार्ग के पथ हैं।

९१३. सर्वापद्विनिवारिणी

भक्त की सभी आपत्तियों का निवारण करने वाली। त्वामाश्रितानां न विपन्नराणाम्- जो तुम्हारे आश्रित रहते हैं, उन पर विपत्ति ही नहीं आतीं। जो सभी दुर्भाग्य को दूर करने वाली है। जब सभी आपदा और विपत्ति दूर होंगी, तभी साधक आराधना में अपने मन को एकाग्र कर सकता है।

९१४. स्वस्था

वे अपने में ही स्थित हैं। स्वस्था शोभना है स्थिति जिसकी। स्वस्थ। स्व यानी स्वयं तथा स्थित यानी बंधन में। जो स्वयं के ही बन्ध में है किसी और के बन्धन में आ ही नहीं सकती, बल्कि सबको बांध सकती है।

९१५. स्वभावमधुरा

जिनका स्वभाव मधुर है। प्रकृति से ही जिसमें मधुरता बसी है। यह उसकी आत्मीयता है कि वह सबके प्रति मधुर है क्योंकि सब उसकी सन्तान हैं।

९१६. धीरा

धैर्यवती। धीर पुरुषों या आत्मज्ञानियों जैसा, स्वरूप है जिसका। धी- बुद्धि, विवेक देने वाली या धैर्य देने वालीं "ददामिबुद्धियोगं तं तेन मामुपयान्ति ते।''- गीता। जिस व्यक्ति को किसी प्रकार के विकास के प्रलोभन से विचलित न किया जा सकता हो, ऐसा साधक ही धीर हो सकता है। धी से अर्थ अद्वैतवाद का भी है तथा रा यानी देना। धी यानी बुद्धि व ईश दसवें दिन जो बुद्धि प्रदान करती है-धीरा।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

धीर पुरुषों द्वारा पूजित। भगवान श्री कृष्ण भी धीर थे। इसी से वे महायोगेश्वर कहलाये उन्होंने महारास किया। वे भी भगवती के आराधक थे। जिन्हें बुद्धि की जरूरत है, वे भगवती की उपासना करते हैं।

९१८. चैतन्यार्घ्यसमाराध्या

चैतन्य रूपी अर्घ्य से जिनकी आराधना की जाती है अर्थात् ज्ञान रूपी अर्घ्य से प्रसन्न होने वाली। शिवसूत्र में आत्म ही चैतन्य है भावना-उपनिषत में बुद्धि या ज्ञान ही अर्घ्य है। जब भक्त समर्पित मन से भगवती की आराधना करता है तब उपासक भावनात्मक अनुभव से उसके ही स्वरूप को प्राप्त कर लेता है।

९१९. चैतन्यकुसुमप्रिया

चैतन्य रूप पुष्पों से प्रसन्न होने वाली। यह पुष्प भावना द्योतक है। ये भौतिक पुष्प गुलाब, बेला, कमल आदि के नहीं, बल्कि सर्वोत्कृष्ट चेतना का पुष्प हैं, जिसे भगवती के चरणों में अपनी बुद्धि विवेक व चिन्तन के साथ समर्पित करे, तो वह प्रसन्न होती है। चैतन्य का निवास मस्तिष्क में है। कपाल जिससे भगवती सहस्रार से अमृतवर्षा करती है, वह पुष्प सात पुष्पों में सबसे ऊपर है। जिनमें अहिंसा, इंद्रिय-निग्रह, शांति, दया, ज्ञान तप सत्य तथा भाव पुष्प है।

९२०. सदोदिता

सदा उदय के सूर्य के समान प्रकाशयुक्त। सत्, आ(सदैव), उदिता का अर्थ सत्पुरुषों में, सदा रहने वाली। जिस प्रकार प्रातः के सूर्य को अर्घ्य देते हैं, तो वह तो क्षणिक है परन्तु भगवती अपने भक्तों के प्रति सदा ही उदय के सूर्य के समान रहती है और भक्त भी चैतन्य का अर्घ्य दे सकते हैं।

९२१. सदातुष्टा

हमेशा तृप्त अथवा हमेशा ही सन्तुष्ट रहने वाली या साधकों को सन्तुष्ट रखने वाली।

९२२. तरुणादित्यपाटला

मध्यान्ह के सूर्य के समान प्रकाश युक्ता। रक्त, श्वेत पाटल

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
यानी गुलाब जैसा वर्ण कारण यह कि वह शिव की अर्द्धांगिनी है, शिव का श्वेत वर्ण श्री राजराजेश्वरी की रक्त वर्ण पर और श्रीजी की आभा शिव की आभा पर पड़ती है। जिससे मिलकर गुलाबी रंग बनता है।

९२३. दक्षिणादक्षिणाराध्या

वाम और दक्षिण दोनों मार्गों से जिमकी आराधना की जाती है। अथवा दक्ष और अदक्ष दोनों के ही द्वारा पूजनीय। अनुकूल तथा प्रतिकूल दोनों प्रकार से देवी की पूजा की जा सकती है।

९२४. दरस्मेरमुखाम्बुजा

मन्द मुस्कान युक्त हमेशा प्रसन्न रहने वाली। उसका कमल रूपी मुख सदैव खिला रहता है। शरीर में आत्मा के रूप में वह प्रतिष्ठित है, अब चाहे शरीर अस्वस्थ है या जरा व्याधि है, तब भी वह आत्मज्योति जलती रहती है। वह स्मरण योग्य बात है कि मनुष्य को ईश्वर से कुछ ही ऐसे विशेष गुण मिले हैं जो और जीव में नहीं मिलते, उनमें से एक है हंसना या मुसकराना।

९२५. कौलिनीकेवला

कौलधर्म का पालन करने वाली केवल ब्रह्म-रूपिणी कुलकुण्ड में निवास करने वाली कुण्डलिनी है, इसका पीछे भी उल्लेख किया जा चुका है। वामाचार या कौलमार्ग के अनुयायियों के लिये एकमात्र सहारा। केवल वही है सबकी माता।

९२६. अनर्घ्यकैवल्यपददायिना

अनर्घ्य अर्थात् अमूल्य या अपरिच्छिन्न कैवल्य यानी मुक्तिफल को देने वाली। अनर्घ्य का अर्थ यह भी है कि उसे हमारे अर्घ्य, आराधना या अर्चना की भी जरूरत नहीं है वह तो कृपा बरसाती है जिससे हमें कैवल्य सिद्ध हो जाता है।

९२७. स्तोत्रप्रिया

स्तुति जिसको प्रिय है। सुन्दर स्तोत्रों द्वारा प्रसन्न होने वाली। प्रार्थना के छः प्रकार हैं- नमस्कार, आशीष; सिद्धान्तोक्ति; पराक्रम; विभूति; प्रार्थना। इसके अतिरिक्त वैदिक रीति से देव, मनुष्य और असुरों ने मंत्रों को उच्चारित करके देवी को प्रसन्न किया। जहां वह मंत्रों में बालाः और पंचदशी है, यंत्रों में श्रीयंत्र उसी प्रकार से स्तोत्रों में श्रीललिता सहस्रनाम स्तोत्र है। इसके पाठ करने से भगवती प्रसन्न होती हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

९२८. स्तुतिमती

स्तुतिमान, स्तुतियुक्त। दुर्गा-सप्तशती में कहा है "स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्ट संश्रया..."हम स्तुति करते हैं और वह तुरन्त सुन लेती है। स्तुति कैसी भी की जा सकती है तथा किसी भी रूप में की जा सकती है।

९२९. श्रुतिसंस्तुतवैभवा

वेद जिनकी निरन्तर स्तुति करते हैं अर्थात् तन्त्र और वेद दोनों ही भगवती के वैभव का स्तवन करती हैं, जो विभिन्न कृतियाँ, श्रुतियाँ हैं चाहे वह गीता के रूप में हो, उपनिषदों, ऋचाओं या अन्य रूप में सब के द्वारा "उसके'' वैभव की संस्तुति होती है या उसके बारे में हमें अनुभव होता है।

९३०. मनस्विनी

स्वतन्त्र मन वाली। अपने मन के अनुसार स्वच्छन्दता पूर्वक विचरण करने वाली। वह हमारे मन की सब बातों को जानती है, वह उसे सुनती रहती है। देवी की चार प्रकार की शक्तियां हैं अथवा यों कहें कि वह चार शक्तियों को अपना आधार देती है- शान्ति, विद्या, प्रतिष्ठा तथा निवृत्ति। मनस्विनी मन में बैठी हमें उक्त चार आधार देती है।

९३१. मानवती

जो स्वयं मान से सम्पन्न है, उपासकों को मान देने वाली है अथवा अपरिमिता शक्ति है। मान बढ़ाने वाली है। यह कठिन है पर असंभव नहीं कि हमारे मन में वाणी प्रतिष्ठित हो तथा वाणी मन में अर्थात् जो मन चाहे, वही वाणी कहे अथवा वाणी वही बोले जो मन में हो। यह दिव्य शक्ति है तथा साधक का मान बढ़ाने वाली है।

९३२. महेशी

महेश (शिव) की पत्नी माहेश्वरी। देवीपुराण में कहा है क्योंकि वह महादेव के लिये ही पैदा हुई और महान् लोगों द्वारा पूजनीय बनी तथा महेश कीं पत्नी बनी, अतः महेशी कहलाई।''

९३३. मंगलाकृतिः

मंगलमय आनन्दमय कल्याणमय है जिनका दर्शन। सर्व मंगल मांगल्ये- सब मंगलों का उद्भव स्थान या आगार तो वही है, केन्द्र या

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri
निधि भगवती ही है। वह सदैव अपनी सन्तान का मंगल चाहती है। वह अपने आराधकों से या अपनी संतान से कुछ चाहती नहीं, बल्कि उन पर अकारण कृपा करती है।

९३४. विश्वमाता

विश्व को पैदा करने वाली। जगत की माता। सबकी माता होने के कारण अपनी ममता, उदारता, प्रसन्नता और प्रफुल्लता लुटाती रहती है।

९३५. जगद्धात्री

जगत को धारण करने वाली या पालन करने वाली। श्रुति के अनुसार विष्णु की माता। इस नाम से पृथ्वी का बोध होता है। जैसे धरती माता सब जीवों को अपनी गोद में रखकर उन्हें दूध, अन्न आदि देकर पोषित करती रहती है, वही आप भी हैं। धात्रीं समस्तजगताप।

९३६. विशालाक्षी

बड़े-बड़े नेत्रों वाली। "वाराणस्यां विशालाक्षी'' काशी में इनका दर्शन है। हम तो अपने नेत्रों से एक सीमित दूरी तक और बाहरी परिदृश्य को ही देख पाते हैं परन्तु वह हमें दूर से ही देखती है तथा अन्दर तक देखती है। प्रत्येक हृदय में बैठी देखती है।

९३७. विरागिणी

वैराग्य को धारण करने वाली। सबसे वैराग्य लकर आप अपने आनंद में निमग्न रहती है। वह अपनी सन्तान से प्रेम रखते हुए भी सबसे विरक्त है।

९३८. प्रगल्भा

सृष्टि, स्थिति तथा प्रलय तीनों कार्य में प्रगल्भ। अथवा प्रौढा। या प्रगल्भा नायिका। मजबूत। अपने कार्य में परिपक्व।

९३९. परमोदारा

परम उदार। उदार विचार और उदार चरित्र। उदार दानी। "महतो महीयान्- उदार चरितानां च वसुधैव कुटुम्बकम्। वह अपने भक्तों को संसार सागर से पार लगाने वाली है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

९४०. परमोदा

परम आमोद आनंदमयी उत्कृष्ट आमोद। मुद मंगल स्वरूपा महाशक्ति। समस्त पृथ्वी पर उसकी सुगन्धित हवा बह रही है।

९४१. मनोमयी

शुद्ध ब्रह्म का स्थान मन ही है। प्राप्त करने का साधन-मन से ध्यान होता है, ध्यान से ही परम तत्व का ज्ञान लाभ और लक्ष्य प्राप्ति होती है। वो मनमय प्रतिमा है। "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयो:'' मन विषयों में जाता है, वही बन्धन (पतन) का कारण बनता है, यदि मन ब्रह्म में जाता है तो वह मोक्ष का कारण होता है, यदि संसार का चिन्तन करता है, तो प्राणी आवागमन रूपी चक्र में भ्रमण करता है और सर्वशक्तिमान परमात्मा का चिन्तन करता है तो राजराजेश्वरी उसके हृदय में विराजमान होकर उसका कुशलक्षेम कर अपनाती हैं। मन ही शक्ति का प्रत्यक्ष स्वरूप है। वह स्वयं मन है।

९४२. व्योमकेशी

व्योमकेश शिव का नाम है तो शिवा का नाम व्योमकेशी। व्योम आकाश जिसके केश हैं। श्याम आकाश का वर्ण है, वही श्री जी के केश का वर्ण भी है। वह उसके विराट स्वरूप का एक नाम है दूसरा अर्थ है "व्योमक-ईशी'' अर्थात् एक अणु की भी शासिका।

९४३. विमानस्था

वह समस्त ब्रह्माण्ड व्योम, संसार में अपने निजी यान से घूमती रहती है। वि अर्थात विशेष, मान से तात्पर्य रक्षा करने से है, स्था यानी व्यस्त है। अर्थात् वह अपने भक्तों के रक्षा में व्यस्त रहती है। दूसरे अर्थ में वह असीमित है या ब्रह्म की सीमा है। चौदह विद्याओं को भी विमान कहते हैं- पुराण, नित्या आदि में रहने वाली।

९४४. वज्रिणी

इन्द्र की शक्ति शचीरूपा वज्र को धारण करने वाली। वज्र आयुध है, चरण में जिनके व्रज्रांकुशध्वज सरोरुह लांछनाढ्यम्। वज्र को ब्रह्म भी कहते हैं। क्योंकि ब्रह्म को वह सीमित करती है अत: वह वज्रिणी है। संसार पर शासन करने के लिये महाभयकारी वज्र से शासन करती है, जोकि यह वज्र भक्तों को निर्भय करने वाला है। उन्हें दुष्टों से बचाने वाला है

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

९४५. वामकेश्वरी

भगवान शिव का नाम वामदेव या वामकेश्वर भी है तो उनकी शक्ति वामकेश्वरी है। वेद में शिव का नाम वामदेवाय नमः ज्येष्ठायनमः। वामा नाम महिला या स्त्री का है। शिव के वाम अंक में - "वामांके च विभाति भूधर सुता देवापगा मस्तके भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट्। वाम, पंच यज्ञादि में रति वाली।

९४६. पंचयज्ञप्रिया

पांच प्रकार के यज्ञ जिनको प्रिय हैं- देवयज्ञ, पितृयज्ञ, ब्रह्मयज्ञ, भूतयज्ञ, मनुष्ययज्ञ ये पंच देव, गणेश, शिव, विष्णु, सूर्य, दुर्गा। पंच अग्निहोत्र बलिवैश्व, पूर्णमास, चातुर्मास, पशुसोम। पंच तत्व से निर्मित यह शरीर। इस शरीर से हम जो कुछ करते हैं, वह सब श्रीमाता के अर्पण करते हैं

९४७. पंचप्रेतमंचाधिशायिनी

पंचप्रेत मंच पर शयन करने वाली। ब्रह्मा, शिव, विष्णु, ईश्वर (महेश्वर) सदाशिव ये प्रेत (तात्पर्य भूत-प्रेत आदि से नहीं अपितु) पंच ब्रह्म के अशक्त शरीर या शक्तिहीन अथवा निष्प्राण देह की शक्ति, उन पर आरूढ या आसन बनाकर बैठने का तात्पर्य है कि उस महाशक्ति के संयोग से वो पंच देव स्वयं सर्वशक्तिमान ब्रह्म होकर ब्रह्मा सृष्टि, विष्णु पालन, शिव या रुद्र संहार, इन्द्र शासन सदाशिव शक्ति को अंक में विराजित करने में सक्षम है। आनन्देश्वर अंक में विराजित करके आनन्द वितरण करते हैं। साधक जो आन्देश्वरी की आराधना करते हैं, उन्हें वे परमानन्द नित्यानन्द प्रदान करती हैं। प्राण शक्ति के रूप में वह एक ब्रह्म पंच प्राण रूप में है। पृथ्वी जल, पावक, आकाश वायु पंचतत्व से बने इस शरीर में सोने वाली कुंडलिनी शक्ति है। पांच की संख्या बड़ी गहरी और व्यापक है।

९४८. पंचमी

जिनमें पंच ब्रह्म का निवास है।, पांच देवताओं में निवास करने वाली। वह एक ही पांच रूप में विद्यमान हैं। पांचवी- जो भी पांच हो, उनमें आधारभूत वही है। पंच भूतों में सदाशिव पांचवें हैं, उनकी शक्ति। पंच रत्न में पांचवीं पंचकोश। पंचमी का अर्थ वाराही भी है। पंच मकार वाली। पांचवीं स्थिति की समाधि।

९४९. पंचभूतेशी

पंच भूतों की स्वामिनी। देव्यथर्वशीर्ष में "अहं पंच भूतान्यपंच

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

भूतानि'' कहा है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश पंचभूत हैं, पांच भौतिक जगत के लिए।

९५०. पंचसंख्योपचारिणी

पंचोपचार से भी जिनकी पूजा की जाती है। गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य। दूसरा अन्तर्याग पांच प्रकार से मन, बुद्धि, चित्त अहंकार सबको आत्मा में लीन करके उस परमतत्व महाशक्ति में लीन हो जाना। पांच की संख्या उपचार, उपासना आदि की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। पांच तत्वों से बना प्राणी आता है और चला जाता है परन्तु पांच तत्व बने रहते हैं।

९५१. शाश्वती

जो हमेशा रहने वाली है, उसे शाश्वत कहा जाता है, जो कभी क्षय नहीं होती। इसलिये इनका नाम नित्या भी है, जो नित्य रहने वाली है। उपासक भी शाश्वत होता है। इसका तात्पर्य शरीर से नहीं समझना चाहिए। आत्मा से है और इनकी सिद्धि शाश्वत है। जैसा कि वेद में कहा है- 'तेषां सिद्धिः शाश्वती नेतरेषाम्।''

९५२. शाश्वतैश्वर्या

जिसका शाश्वत ऐश्वर्य है अथवा जिस शाश्वत (सदा रहने वाले) ईश्वर का ऐश्वर्य व्याप्त है, उसकी ईश्वरी। इसका संधिविच्छेद अर्थ है - ईशाश्, अश्वत, ऐश्वर्य। ब्रह्म की शासिका, घोड़ा या वाहन, पंचभूत ब्रह्मा विष्णु आदि जो उसके गद्दी के पाये हैं।

९५३. शर्मदा

सबके सुख देने वाली। शान्ति देने वाली। आवागमन समाप्त करके सर्वानन्दमय चक्र में मिलाने वाली, वह अनन्त काल से अनंत जीवों को सुख ऐश्वर्य लुटाने वाली अक्षय निधि है।

९५४. शम्भुमोहिनी

शिव को मोहित करने वाली। भगवान शिव को इस मोहिनी के रूप में देखकर मोहित होने का चाव है। तभी तो भगवान से उन्होंने मोहिनी रूप देखने की प्रार्थना की थी। भगवान नारायण से शिव शंकर प्रार्थना करते हैं कि मैंने आपके अनेक अवतारों के दर्शन किये, अब आपका मोहिनी जो "योषिद्'' (स्त्री) रूप है, वह देखना चाहता हूं। महामाया का यह मधुर सम्मोहन भगवान शंकर को भी मुग्ध कर देता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

९५५. धरा

पृथ्वी रूपा जो सबको धारण करे वह धरा। यही धारणा शक्ति है। पृथ्वी के तत्व से ही प्राणी उत्पन्न होते हैं। पृथ्वी के ऊपर स्थित रहता है। पृथ्वी से अन्न दूध आदि भोजन पान करके रक्षित होता हैं, फिर उसी धरती में ही मिल जाता है। मूलाधार पृथ्वी तत्व ही है।

९५६. धरसुता

धर पवर्तराज का नाम है। हिमालय पर्वतराज है, उसकी पुत्री। आद्रि भी पहाड़ का नाम है वह अद्रिजा है। हिमालय पुत्री होने से वह हेमवती भी कहलाती है। तपस्वियों का साधना का स्थल ही पर्वत है।

९५७. धन्या

धन्या का अर्थ कई रूप में है, वह कृतार्थ है, धन को प्राप्त कराने वाली तथा धनाध्यक्ष यानी धन की अधिष्ठात्री श्री लक्ष्मी रूपा है। ध्यान के द्वारा प्राप्त होंने वाली। ज्योतिष में मंगला, पिंगला, धन्या योगिनियां हैं। चार विचारधाराओं में आर्त, रौद्र, धन्या व शुक्ल हैं। ये क्रमश: पशु आदि में, हिंसा आदि अध:पतन, देवताओं की ओर जाने का मार्ग- उपनिषद सूत्र के बताए मार्ग पर चलने पर तथा योग द्वारा संसार सागर के बंधनों से मुक्त होने की चार विचारधाराएं हैं।

९५८. धर्मिणी

धर्म को धारण करने वाली या धर्म की रक्षा करने वाली सारी धर्म-शक्ति जिनमें विद्यमान है- सब धर्मों की जननी। वस्तुत: वही धर्ममूर्ति है।

९५९. धर्मवर्द्धिनी

धर्म को बढ़ाने वाली- तात्पर्य है कि धारण करने की वस्तु धर्म ही हैं। ज्ञान, पवित्रता, संस्कारप्रदान करने वाला मार्ग दर्शक धर्म ही है, ऐसे धर्म की भावना को लोक में अधिकाधिक प्रचलित करने वाली शक्ति को धर्मवर्द्धिनी के नाम से जानते हैं।

९६० लोकातीता

सब लोकों से परे। भूलोक, जनलोक, तप, सत्य, चौदह भुवन।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

त्रिलोक इन सबसे अतीत सबसे पृथक्। लौकिक जीवन में मनुष्य को सुरक्षा व शान्ति की आवश्यकता होती है। वह सबका पालन करने वाली है, अत: सबके सुख को देने वाली वही है। लोक या जीव को श्रेष्ठ बनाने वाली।

९६१. गुणातीता

गुणों की पराकाष्ठा। अथवा सत्व, रज, तम गुणों से परे। निर्गुण। अपनी इच्छा शक्ति से सगुण भी हो जाने वाली।

९६२. सर्वातीता

सबसे परे। मन वाणी से परे। वह सबमें शामिल होते हुए भी सबसे परे है। संसार की लौकिक सीमाओं से परे।

९६३. शमात्मिका

शम यानी शान्ति देने वाली अथवा मंगल या आनन्द की आश्रय, मंगल जिसके आश्रय में रहता है। आत्म रूप होने से सुख-दु:ख आदि द्वन्दों से रहित। सांसारिक वासनाओं का शमन कर, सुख देने वाली तथा आत्मानन्द की ओर ले जाने वाली।

९६४. बन्धूककुसुमप्रख्या

जपाकुसुम (गुडहर) जो लाल होता है, ऐसा ही वर्ण है भगवती का। अथवा प्रात:काल के उदय होते सूर्य की रक्तिम कान्ति युक्त। जिस प्रकार से सूर्य की प्रभा, प्रात:, मध्यान्ह और सायं की अलग-अलग होती है, इसी प्रकार स्त्री के जीवन में भी बाल्य, यौवन और वृद्धावस्था आती है। ऐसे ही भगवती की कान्ति का वर्ण है।

९६५. बाला

बाला अवस्था की कुमारी, जो क्रीड़ा या खेल में मग्न है। वेद में "त्वं कुमार उता कुमारी"-श्रुति। मांत्रिक महत्त्व से बाला त्र्यक्षरी मंत्र है। उक्त तीन नाम, तीन गुणों ओर तीन अवस्थाओं के बताए हैं। बाल्य अवस्था में कन्या खेलती, कूदती नजर आती है और रंग से लाल।

९६६. लीलाविनोदिनी

जैसा कि ऊपर विश्लेषण किया देवी क्रीड़ा में आसक्त हैं, वह

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

स्वात्मानन्द में मगन है। सृष्टि, स्थिति और संहार ही उसकी लीला है। देवी पुराण के अनुसार उसे लक्ष्मी भी कहते हैं। उपर्युक्त तीन नाम बाला से संबंधित हैं।

९६७. सुमंगली

मंगलमयी या कल्याण-स्वरूपा। अशुभ को हटाकर शुभ करना ही मंगलमयी नाम की सार्थकता है। वेद में सुमंगलीरियंबधू कहा है। देवी भा० में "सर्वमंगल मांगल्ये" कहा है। सब मंगलों का कोष त्र्यम्बके गौरी नारायिणी ही है। तीनों स्वरूप एक ही तत्व हैं तथा मंगलकारी हैं। लौकिक जीवन में भी नारी मंगलमय वेष धारण कर नवबधू बन मंगल करती है। ऋषि ब्रह्म को मंगल कहते हैं तथा दुष्कर्म से सुकर्म की ओर ले जाने वाली शक्ति ही सुमंगली है।

९६८. सुखकरी

सुख की कर्ता। सुख देने वाली दुख दूर करने वाली। यह सुमंगली का ही गुण है कि वह अपने यौवनावस्था में सबका मंगल करते हुए सुख देती है।

९६९. सुवेषाढ्या

उक्त तीन नाम एक ही यौवन अवस्था को दर्शाते हैं, उसका सुन्दर वेष है। स्वयं सुन्दर-सुन्दर आभूषण वस्त्रादिक षोडश शृंगार से सुसज्जित। वह आकर्षित करते हुए वेष में है।

९७०. सुवासिनी

सदैवी सौभाग्यवती। यह तीसरी अवस्था होती है, उसमें स्त्री को मात्र सौभाग्यवती बने रहने की इच्छा होती है। उन्हें सुवासिनी कहते हैं। भगवती अविनाशी की पत्नी है- सदा सौभाग्यवती है।

९७१. सुवासिन्यर्चनप्रीता

भगवती की तीनों अवस्थाओं में पूजा होती है तथा इसी प्रकार नारी की भी तीनों अवस्था में पूजा होती है- कन्या पूजा, जब नव बधू की भी लक्ष्मी रूप में तथा प्रौढ़ावस्था में सुहागिनी स्त्री को पूजा जाता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

९७२. आशोभना

अतिशय सुन्दरी। सौन्दर्य की निधि। जहां से सुन्दरता का वितरण होता है। वही शोभना है और अशोभना भी वही है। स्वयं भी वह सुंदर है तथा संसार की सौभाग्यवती स्त्रियों का सौंदर्य भी उसी से है।

९७३. शुद्धमानसा

पवित्र मन वाली- जो इनका स्मरण करता है, वह पवित्र हो जाता है। मन शुद्ध या अशुद्ध की पहचान ये है कि जिसके मन में संसारी संकल्प-विकल्प हो वह अपवित्र तथा जिसका अन्तःकरण निर्मल है वह शुद्ध। शुद्ध मन मदेव आनंदमय रहता है उसे चिन्ताएं व्यापती नहीं

९७४. बिन्दुतर्पणसन्तुष्टा

श्रीचक्र में जो बिन्दु है उसको तर्पण द्वारा सन्तुष्ट करना। जिस प्रकार देवता, ऋषि, पितृ तर्पण से सन्तुष्ट होते हैं उसी प्रकार भगवती जगदम्बा को भी तर्पण द्वारा तृप्त करना। श्रीचक्र के सर्वानन्दमय चक्र में विन्दु है। लौकिक जीवन में स्त्री ललाट पर बिन्दी लगाकर अपनी शोभा का सर्वोत्कृष्ट प्रतीक लगाती है। भगवती के भक्त भी ऐसा ही करते है। यह रहस्यमय नाम है- भगवती का दर्शन यहीं होता है। इस बिन्दु को ब्राह्मण दूध से, क्षत्रिय घी से, वैश्य मधु से तथा शूद्र मद्य से नहलाकर पूजते हैं।

९७५. पूर्वजा

सबकी पूर्वज। जो आद्या है। "अजाहमनजाहम्'' 'वेद अहमस्मि प्रथमा ऋतस्य'' श्रुति। जो उसे ऋग्वेद से भी पहले का बताते हैं।

९७६. त्रिपुराम्बिका

त्रिपुरा तीनों लोकों की माता। तीन पुर शरीर के हैं, ये उसी के तीनों पुरों से उत्पन्न हुए है। सत्, असत् व सदसत् तीन अवस्थाएं भी तीन पुर हैं। तीन कूट- वाग्भव, मध्य और शक्तिकूट भी तीन पुर हैं। योगिनी-हृदय नामक आठवें चक्र की देवी को त्रिपुरा कहते हैं। त्रिपुरा, अम्बिका अर्थात तीन अवस्थाओं की माता त्रिपुराम्बिका। स्थूल, सूक्ष्म और लिंग शरीर।

९७७. दशमुद्रासमाराध्या

दस मुद्राओं से जिसकी आराधना हो। सर्व संक्षोभिणी, सर्वविद्राविणी, सर्वाकर्षिणी, सर्वोन्मादिनी, सर्वमहांकुशा, सर्वखेचरी, सर्वबीजा,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सर्वत्रिखण्डा, सर्वयोने, सर्ववशंकरि ये दस मुद्राओं का नाम है। विद्वान चौदह मुद्रा बताते हैं। इसके अतिरिक्त चार, अंकुश, पाश, धनुष व बाण इनको भी शामिल करते हैं। इनके अतिरिक्त भी मुद्राएं है।-भगवती की पूजा इन मुद्राओं को प्रदर्शित कर मानसिक रूप से की जाती है। मुद्राओं का श्रीविद्या में विशेष महत्त्व है। गायत्री माता के लिये २४ मुद्रा हैं।

९७८. त्रिपुराश्रीवशंकरी

श्री जिसके वश में है वह त्रिपुरा। श्री लक्ष्मी को कहते हैं। तथा लक्ष्मी "सुधासिन्धोर्मध्ये सुरविटप वाटी परिवृते, मणिद्वीपे नीपोपवनवति चिन्तामणि गृहे। शिवाकारे मंचे परमशिव पर्यंकनिलयां, भजन्ति त्वां धन्या कतिचन चिदानंद-लहरीम्।'' भगवती श्रीचक्र के पांचवें-चक्र सर्वार्थ साधक चक्र की स्वामिनी है। लक्ष्मी-वाणी निषेविता हैं। श्रीमाता जो त्रिपुरा को वश में करती है अथवा अपने अनुग्रह से उन्हें प्रसन्न करती हैं।

९७९. ज्ञानमुद्रा

तर्जनी को अंगूठे से मिलाने पर ज्ञानमुद्रा बनती है। यह ध्यानावस्था में या ज्ञान की इच्छा से यह मुद्रा प्रदर्शित की जाती है, जिससे भगवती प्रसन्न होती हैं तथा साधक को ज्ञान देती है। ज्ञान से मुद यानी आनंद तथा रा यानी वह देती है अर्थात ज्ञान से ही वह आनंद देती है।

९८०. ज्ञानगम्या

जोकि ज्ञान से ही गम्या है। यानी ज्ञान से ही जानी जा सकती है। जब तक जीव को ब्रह्म का ज्ञान ही न होगा तब तक उसमें भक्ति नहीं आ सकती। पूर्व जन्म में जिसने जान कर उपासना की है, उनको सत्संग से भक्ति प्राप्त होती है। माता की कृपा से ज्ञान, ज्ञान से भक्ति तथा भक्ति से ज्ञाता को ज्ञेय प्राप्त होता है।

९८१. ज्ञानज्ञेयस्वरूपिणी

भगवती स्वयं ही ज्ञान रूपा है। ज्ञान ही उसका स्वरूप है, अतः ज्ञाता जब ज्ञान-साधना करता है, तो ज्ञेय उससे एकाकार हो जाता है, जो कुछ जानने योग्य है, वह स्वयं उसके पास आ जाता है। माता ज्ञान का प्रकाश करने वाली है। उक्त तीनों एक रूप हो जाते हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

९८२. योनिमुद्रा

योनिमुद्रा स्वरूपिणी है। सभी जीव योनि से पैदा होते हैं। इसलिये उसे ब्रह्म योनि कहते हैं। इससे अनेक ब्रह्माण्ड पैदा हुए हैं, ऐसी भगवती महायोनि कही गई है, जैसा कि वेदों में भी कहा है। "गायत्री छन्दसा माता ब्रह्मयोनि नमोस्तुते।'' तथा गीता में- "मयोनिर्महद् ब्रह्म तस्मिन् गर्भं दधाम्यहम्'' कहा है। दस मुद्राओं में योनि मुद्रा नवीं होती है, तथा भगवती को इस मुद्रा के प्रदर्शन से प्रसन्न किया जाता है। यह नमस्कार मुद्रा है। मानव का हाथ भगवान का प्रतीक होता है, दाहिना शिव और बांया शक्ति का, दोनों के द्वारा इस विशेष मुद्रा को बनाने से गहरा अर्थ है कि शिव-शक्ति ही वह महायोनि है, जिससे ब्रह्माण्डमण्डल बना है।

९८३. त्रिखण्डेशी

त्रिखण्डों की स्वामिनी अथवा तीन खण्ड के मन्त्रों की अधिष्ठात्री। त्रिखण्ड मातृका का मंत्र, सोम, सूर्यानलात्मकम्। चन्द्रमा सूर्य अग्नि तीन खण्डों की स्वामिनी या ईश्वरी। त्रिखण्डा दस मुद्राओं में अन्तिम दसवीं मुद्रा है। इसका अर्थ यह भी है कि जो पंचदशी मंत्र का त्रिखण्ड हैं यानी तीन खण्डों के बने मंत्र।

९८४. त्रिगुणा

तीनों गुणों की वाली। सत्व, रज व तम तीन गुणों को पैदा करके स्वयं निर्गुण बनी है। वायुपुराण में है कि उसे अनेक कार्य हैं जिनमें प्रमुख तीन कि वह सृष्टि की रचयिता है, पालन करने वाली तथा संहार भी वही करती है अपनी शक्ति से, अतः उसे त्रिगुणों वाली कहा गया है। उसके तीन पद हैं, तीन रास्ते हैं तथा तीन गुण हैं।

९८५. अम्बा

वहीं माँ है, जननी है। उक्त तीनों गुणों की कारण रूपा।

९८६. त्रिकोणगा

त्रिकोण में वास करने वाली। त्रिशती में-त्रिकोण-रूपिणी कहा है। शक्ति बिन्दु रूप पर शिव। त्रिकोण में शक्ति और बिन्दु में शिव निवास करते हैं। अथवा मूलाधार में त्रिकोण में कुण्डलिनी-शक्ति निवास करती है। वह षट्चक्र भेदन करके ब्रह्मरन्ध्र में जाने वाली है। त्रिकोण योनि चक्र को

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

भी कहते हैं। श्रीचक्र में नौ त्रिकोण हैं, ४ ऊर्ध्व व ५ अधोमुखी। रहस्य नाम है।

९८७. अनघा

पापों से मुक्त करने वाली अघ यानी पाप। जैसे अग्नि के समीप ठण्डक जा नहीं सकती, उसी प्रकार भगवती के समीप पाप यानी अघ जा नहीं सकते अपितु जो उसकी उपासनारत है, वह भी पापों से मुक्त होता है। जैसे सूर्य के प्रकाश से अन्धकार नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार साधक का पाप रूपी अंधकर मिट जाता है।

९८८. अद्भुतचारित्रा

अद्भुत आश्चर्य जनक है चरित्र जिसका। सप्तशती में चकित करने वाले चरित्र वाली। या जो दुष्फल मिलने होते हैं, उन्हें नष्ट कर देने वाली।

९८९. वांछितार्थप्रदायिनी

उसका साधक जो मन में इच्छा करता है, उसकी इच्छा पूरी करने वाली। वह कामधेनु है या कल्पवृक्ष, कल्पलता इच्छित फल देते हैं। वह भी 'यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्'' उससे मुंह खोल कर मांगने की आवश्यकता ही नहीं, वह मन की बात समझने वाली हैं।

९९०. अभ्यासातिशयज्ञाता

अभ्यास से जिसका ज्ञान होता है अथवा अतिशय अभ्यास से जानने योग्य। गीता में श्रीकृष्ण का वचन अर्जुन से अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते। अथवा अनेक जन्म संसिद्धिस्ततो याति परांगतिम्। यहां यह जान लेना चाहिए कि भगवती तो सद्य प्रसादिनी हैं। जल्दी प्रसन्न होने वाली हैं। वह अतिशय दयालु है और अनेक जन्मों तक दीर्घ काल तक तपस्या की आवश्यकता नहीं। उसके बार-बार ध्यान करने से, समाधिस्थ होने से ज्ञान प्राप्त होता है।

९९१. षडध्वातीतरूपिणी

छह चक्रों से परे या षडध्वान शिव, वैष्णव, गणपति, सौर, दुर्गा, चन्द्र इन सबसे परे। वह साध्वी है- सौन्दर्य, शान्ति, लावण्य, स्वभाव, उदार, वपुः-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

उक्त छह गुणों से साध्वी होती है। श्रीचक्र पर ध्यान लगाने के भी छह मार्ग हैं। तीन विमर्श के तीन प्रकाश के। पदाध्वा, भुवन, वर्ण, तत्व, कला, मंत्र। इन पदों पर अभ्यास से ही वह अपना कृपा प्रसाद देती है।

९९२. अव्याजकरुणामूर्ति

स्वाभाविक ही जो करुणा या दया की मूर्ति है। ज्ञानी तो है ही अज्ञानी उससे अधिक उसकी दया का पात्र होता है।

९९३. अज्ञानध्वान्तदीपिका

अज्ञान रूपी अन्धकार को नष्ट करने वाली। जैसे दीपक अंधकार को नष्ट करता है। "अविद्यानामन्तस्तिमिर मिहरोद्दीपन करी।'' भगवती की दया ही अज्ञानी के लिये ज्ञान का दीपक है।

९९४. आबालगोपविदिता

बालक से लेकर गोप भी आपको जानते हैं। गोप जानते हैं यह ऐसे सिद्ध होता है कि गोप और गोपी ब्रजवासियों के बीच श्री ललिता देवी ने कृष्ण रूप धारण किया था। जैसा कि पद्मपुराण में कहा है- "अहं तु ललिता देवी पुंरूपा कृष्ण-विग्रहा।'' अर्थात् मैं ही ललितादेवी पुरुष रूप में कृष्ण हूं। सदाशिव, विष्णु से बालक तक सब उसकी शक्ति से परिचित हैं तथा उसे अपने "मैं हूं'' में शक्तिमान समझते हैं क्योंकि वह आत्मस्वरूपिणी शक्ति है। जब आत्मा नहीं होती तो कोई यह नहीं कहता कि "मैं, या मेरा'' अर्थात् आत्म स्वरूपिणी ही "मैं'' के रूप में शक्ति है और समस्त ब्रह्माण्ड में इस शक्ति से अलग कुछ है ही नहीं।

९९५. सर्वानुल्लंघ्यशासना

भगवती के शासन का उल्लंघन ब्रह्मा, विष्णु व शंकर भी नहीं कर सकते। उसका नेतृत्व सबको मानना पड़ता है। कुछ स्वतः कुछ मजबूरी में। उसके शासन से ही ब्रह्मा सृष्टि उत्पन्न करते हैं, विष्णु पालन तथा शिव प्रलय करते हैं। क्योंकि "शक्ति'' स्वयं आत्मा के रूप में प्रत्येक प्राणी में विद्यमान है, अतः प्रत्येक प्राणी वही करना चाहता है और करता है जो उसकी आत्मा कहती है। जो उसके विपरीत करता है, उसे उसका दण्ड भुगतना पड़ता है, तथा इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति को चाहे, अनचाहे उसका शासन मानना ही पड़ता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

९९६. श्रीचक्रराजनिलया

सब चक्रों का राजा श्री चक्र है। श्रीचक्र में ही आपका निवास है। श्रीचक्र का बड़ा अर्थ है, इसमें समस्त ब्रह्माण्ड से लेकर लघुतम जीव का समावेश है, वह सबमें हैं। श्री चक्र का अर्थ शिव-शक्ति का शरीर भी है। तथा मानव देह, जिसमें आत्मा है. इसका ही रूप है।

९९७. श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी

त्रिपुर शिव उनकी सुन्दरी पत्नी शक्ति है। शिव का नाम ही त्रिपुर इसलिये है कि ब्रह्मा, विष्णु शिव तीनों एक ही रूप में उनमें वास करते हैं। सदाशिव का मुख, पंचमुखी ब्रह्मा है, मध्य में विष्णु तथा नीचे के हिस्से में रुद्र हैं, इस प्रकार तीनों ही उस एक सदाशिव के शरीर के तीन हिस्से हैं, अत: वह त्रिपुर हैं तथा उनकी शक्ति त्रिपुर सुन्दरी हैं।

९९८. श्रीशिवा

शिव की शक्ति श्री। श्रीमाता ही संसार की श्री है, यानी शक्ति है। मनुष्य के शरीर की आत्मा है उसकी शक्ति है। जब तक मानव जीवित रहता है, हम उसे श्री या श्रीमती का संबोधन देते हैं तथा उसके बाद जब मृत होता है, तब उसके नाम के आगे श्री या श्रीमती नहीं लगाया जाता।

९९९. शिव-शक्त्यैक्य-रूपिणी

शिव और शक्ति तत्व अलग नहीं हैं, बल्कि वे एक रूप ही हैं। श्रीचक्र भी शिव-शक्त्यात्मक है तथा दोनों को ही इसमें पूजा जाता है। पंचदशी मंत्र भी शिव-शक्त्यात्मक है तथा दोनों के स्वर-व्यंजनों के योग से ही मंत्र बना है। इसी प्रकार हंस मंत्र भी शक्ति-शिव दोनों को दर्शाता है। शिव की पांच शक्ति हैं, धूमावती, भास्वती, स्पन्द, वैभवी, आल्हादशक्ति। इसी प्रकार मनुष्य का शरीर भी जिस प्रकार माता-पिता तत्व के योग से बना है, यह भी शिव-शक्त्यात्मक है। यह संसार ही "प्रकृति-पुरुषात्मकं जगत" है। शिव व शक्ति उसी प्रकार एकीकृत हैं, जैसे तिलों में तेल, लड्डू में मीठा, किरण में प्रकाश आदि।

१०००. ललिताम्बिका

ललिता माता अम्बिका है। यही ललिताम्बा पुरुष रूप में शिव है तथा ये ही माता रूप स्त्री, महिला, पत्नी, गृहेश्वरी, गृहलक्ष्मी परम तत्व है। इसी

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

एक तत्व को विष्णु-शिव कहकर भी जाना जाता है। पद्म पुराण में जो खेल ही खेल में यानी लीला ही में संसार को बनातो और पालती रहती है फिर समेट लेती है, ऐसी माता को ही हम ललिताम्बा कहते हैं। ललिता शब्द के आठ अर्थ हैं। शब्दार्णव में जो लालित्यमयी है, सुन्दर है, वही ललिता है। श्रीचक्र में विन्दु रूपिणी ललिता जिन नौ त्रिकोणों के मध्य है, वे नौ देवियों हैं, जिनके मध्य ललिता देवी है। पद्मपुराण में प्रयाग की देवी को ललिता नाम से जानते हैं।

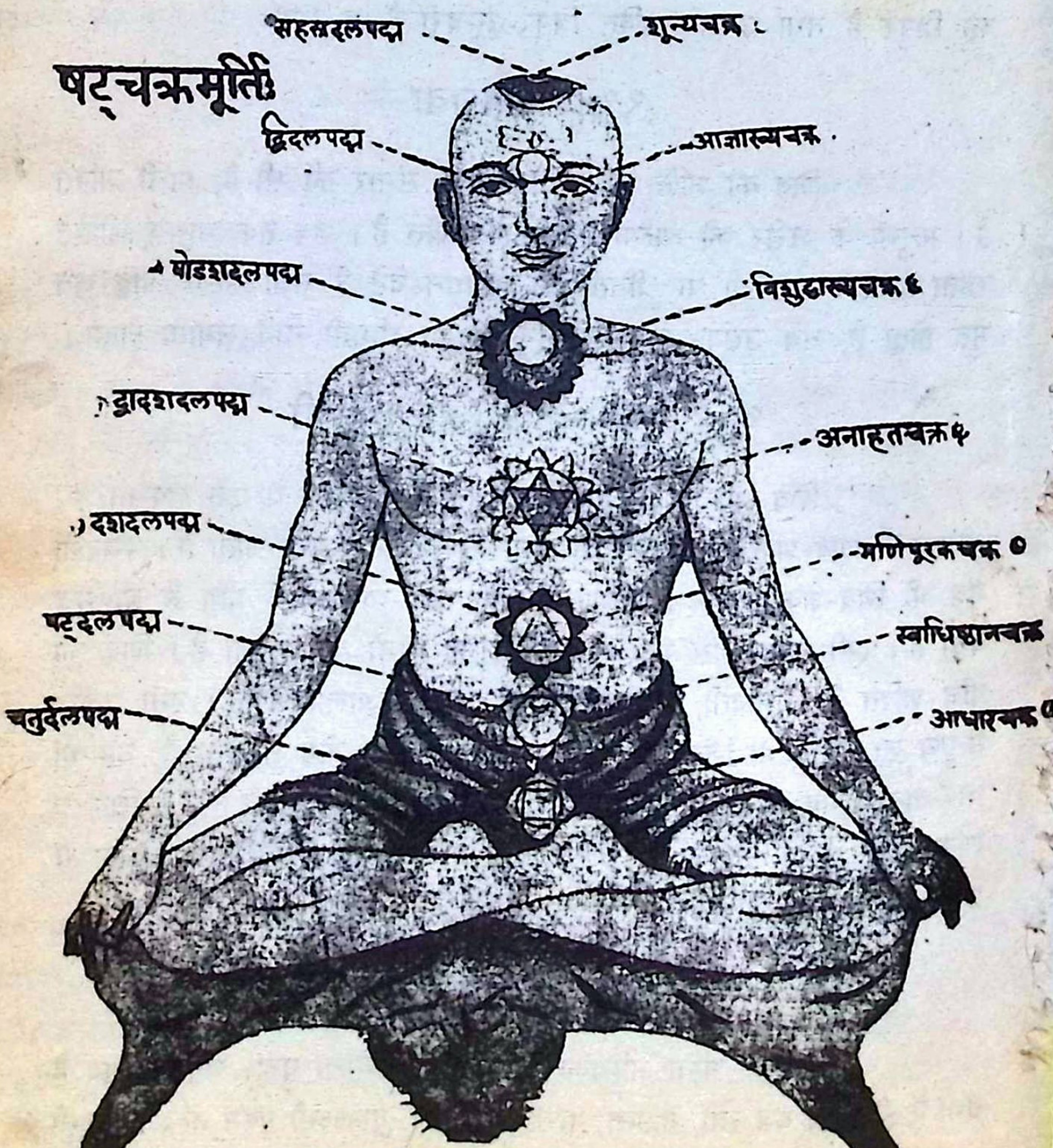

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

श्री राजराजेश्वरी भगवती त्रिपुर सुन्दरी

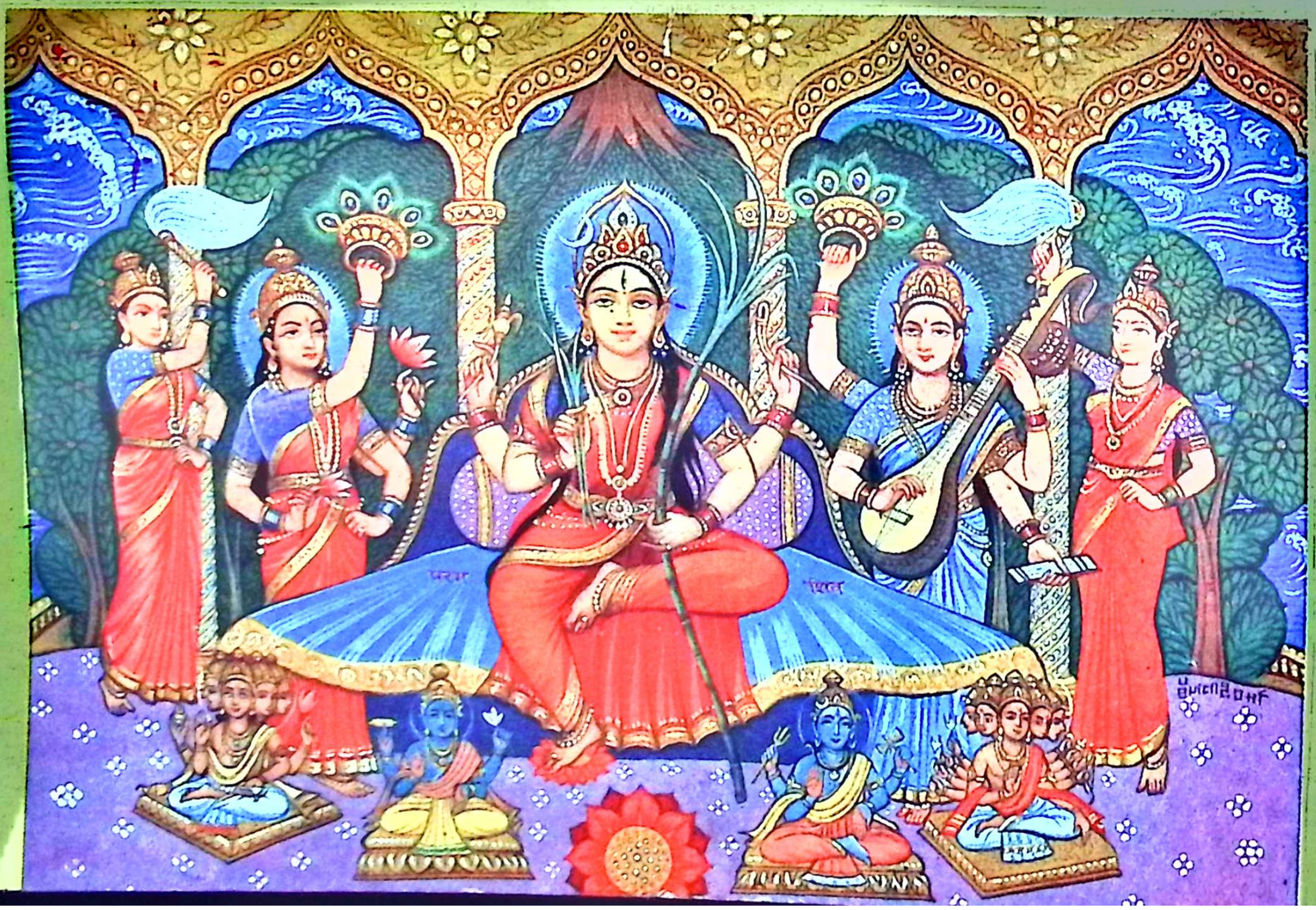

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection